अन्न-दाता

कृष्णचन्द्र, एम० ए०

राजपाल एण्ड सन्ज़
नई सड़क : दिल्ली

मूल्य तीन रुपया

विषय-सूची

भूमिका

आज के युग में ज़िन्दगी की नब्ज़ें बहुत तेज़ी से चल रही हैं और समय के तेवर बड़े भयानक ढंग से बदल रहे हैं। जीवन और मृत्यु, विकास और विनाश में इतना थोड़ा अन्तर रह गया है कि हमें नहीं मालूम हम जीवन की ओर जा रहे हैं या मृत्यु की ओर। समस्त मानव जाति एक आतंक का शिकार बनी हुई है और उसके अस्तित्व को इतना बड़ा ख़तरा है कि "प्रलय" का कल्पना-चित्र भी फीका पड़ गया है। ऐसी परिस्थितियों में एक लेखक का कर्त्तव्य न तो सौन्दर्य सृजन करना रह जाता है न अध्यात्मवाद या रहस्यवाद की घिसी-पिटी व्याख्या करना। उसको तो एक सतर्क संतरी की तरह जीवन की सीमाओं पर गश्त करनी पड़ती है, क्षितिज पर उभरने वाली हर छाया पर निगाह रखनी होती है और जन-चेतना को उभारना होता है। ऐसे समय वह लेखनी उठाने के लिये प्रेरणा की प्रतीक्षा नहीं करता और उन लोगों के विरुद्ध विद्रोह करता है जो कलाकार को "मानसिक ऐय्याशी" का साधन-मात्र समझते हैं। इस अवस्था पर पहुँच कर कलाकार एक सिपाही बन जाता है जो अपनी लेखनी या तूलिका को युद्ध का एक अस्त्र मान कर चलाता है।

कृष्णचन्द्र निस्संदेह इस अवस्था को पहुँच चुके हैं। वे आज हर उस मोर्चे पर लड़ते नज़र आते हैं जहाँ मानवता के भविष्य का फैसला करने के लिये जंग जारी है। वे इस अवस्था को स्वयं या स्वेच्छा से नहीं पहुंचे हैं। यदि कुछ आत्माएं केवल प्रेम करने और सौन्दर्य की उपासना करने के ध्येय से इस धरती पर भेजी जाती हैं तो निश्चय ही कृष्णचन्द्र की आत्मा भी उनमें से एक है। साहित्य में इतने बड़े प्रेमी और तीक्ष्ण सौन्दर्य-भावना रखने वाले कलाकार गिनती के पैदा हुए

हैं। परंतु संसार ने उनके साथ न्याय नहीं किया। उनकी भावुक सुन्दरतम आत्मा को केवल चोट ही पहुँचाई है। कृष्णचन्द्र की कहानी भी उनसे भिन्न नहीं है। पहले वे भी अपने पाठकों को प्रेम और सौन्दर्य के अनुपम उपहार भेंट करते थे, परंतु उन्होंने देखा "मनुष्य हर उस चीज़ को नष्ट करता है जो सुंदर है, कोमल है, पवित्र है।" वे जहाँ भी गए सौंदर्य की आंख डबडबाई हुई मिली। वे अपने एक पात्र "कवि" के रूप में "धरती के आँसू चुनने लगे।" वे धरती के आंसू चुनते रहे परंतु आंसुओं का अंत न हुआ। फिर सहसा बंगाल में अकाल पड़ा। मनुष्य ही नहीं उनकी सभ्यता, उनकी इन्सानियत, यहाँ तक कि उनकी आत्मा भी चावल के एक-एक दाने के लिये बिक गई। रोते-रोते आँसू भी खत्म हो गए और रह गईं गड्ढों में धंसी हुई सूखी पथराई हुई आंखें। यह थी मानव जीवन की नंगी बर्बर सच्चाई। कृष्णचन्द्र ने अनुभव किया कि केवल धरती के आँसू चुनना मानव जाति के साथ उतनी ही बड़ी ग़द्दारी है जितनी कभी नीरो ने बाँसुरी बजा कर की थी। वे ग़द्दारी नहीं करेंगे। वे आँसू नहीं चुनेंगे। वे स्वयं रोकर दूसरों को नहीं रुलायेंगे। वे उस पाशविक शक्ति के विरुद्ध लड़ेंगे जो मानव की आंखों में आंसू लाती है। और अब कृष्णचन्द्र सचमुच एक सिपाही बन गए हैं। उन्हें इस बात का गर्व है कि अब इनकी कहानी वासना को उत्तेजित करने वाली "कामवटी" नहीं है।

परन्तु कुछ लोगों को इस बात से बड़ा धक्का पहुँचा है। वे प्रार्थना करते हैं कि भगवान कृष्णचन्द्र को सुबुद्धि दें। उन्हें कृष्णचन्द्र की सूरत इतनी बिगड़ी नज़र आती है कि वे देखते हैं और फूट-फूट कर रोते हैं। उन्हें कृष्णचन्द्र की कला में इतना पतन नज़र आता है कि वे अपने को सान्त्वना नहीं दे सकते। यह ठीक है, परन्तु वह कदाचित् इस सत्य को नहीं समझ पाए हैं कि उन्होंने जिस कृष्णचन्द्र को चाहा था वह तो बंगाल के अकाल में मर गया। "अन्न-दाता" कहानी का

वह सितार बजाने वाला जिसके एक हाथ में सितार था और दूसरे में झुंझना और जो किसी विदेशी दूतावास की सीढ़ियों पर मरा पड़ा था, स्वयं कृष्णचन्द्र ही था जो काश्मीर की रूमानी (Romantic) कहानियां लिखा करता था। अब जो कृष्णचन्द्र कहानियां लिख रहा है वह निश्चय ही पुराने कृष्णचन्द्र से भिन्न हैं। अब उसका दृष्टिकोण पूर्णतया बदल गया है और यह स्वाभाविक है कि उसके पुराने पाठक उसे बदला हुआ पायें।

इस संग्रह में "अन्नदाता" को छोड़कर शेष कहानियां कृष्णचन्द्रजी की नवीनतम रचनाएं हैं। इस से पूर्व इनकी कहानियों के जितने संग्रह निकले हैं उनका एक बड़ा दोष यह है कि कहानियों का चुनाव करते समय इस बात का तनिक भी ध्यान नहीं रखा गया कि उनकी पुरानी यानि रूमानी कहानियों को नई अर्थात क्रांतिकारी कहानियों के साथ गडमड न किया जाय। इस दोष की वजह से हिन्दी के पाठक कृष्णचन्द्र की कला के क्रमिक विकास का भली-भांति अध्ययन नहीं कर सकते।

यह संग्रह इस दोष से पूर्णतया रहित ही नहीं है बल्कि यह विशेषता रखता है कि उसमें कृष्ण जी की नवीन-तम रचनाओं के साथ एक पुरानी कहानी "अन्नदाता" भी शामिल की गई है। "अन्नदाता" का कृष्णचन्द्र के कथा-साहित्य में बड़ा महत्त्व है। इस युग की एक श्रेष्ठ रचना होने के अतिरिक्त यह कहानी कृष्णचन्द्र की कला और उनकी विचारधारा में होने वाले परिवर्तन की पृष्ठ-भूमि पेश करती है। इस कहानी के अध्ययन से हमको स्पष्टरूप से पता चल जाता है कि वह कौन सा भीषण आघात और कौन सी असह्य वेदना थी जिसने कृष्णचन्द्र को प्रेम और सौंदर्य की कहानियां लिखने की ओर से उदासीन और विमुख कर दिया। इस कहानी में बंगाल के अकाल के करुण चित्र ही नहीं हैं, इसमें एक महत्त्वपूर्ण आर्थिक और राजनैतिक विश्लेषण किया गया है। कृष्णचन्द्र ने बंगाल के अकाल को तीन

कोणों से देखा है। पहले भाग में एक विदेशी राजदूत अपनी सरकार को अकाल के सम्बंध में रिपोर्ट भेजता है और प्रतिदिन लोगों को मरते देखकर और लंडन के अख़बारों में ख़बरें पढ़ने के बाद भी "विश्वास से नहीं कह सकता कि बंगाल में अकाल है या नहीं।" वह पीड़ितों की सहायता करने से पहले डिप्लोमैटिक पोज़ीशन मालूम करना आवश्यक समझता है। और बंगाल के लोग मरते रहते हैं परन्तु उसे डिप्लोमैटिक पोज़ीशन ठीक-ठीक मालूम नहीं होती। हाँ बंगाल की बेटियों को आधे २ डालर में बिकते देखकर उसे केवल यही अफ़सोस होता है कि उसके पूर्वजों ने अफ्रीका से पच्चीस-पच्चीस डालर में हब्शी ख़रीदकर कितनी भारी भूल की थी। यदि वे भारत आ जाते तो उन का कितना धन व्यय होने से बच जाता। वह अपनी सरकार को लिखता है कि आधे डालर फी आदमी के हिसाब से तो हम भारत की सारी आबादी को केवल २० करोड़ डालर में ख़रीद सकते हैं। भारतियों के प्रति उनकी सहानुभूति और मानवता की ठेकेदारी के सारे दावे यहाँ आकर ख़त्म हो जाते हैं। विदेशियों और पूंजीवादियों की शोषक और अमानुषिक मनोवृत्ति का इससे अधिक सफल चित्र और क्या हो सकता है?

अन्नदाता के दूसरे भाग में कृष्णचन्द्र ने देशी उच्चवर्ग के कृत्रिम जनप्रेम और खोखले चरित्र का प्रदर्शन किया है। एक सम्पन्न बंगाली घराने का नवयुवक पीड़ितों के दुख को देखकर उनकी सहायता करने का संकल्प करता है लेकिन इससे पहले कि वह कुछ करे उसे अखबारों में अपना नाम और अपना फोटो छपा हुआ दिखाई देने लगता है। वह बड़ी २ योजनाएं बनाता है, सारे देश का, गांव-गांव जाकर, दौरा करना चाहता है; परन्तु जब उसकी प्रेमिका आती है तो देश-सेवा का एक ही मार्ग रह जाता है—भूखों की सहायता के लिये एक डान्स का आयोजन करना। और डान्स होता है, शराबें पी जाती हैं और हॉल की बत्तियां बुझ जाती हैं और अंधेरे और नशे और औरत के होटों में सब कुछ

घुल जाता है, खो जाता है, मर जाता है।

तीसरे भाग में पहले दो भागों की तरह व्यंग की बिजलियाँ नहीं कौंदतीं बल्कि करुणा का सागर उमड़ता है। इस भाग में कृष्णचन्द्र ने एक सितार बजाने वाले ही की ट्रेजिडी पेश नहीं की बल्कि हमारी आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के दुष्परिणामों के अतिरिक्त धर्म और संस्कृति की नींवों के खोखलेपन को दिखाया है। इस भाग में कृष्णचन्द्र के विश्लेषण के सब सूत्र आकर मिलते हैं और इस सत्य को उजागर करते हैं कि मानव समाज की व्यवस्था एक नये आधार पर करनी होगी और यह आधार चावल का दाना होगा। हाँ, चावल का दाना। क्योंकि इस दाने के न मिलने से कुछ भी जीवित नहीं रहता, सब कुछ मर जाता है—आदमी का धर्म, उसकी सभ्यता, संस्कृति, मानवीय सम्बंध और सामाजिक आदर्श। इन सब चीज़ों को जीवित रखने के लिये संसार के प्रत्येक प्राणी के लिये चावल के दाने का प्रबंध करना होगा।

इस परिणाम पर पहुंचना कृष्णचन्द्र के कथा-साहित्य के लिए एक नया मोड़ सिद्ध हुआ। जहाँ उन्होंने साम्यवाद में मानव समाज के नव-निर्माण का मूल मंत्र पाया वहाँ उन्हों ने अनुभव किया कि जो लेखक राजनैतिक और आर्थिक घटनाओं की ओर से उदासीन रहेगा वह "अन्नदाता" के सितार बजाने वाले की तरह कुत्ते की मौत मरजाएगा। स्वयं जीवित रहने के लिये उसे हर उस शक्ति का मुक़ाबला करना होगा जो मनुष्य की ख़ुशी का गला घोंटती है। इस सचाई का अनुभव और लेखकों ने भी किया है परन्तु उनमें और कृष्णचन्द्र में अन्तर यह है कि वे अपने साहित्य को इस अनुभूति के सांचे में न ढाल सके और कृष्ण जी पूर्णतया सफल हुए। "अन्नदाता" के बाद उन्होंने नौ-सेना के रेटिन्गों (Ratings) के विद्रोह पर "तीन गुण्डे" लिखी। देश के बटवारे के बाद हिन्दुस्तान और पाकिस्तान में जो मारकाट हुई उसपर सब से अधिक और भावपूर्ण

कहानियां इन्हीं ने लिखीं । आज़ादी के बाद देशी सरकार की स्थापना हुई पर इन्हों ने अनुभव किया कि यह सरकार जनता की आकांक्षाओं और आशाओं को पूरा नहीं कर सकती । यह जनता का राज्य नहीं है ।

१९४९ के बाद की कहानियों में इसी विचारधारा का पता मिलता है । "महालक्ष्मी का पुल" भी इसी तरह की एक कहानी है । कृष्णचन्द्र ने इस कहानी में बम्बई के मज़दूरों और निचले वर्ग के लोगों के जीवन की झांकियाँ दी हैं जिनका जीवन शोषण और अत्याचार के हाथों मौत से बदतर हो गया है । कहानी बड़े सुन्दर और अनोखे ढंग से कही गई है । भला मकानों के छज्जों और तारों पर सूखने के लिये डाली हुई धोतियों को लटकते हुए किस ने नहीं देखा ? यह मैली फटी-पुरानी या नई और रंगीन धोतियां हमें आकर्षित भी नहीं करतीं। परन्तु कृष्णचन्द्र ने इनकी सहायता से कहानियां कही हैं । उन्होंने अपनी कल्पना-शक्ति से इन धोतियों के पहनने वालों के जीवन की विभीषिकाओं को पेश किया है । उस चीज़ ने टैकनीक के लिहाज़ से इस कहानी में एक विशेष खूबी पैदा कर दी है ।

"ब्रह्मपुत्र" भी बंगाल की कहानी है । परन्तु इस कहानी के बंगाल में और "अन्नदाता" के बंगाल में ज़मीन आसमान का फ़र्क़ नज़र आता है । इस कहानी में भी कलकत्ते की सड़कों पर लाशें बिखरी दिखाई गई हैं परन्तु इस बार ये लाशें उन भूखों की नहीं हैं जो चुपचाप मर गए । यह लाशें बंगाल की उन बेटियों की हैं जो अपने नागरिक अधिकारों की रक्षा में गोलियों का निशाना बनीं । इस बार कलकत्ते के वातावरण में उदासी और मुर्दनी नहीं बल्कि "गुस्से की गूंज" सुनाई देती है । कहानी में बंगाली लड़कियों की चरित्र-रेखाएं बड़ी कोमलता से खींची गई हैं । कहानी का वातावरण बड़ा गम्भीर है । परन्तु कृष्णचन्द्र ने स्त्रियों की स्वाभाविक प्रफुल्लता और उनके विनोदपूर्ण स्वभाव को भी पूरी तरह प्रदर्शित किया है ।

कहानी के सब पात्र जीवित हैं। कहानी में फाइरिंग का वर्णन बड़ा सनसनीपूर्ण है। परन्तु जो चीज़ इस कहानी को बहुत ऊँचा उठाती है वह बूढ़े चीनी का चरित्र है जो अपनी ही धुन में कहता है "यह सब उसी च्यांग का किया हुआ है। यह च्यांग हर जगह मौजूद है। जब तक इन सब च्यांगों का अन्त नहीं होगा..." और यहाँ कृष्णचन्द्र की आवाज़ में राजनीति के पण्डितों जैसा गाम्भीर्य पैदा हो जाता है। कहानी एक अन्तर्राष्ट्रीय रंग पकड़ लेती है।

"मैं इन्तज़ार करूंगा" और "बारूद और चेरी के फूल" बिल्कुल ही नये रंग की कहानियाँ हैं। इनमें कृष्णचन्द्र ने विदेशी पात्र पेश किये हैं। इन कहानियों को लिखकर कृष्णचन्द्र ने निस्सन्देह अन्तर्राष्ट्रीय लेखक का दर्जा हासिल कर लिया है। उन्होंने सिद्ध कर दिया है कि एक कलाकार अपनी कल्पना-शक्ति से समय ही नहीं बल्कि स्थान की पाबंदियों को भी तोड़ सकता है। "मैं इन्तज़ार करूंगा" एक चीनी लड़की की कहानी है जो अपने बाप के साथ बम्बई में काग़ज़ के फूल बेचती है, और बाद में चीन जाकर कोरिया की लड़ाई में अमरीकनों द्वारा मार दी जाती है। "बारूद और चेरी के फूल" कोरिया युद्ध से सम्बन्धित कहानी है। इन कहानियों में हमको कृष्णचन्द्र की कला का एक नया रूप दिखाई देता है। कृष्णचन्द्र कलकत्ते के साम्यवादी आंदोलन और कोरिया युद्ध में एक रिश्ता देखते हैं। इसलिये कोरिया में लड़ने वाले नर-नारी उनके उतने ही आत्मीय हैं जितने भारत के नर-नारी। परन्तु इन कहानियों की विशेषता इस बात में है कि यह सफल और कलापूर्ण हैं। इनके पात्र सजीव और सच्चे हैं। "मैं इन्तज़ार करूंगा" में तो कृष्णचन्द्र ने कहानी का ताना-बाना बड़े अद्भुत परन्तु स्वाभाविक ढंग से पूरा है। अपनी कहानी को बम्बई के बाज़ार में शुरू करके और एक चीनी लड़की और एक हिन्दुस्तान के युवक को फूल बेचने वालों के रूप में एक दूसरे के सम्पर्क में लाकर कृष्णचन्द्र ने अपनी कहानी को अस्वाभा-

विक होने से बचा लिया। चीन की साम्यवादी व्यवस्था को हिन्दुस्तान की आर्थिक व्यवस्था के मुकाबले में उत्तम सिद्ध करने के लिये भी कृष्णचन्द्र ने बड़े कलापूर्ण ढंग से काम लिया है। चीनी लड़की चीन पहुंचकर पत्रों द्वारा बताती है कि वह अपने गांव में पहुँचकर मास्टरनी बन गई है और उसे अपने पिता की खोई हुई ज़मीन मिल गई है। इधर भारतीय फूल बेचने वाला जेल में पहुँच जाता है क्योंकि महँगाई के कारण लोगों ने काग़ज़ के फूल खरीदने कम कर दिये और वह पुलिस वाले को सड़क पर खड़े होने के लिये रिश्वत न दे सका, उसने चालान कर दिया। इसी कारण से यह कहानी उद्देश्य और कला दोनों की कसौटी पर पूरी उतरती है।

"बारूद और चेरी के फूल" एक कोरियन युवती की कहानी है। कृष्णचन्द्र ने इसमें काफ़ी हद तक कोरिया का वातावरण पैदा किया है और उस ज्वालामुखी जैसी प्रचण्ड भावना को कहानी में भर दिया है जो कोरियनों के दिल में धधक रही है।

इस प्रकार यह सब कहानियाँ कृष्णचन्द्र की बहुमुखी कला और प्रतिभा की प्रतीक हैं। यह कहानियाँ बहुत हद तक उन आशंकाओं को दूर करती हैं जो अनेकों समालोचकों ने उस समय प्रकट की थीं जब कृष्णचन्द्र ने इस नये रंग को अपनाया था। यह कहानियां साबित करती हैं कि कृष्णचन्द्र रूमानी कहानियों की तरह क्रांतिकारी कहानियां भी सफलता से लिख सकते हैं।

—रेवती सरन शर्मा

अन्नदाता

"तेरी दुनिया में मैं महकूमो-मजबूर"

(इक़बाल)

पहला भाग : वह आदमी जिस की आत्मा में कांटा है।

दूसरा भाग : वह आदमी जो मर चुका है।

तीसरा भाग : वह आदमी जो जीवित है।

अन्नदाता

: १ :

वह आदमी जिसकी आत्मा में कांटा है

(एक विदेशी राजदूत के पत्र जो उसने अपने बड़े अफ़सर को
कलकत्ते से लिखे)

क्लाइव स्ट्रीट,
मून शाइन विल्ला,
८ अगस्त १६४३

श्रीमान् जी,

कलकत्ता भारत का सबसे बड़ा शहर है। हावड़ा पुल भारत का सबसे विचित्र पुल है। बंगाली जाति भारत की सबसे सुबोध जाति है। कलकत्ता विश्वविद्यालय भारत का सबसे बड़ा विश्वविद्यालय है। कलकत्ते का 'सोना गाची' भारत में वेश्याओं का सबसे बड़ा बाज़ार है। कलकत्ते का सुन्दरबन चीतों की सबसे बड़ी शिकारगाह है। कलकत्ता जूट का सबसे बड़ा केन्द्र है। कलकत्ते की सबसे बढ़िया मिठाई का नाम "रसगुल्ला" है। कहते हैं इसका आविष्कार एक वेश्या ने किया था लेकिन दुर्भाग्यवश वह इसे पेटैंट न करा सकी क्योंकि उन दिनों भारत में ऐसा कोई नियम नहीं था। इसीलिए वह वेश्या अपने जीवन के अन्तिम दिनों में भीख मांगते मरी। एक अलग पारसल

में श्रीमान मान्यवर के चखने के लिए दो सौ "रसगुल्ले" भेज रहा हूँ। यदि इन्हें कीमे के साथ खाया जाय तो बहुत मज़ा देते हैं। मैंने स्वयं इसका तजुर्बा किया है।

मैं हूँ, श्रीमान जी का तुच्छ सेवक,
एफ़. बी. पटाख़ा
कलकत्ता-स्थित राजदूत सांडूघास देश

क्लाइव स्ट्रीट
६ अगस्त

श्रीमान् जी,

श्रीमान् मान्यवर की मंझली बेटी ने मुझे सपेरे की बीन के लिए कहा था। आज शाम को बाज़ार में मुझे एक सपेरा मिल गया। पच्चीस डालर देकर मैंने एक बहुत सुन्दर बीन खरीद ली। यह बीन स्पञ्ज की तरह हल्की और कोमल है। यह एक भारतीय फल से, जिसे "लौकी" कहते हैं तय्यार की जाती है। यह बीन बिल्कुल हाथ की बनी हुई है और इसे तय्यार करते समय किसी मशीन से काम नहीं लिया गया। मैंने इस बीन पर पालिश कराया है और उसे सागवान के एक सुन्दर बक्स में बन्द करके श्रीमान् मान्यवर की मंझली बेटी इडिथ के लिए उपहार स्वरूप भेज रहा हूँ।

मैं हूँ, श्रीमान् का सेवक,
एफ़. बी. पटाख़ा

१० अगस्त।

कलकत्ते में हमारे देश की तरह राशनिंग नहीं है। खाद्य के सम्बंध

में हर व्यक्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता है। वह बाज़ार से जितना अनाज चाहे खरीद ले। कल टिल्ली देश के राजदूत ने मुझे खाने पर निमंत्रित किया। छब्बीस प्रकार के गोश्त के सालन थे। सब्ज़ियों और मीठी चीज़ों के लिए दो दर्जन कोर्स तय्यार किये गये थे। (शराब बहुत ही बढ़िया थी)। हमारे हां, जैसा कि श्रीमान जी अच्छी तरह जानते हैं प्याज़ तक की राशनिंग है। इस नाते कलकत्ता निवासी बहुत भाग्यशाली हैं। खाने पर एक भारतीय इंजीनियर भी निमंत्रित था। यह इंजीनियर हमारे देश का शिक्षित है। बातों-बातों में उसने कहा कि कलकत्ते में अकाल पड़ा हुआ है। इस पर टिल्ली का राजदूत क़हक़हा लगा कर हँसने लगा और मुझे भी उस हँसी में शामिल होना पड़ा। वास्तव में यह पढ़े-लिखे भारतीय भी बड़े मूर्ख होते हैं। पुस्तकों की शिक्षा से हट कर इन्हें अपने देश की व्यवस्था का कुछ ज्ञान नहीं। भारत की दो तिहाई आबादी रात-दिन अनाज और बच्चे उत्पन्न करने में लगी रहती है। इसलिए यहां अनाज और बच्चों की कभी कमी नहीं होने पाती बल्कि युद्ध से पूर्व तो बहुत-सा अनाज दिसावर को जाता था और बच्चे कुली बना कर दक्षिणी अफ्रीका भेज दिये जाते थे। अब एक समय से कुलियों को बाहर भेजना बन्द कर दिया गया है और भारत के प्रांतों को 'होम रूल' दे दिया गया है। मुझे तो यह भारतीय इंजीनियर कोई ऐजीटेटर प्रकार का ख़तरनाक व्यक्ति मालूम होता था। उसके चले जाने के बाद मैंने मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप, टिल्ली के राजदूत से उसका ज़िक्र किया तो मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप ने बड़े सोच-विचार के बाद यह राय दी कि भारत अपने देश पर शासन करने की बिल्कुल योग्यता नहीं रखता। चूंकि मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप के राज्य को अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में एक विशेष स्थान प्राप्त है इसलिए मैं उनकी राय को ठीक समझता हूँ।

मैं हूं, श्रीमान् का सेवक,

एफ़. बी. पटाख़ा

११ अगस्त।

आज प्रातः बोलपुर से वापस आया हूं, वहां डाक्टर टैगोर का 'शांतिनिकेतन' देखा। कहने को तो यह एक विश्वविद्यालय है लेकिन शिक्षा की हालत यह है कि विद्यार्थियों के बैठने के लिए एक बैंच भी नहीं। शिक्षक और विद्यार्थी सभी वृक्षों के नीचे आलती-पालती मारे बैठे रहते हैं और भगवान जाने कुछ पढ़ते भी हैं या यों हीं ऊंघते रहते हैं। मैं वहां से शीघ्र ही चला आया क्योंकि धूप बहुत तेज़ थी और ऊपर वृक्षों की शाखाओं में चिड़ियां शोर मचा रही थीं।

एफ़. बी. पी.

१२ अगस्त।

आज चीनी राजदूत के यहां लंच पर फिर किसी ने कहा कि कलकत्ते में घोर अकाल पड़ा हुआ है लेकिन विश्वास के साथ कोई कुछ न कह सका कि वास्तविकता क्या है? हम सब लोग बंगाल सरकार की घोषणा की प्रतीक्षा कर रहे हैं। घोषणा होते ही श्रीमान जी को आगे का हाल लिखूंगा। बैग में श्रीमान् मान्यवर की मंझली बेटी इडिथ के लिए एक जूती भी भेज रहा हूँ। यह जूती सब्ज़ रंग के सांप की जिल्द से बनाई गई है। सब्ज़ रंग के सांप बर्मा में बहुत होते हैं। आशा है कि जब बर्मा पुनः अंग्रेज़ी सरकार के आधीन हो जायेगा तो इन जूतों का व्यापार बहुत बढ़ सकेगा।

मैं हूँ श्रीमान् का इत्यादि,
एफ़. बी. पटाख़ा

१३ अगस्त।

आज हमारे दूत-भवन के बाहर दो औरतों की लाशें पाई गईं। हड्डियों का ढांचा मालूम होती थीं। शायद 'सूखिया' के रोग में ग्रस्त

थीं। इधर बंगाल में और शायद सारे भारत में 'सूखिया' रोग फैला हुआ है। इस रोग में मनुष्य घुलता चला जाता है और अन्त में सूख कर हड्डियों का ढांचा होकर मर जाता है। यह बड़ा भयानक रोग है लेकिन अभी तक इसकी कोई उचित औषधि नहीं बनी। कोनीन पर्याप्त मात्रा में मुफ्त बांटी जा रही है लेकिन कोनीन, मगनेशिया या किसी अन्य पश्चिमी औषधि से इस रोग में कोई फ़र्क नहीं पड़ता। वास्तव में एशियाई रोग पश्चिमी रोगों से बहुत भिन्न हैं। यही बात पूर्ण रूप से इस बात को भी सिद्ध करती है कि एशियाई और पश्चिमी लोग एक दूसरे से बिल्कुल भिन्न हैं।

श्रीमान् मान्यवर की धर्मपत्नी के बासठवें जन्मोत्सव पर मैं बुद्ध की एक मरमर की मूर्ति भेज रहा हूँ। इसे मैंने पांच सौ डालर में खरीदा है। यह महाराजा बिन्दुसार के युग की है और पवित्र मन्दिर की शोभा बढ़ा रही थी। श्रीमान् मान्यवर की धर्मपत्नी के मुलाकातियों के कमरे में खूब सजेगी।

दोबारा निवेदन है कि इस दूत-भवन के बाहर पड़ी हुई लाशों में एक बच्चा भी था जो अपनी मां के स्तनों से दूध चूसने की असफल चेष्टा कर रहा था। मैंने उसे अस्पताल भिजवा दिया है।

श्रीमान् मान्यवर का सेवक,
एफ़. बी. पटाख़ा

१४ अगस्त।

डाक्टर ने बच्चे को अस्पताल में दाख़िल करने से इनकार कर दिया है। बच्चा अभी तक दूत-भवन में है। समझ में नहीं आता, क्या करूँ? श्रीमान् मान्यवर के आदेश की प्रतीक्षा है। दिल्ली के राजदूत ने परामर्श दिया है कि इस बच्चे को जहां से पाया था वहीं

छोड़ दूँ लेकिन मैंने यह उचित नहीं समझा कि अपने राज्य के प्रधान से पूछे बिना ऐसी कोई बात करूँ जिसके राजनीतिक परिणाम न जाने कितने हानिकारक हों।

एफ़. बी. पटाखा

१६ अगस्त।

आज इस भवन के बाहर फिर लाशें पाई गईं। ये सब लोग उसी रोग में ग्रस्त मालूम होते थे जिसका वर्णन मैं अपने पिछले पत्रों में कर चुका हूँ। मैंने बच्चे को चुपके से उन्हीं लाशों में रख दिया और पुलिस को टेलीफ़ोन कर दिया कि वह उन्हें राजभवन की सीढ़ियों से उठाने का प्रबन्ध करे। आशा है आज शाम तक सब लाशें उठ जायेंगी।

एफ़. बी. पटाखा

१७ अगस्त।

कलकत्ते के अंग्रेज़ी समाचारपत्र 'स्टेट्समैन' ने अपने मुख-पृष्ठ पर यह समाचार प्रकाशित किया है कि कलकत्ते में घोर अकाल पड़ा हुआ है। यह समाचार-पत्र कुछ दिनों से अकालग्रस्त लोगों के चित्र भी प्रकाशित कर रहा है। अभी तक विश्वास से यह नहीं कहा जा सकता कि ये फोटो असली हैं या नकली। देखने में ये फोटो सूखिया के रोगियों के मालूम होते हैं लेकिन समस्त विदेशी राजदूत अपनी राय को 'सुरक्षित' रख रहे हैं।

एफ़. बी. पी.

२० अगस्त।

सूखिया के रोगियों को अब अस्पताल में दाख़िल करने की आज्ञा मिल गई है। कहा जाता है कि केवल कलकत्ते में प्रतिदिन दो-ढाई सौ आदमी इस रोग का शिकार हो जाते हैं और अब यह रोग एक वबा का रूप धारण कर गया है। डाक्टर लोग बहुत परेशान हैं क्योंकि कोनीन खिलाने से कोई फ़ायदा नहीं होता। रोग में किसी प्रकार की कमी नहीं होती। हाज़मे का मिक्सचर, मैगनेशिया मिक्सचर और टिंनचरायडीन अर्थात् पूरा बृटिश फार्माकोपिया बेकार है। कुछ रोगियों का रक्त लेकर पश्चिमी वैज्ञानिकों के पास अन्वेषणार्थ भेजा जा रहा है और संभव है कि किसी बहुत बड़े पश्चिमी ऐक्सपर्ट की सेवायें भी प्राप्त की जायें। एक रायल कमीशन बिठा दिया जाये तो चार-पांच वर्ष में अच्छी प्रकार छानबीन करके इस बात के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट दे। अभिप्राय यह है कि इन रोगियों को बचाने के लिए हर संभव प्रयत्न किया जा रहा है। आगे, जैसा कि बाइबल में लिखा है, भगवान मालिक है। यद्यपि बंगाली समाचारपत्रों में बड़े ज़ोर-शोर के साथ घोषणा की गई है कि सारे बंगाल में अकाल पड़ा हुआ है और हज़ारों व्यक्ति हर हफ़्ते अनाज की कमी के कारण मर जाते हैं लेकिन हमारी दासी (जो स्वयं बंगालन है) का ख्याल है कि ये समाचारपत्रों वाले झूठ बकते हैं। जब वह बाज़ार में चीज़ें खरीदने जाती है तो उसे हर चीज़ मिल जाती है, दाम अवश्य बढ़ गये हैं लेकिन यह मंहगाई तो युद्ध के कारण ही से है।

एफ. बी. पी.

२८ अगस्त।

कल एक विचित्र प्रकार की घटना हुई। मैंने न्यूमार्केट से अपनी सब से छोटी बहिन के लिए कुछ खिलौने खरीदे। उनमें एक

चीनी की गुड़िया बहुत सुन्दर थी और मारिया को बहुत पसन्द थी। मैं ने डेढ़ डालर देकर वह गुडिया खरीद ली और मारिया को उंगली से लगाये बाहर आगया। कार में बैठने को था कि एक अधेड़ आयु की बंगाली औरत ने मेरा कोट पकड़ कर मुझे बंगाली भाषा में कुछ कहा। मैं ने उससे अपना दामन छुड़ा लिया और कार में बैठ कर अपने बंगाली शोफ़र से पूछा "यह क्या चाहती है?"

ड्राइवर बंगाली औरत से बात करने लगा। उस औरत ने उत्तर देते हुए अपनी बेटी की ओर संकेत किया जिसे वह अपने कांधे से लगाए खडी थी। बड़ी बड़ी मोटी आंखों वाली पीली सी बच्ची बिल्कुल चीनी की गुड़िया मालूम होती थी और मारिया की ओर घूर घूर कर देख रही थी।

फिर बंगाली औरत ने तेज़ी से कुछ कहा। बंगाली ड्राइवर ने उसी तेज़ी से उत्तर दिया।

"क्या कहती है यह?" मैं ने पूछा।

ड्राइवर ने उस औरत की हथेली पर कुछ पैसे रखे और कार आगे बढ़ाई। कार चलाते चलाते बोला "श्रीमान! यह अपनी बच्ची बेचना चाहती थी, डेढ़ रुपये में।"

डेढ़ रुपये में, यानी आधे डालर में! मैं ने हैरान होकर पूछा, "अरे आधे डालर में तो चीनी की गुड़िया भी नहीं आती?"

"आज कल आधे डालर में, बल्कि इस से भी कम पर, एक बंगाली बच्ची मिल सकती है साहब!"

मैं आश्चर्य से अपने ड्राइवर की ओर देखता रह गया। उस समय मुझे अपने देश के इतिहास का वह युग याद आया जब हमारे पूर्वज अफ्रीका से हब्शियों को ज़बर्दस्ती जहाज़ में लाद कर अपने देश में ले आते थे और मंडियों में दासों का व्यापार करते थे। उन

दिनों एक साधारण से साधारण हब्शी भी पच्चीस-तीस डालर से कम में न बिकता था। ओह ! कितनी गलती हुई। हमारे पूर्वज यदि अफ्रीका की बजाय भारत का रुख करते तो बहुत सस्ते दामों दास प्राप्त कर सकते थे। हबशियों की अपेक्षा यदि भारतियों का व्यापार करते तो लाखों डालर की बचत हो जाती। एक भारतीय लड़की आधे डालर में ! और भारत की सारी आबादी चालीस करोड़ है। अर्थात बीस करोड़ डालर में हम पूरे भारत के लोगों को खरीद सकते हैं। ज़रा विचार तो कीजिये कि बीस करोड़ डालर होते ही कितने हैं ! इस से अधिक रकम तो हमारे देश में एक विश्वविद्यालय स्थापित करने में ख़र्च हो जाती है। यदि श्रीमान मान्यवर की मंझली बेटी को यह पसंद हो तो मैं एक दर्जन बंगाली लड़कियां हवाई जहाज़ द्वारा पार्सल कर दूं। मुझे शोफ़र ने बताया है कि आज-कल 'सोना गाची' जहां कलकत्ते की वेश्यायें रहती हैं इस प्रकार के कारोबार का अड्डा है। सैंकड़ों लड़कियां दिन-रात बेची जा रही हैं। लड़कियों के माता पिता बेचते हैं और वेश्यायें खरीदती हैं। आम भाव सवा रुपया है लेकिन यदि बच्ची मुंह-माथे की अच्छी हो तो चार-पांच बल्कि दस रुपये भी मिल जाते हैं। चावल आजकल बाजार में साढ़े सत्तर रुपये मन मिलता है इस हिसाब से यदि एक कुटुम्ब अपनी दो बच्चियां भी बेच दे तो कम से कम आठ-दस दिन और जीवन चलाया जा सकता है और प्रायः बंगाली कुटुम्बों में लड़कियों की संख्या दो से अधिक होती है।

कल मेयर आफ़ कलकत्ता ने शाम के खाने पर निमंत्रित किया है। वहां अवश्य ही बहुत दिलचस्प बातें होंगी।

एफ़. बी. पी

२९ अगस्त ।

मेयर आफ कलकत्ता का विचार है कि बंगाल में घोर अकाल है और हालत अत्यन्त खतरनाक है। उसने मुझसे अपील की कि मैं अपनी सरकार को बंगाल की सहायता के लिए तय्यार करूं। मैंने उसे अपनी सरकार की सहानुभूति का विश्वास दिलाया लेकिन यह भी स्पष्ट कर दिया कि यह अकाल भारत का आन्तरिक मामला है और हमारी सरकार किसी अन्य देश के मामलों में टांग नहीं अड़ाना चाहती। हम सच्चे जनतन्त्रवादी हैं और कोई सच्ची जनतन्त्रवादी सरकार किसी की स्वतन्त्रता छीनना नहीं चाहती। प्रत्येक भारतीय को जीने अथवा मरने का पूर्ण अधिकार है। यह एक व्यक्तिगत या अधिक से अधिक एक राष्ट्रीय विषय है और अन्तर्राष्ट्रीयता से इसका कोई सम्बन्ध नहीं। इस अवसर पर मोसियों ज़ा ज़ा तुरेप भी बहस में शामिल हो गये और कहने लगे—जब आप की एसम्बली ने बंगाल को Famine Area कहा ही नहीं तो इस हालत में आप अन्य सरकारों से कैसे सहायता की मांग कर सकते हैं? इस पर मेयर आफ़ कलकत्ता मौन हो गये और रसगुल्ले खाने लगे।

एफ़. बी. पी.

३० अगस्त ।

मिस्टर एमरी ने जो भारत के अंग्रेज़ मंत्री हैं हाऊस आफ़ कामंज़ में एक बयान देते हुए कहा है कि "भारत में आबादी के मुकाबले में अनाज की स्थिति बहुत खराब है।" भारत की आबादी में डेढ़ सौ गुना वृद्धि हुई है हालांकि अनाज की उपज बहुत कम है, इस पर मज़ा यह कि भारतनिवासी बहुत खाते हैं।

श्रीमान् जी, यह तो मैंने भी आज़माया है कि भारतनिवासी दिन में दोबार बल्कि अक्सर हालतों में केवल एक बार खाना खाते हैं लेकिन इतना खाते हैं कि हम पश्चिमी लोग दिन में पांच बार भी इतना नहीं खा सकते। मोसियो ज़्राँ-ज़्रां तुरेप का ख्याल है कि बंगाल में अधिक मृत्यु होने का सब से बड़ा कारण यहां के लोगों का पेटूपन है। ये लोग इतना खाते हैं कि इन का पेट फट जाता है और इनकी मृत्यु हो जाती है। इसीलिये कहा जाता है कि भारतीय कभी मुंहफट नहीं होता लेकिन पेटफट अवश्य होता है। लेकिन श्रीमान् जी मैंने तो जितने भारतीय देखे उन सब को मुंहफट, पेटफट, बल्कि प्रायः तिल्लीफट भी पाया। इसके अतिरिक्त यह बात और भी ध्यान देने की है कि भारत के लोगों और चूहों की उत्पत्ति संसार में सब से अधिक है और प्रायः इन दोनों में कोई फ़र्क़ निकालना बहुत कठिन हो जाता है। वे जितनी जल्दी उत्पन्न होते हैं उतनी जल्दी मर जाते हैं। यदि चूहों को प्लेग होती है तो इन को सूखिया। बल्कि इन्हें तो अकसर प्लेग और सूखिया दोनों हो जाते हैं। जो हो, जब तक चूहे अपने बिलों में रहें और संसार को परेशान न करें हमें उन की निजी बातों में दख़ल देने का कोई अधिकार नहीं।

खाद्य-विभाग के मैम्बर वर्तमान स्थिति की जांच-पड़ताल के लिये पधारे हैं। बंगाली हल्कों में यह आशा प्रकट की जा रही है कि माननीय मैम्बर को अब यह मालूम हो जायेगा कि बंगाल में सच-मुच अकाल पड़ा हुआ है और अधिक मृत्यु होने का कारण बंगालियों की अनारकिस्टाना हरकतें नहीं बल्कि खाद्य-संकट है।

एफ़ बी. पी.

२० सितम्बर

माननीय मेम्बर जांच-पड़ताल के बाद वापस देहली चले गये

हैं। सुना है वहां श्रीमान् वायसराय बहादुर से मुलाकात करेंगे और अपने प्रस्ताव उनके सामने रखेंगे।

एफ़. बी. पी.

२९ सितम्बर।

लंदन के अंग्रेज़ी समाचार-पत्रों की सूचना के अनुसार प्रतिदिन कलकत्ते की गलियों, सड़कों और फुट-पाथ पर लोग मर जाते हैं। लेकिन ये सब तो समाचार ही समाचार हैं। सरकारी रूप से इस बात का कोई प्रमाण नहीं मिलता कि बंगाल में अकाल है। सब लोग परेशान हैं। चीनी राजदूत कल मुझ से कह रहा था कि वह बंगाल के अकाल-पीड़ितों की सहायता के लिये एक फंड खोलना चाहता है लेकिन उसकी समझ में नहीं आता कि वह क्या करे और क्या न करे? कोई कहता है कि अकाल है, कोई कहता है नहीं है। मैंने उसे समझाया, मूर्ख न बनो। इस समय तक हमारे पास यही सूचना है कि खाद्य-संकट इसलिये है कि भारतनिवासी बहुत खाते हैं। अब तुम उनकी सहायता के लिये फ़ंड खोलकर उन के पेटूपन को और शह दोगे। यह मूर्खता नहीं तो और क्या है? लेकिन चीनी राजदूत मेरी व्याख्या से असन्तुष्ट मालूम होता था।

एफ़. बी. पी.

२८ सितम्बर।

देहली में खाद्य के विषय पर विचार करने के लिये एक सम्मेलन बुलाया जा रहा है। आज फिर यहाँ कई लोग 'सूखिया' से मर गये। यह सूचना भी मिली है कि भिन्न-भिन्न प्रांतीय सरकारों ने जनता में

अनाज बाँटने की जो स्कीम बनाई है उससे उन्होंने कई लाख का लाभ प्राप्त किया है। इस में बंगाल की सरकार भी शामिल है।

एफ़. बी. पी.

२० अक्तूबर।

कल ग्रांड होटल में 'बंगाल दिवस' मनाया गया। कलकत्ते के योरुपियन भद्र पुरुषों के अतिरिक्त उच्च अधिकारी, शहर के बड़े-बड़े सेठ और महाराजे भी इस दिलचस्प मनोरंजन में सम्मिलित थे। डांस का प्रबंध विशेष रूप से अच्छा था। मैंने मिसेज़ ज्यूलेट तुरेप के साथ दो बार डान्स किया (मिसेज़ तुरेप के मुँह से लहसन की बू आती थी—न जाने क्यों ?) मिसेज़ तुरेप से यह मालूम हुआ कि इस समारोह के अवसर पर बंगाल दिवस के सम्बन्ध में नौ लाख रुपया एकत्रित हुआ है। मिसेज़ बार-बार चांद की सुन्दरता और रात की काली कोमलता का वर्णन कर रही थीं और उनके मुँह से लहसन के भपारे छूट रहे थे। जब मुझे उनके साथ दोबारा डान्स करना पड़ा तो मेरा जी चाहता था कि उनके मुँह पर लाईसोल या फिनायल छिड़क कर डान्स करूं। लेकिन फिर ख्याल आया कि मिसेज़ ज्यूलेट तुरेप मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप की पत्नी हैं और मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप की सरकार को अंतर्राष्ट्रीय मामलों में ऊँचा स्थान प्राप्त है।

भारतीय महिलाओं में मिस सिनहा से परिचय हुआ। बड़ी सुन्दर है और बहुत ही अच्छा नाचती है।

एफ़. बी. पी.

२६ अक्तूबर।

मिस्टर मुंशी, बम्बई सरकार के एक भूतपूर्व मंत्री का अनुमान है कि बङ्गाल में हर हफ्ते एक लाख व्यक्ति अकाल का ग्रास बन रहे हैं लेकिन यह सरकारी सूचना नहीं है। दूत-भवन के बाहर आज फिर कुछ लाशें पाई गईं। शोफ़र ने बताया कि यह एक पूरा कुटुम्ब था जो गांव से रोटी की तलाश में कलकत्ता आया था। परसों भी इसी प्रकार मैंने एक गायक की लाश देखी थी। एक हाथ में वह अपनी सितार पकड़े हुए था और दूसरे हाथ में लकड़ी का एक झुंझुना। समझ में नहीं आता, इसका क्या मतलब था......बेचारे चूहे, किस प्रकार चुपचाप मर जाते हैं और मुँह से उफ़ तक नहीं करते। मैंने भारतियों से अधिक भद्र चूहे संसार में कहीं नहीं देखे। शांति-प्रियता के लिये यदि किसी जाति को नोबल प्राइज़ मिल सकता है तो वह भारतियों ही को मिल सकता है। अर्थात् लाखों की संख्या में भूखे मर जाते हैं लेकिन जिह्वा पर शिकायत का एक शब्द भी नहीं लाते। केवल ज्योति-हीन, आंखों से आकाश की ओर देखते हैं, जैसे कह रहे हों—अन्नदाता! अन्नदाता!! कल रात भर मुझे उस गायक की मौन शिकायत से भरी, आत्माहीन, स्थिर, पथरीली नज़रें परेशान करती रहीं।

एफ़. बी. पी.

५ नवम्बर।

नये श्रीमान् वायसराय बहादुर तशरीफ़ लाये हैं। सुना है कि उन्होंने अकाल-ग्रस्त लोगों की सेवा पर सेना को नियत किया है। और जो लोग कलकत्ते के गली-कूचों में मरने के अभ्यस्त हो चुके हैं, उनके लिये आस-पास के गांवों में केन्द्र खोल दिये गये हैं जहाँ उनके विश्राम के लिये सब कुछ जुटाया जाएगा।

एफ़. बी. पी.

१० नवम्बर।

मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप का ख्याल है कि यह भी संभव है कि बङ्गाल सचमुच अकाल पड़ा हो और सूखिया रोग की सून्‍ ग्‍थ गलत हों। विदेशी राज-दूतों में इस रिमार्क से हलचल मच गई। गोबिया देश, लोबिया देश और मिस्टरसलोवेकिया के राज-दूतों का ख्याल है कि मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप का यह वाक्य किसी आने वाले महायुद्ध की भविष्य-वाणी है। योरुप और एशिया के देशों से भागे हुए लोगों में जो आजकल भारत में रह रहे हैं, वायसराय की इस स्कीम के सम्बन्ध में कई आशंकायें उत्पन्न हो रही हैं। वे लोग सोच रहे हैं कि यदि बङ्गाल को सचमुच अकाल-ग्रस्त इलाका सिद्ध कर दिया गया तो उनके अलाऊंस का क्या बनेगा? वे लोग कहां जायेंगे? मैं श्रीमान् मान्यवर का ध्यान इस राजनीतिक उलझन की ओर दिलाना चाहता हूँ जो वायसराय बहादुर की घोषणा से उत्पन्न हो गई है। शरणार्थियों के अधिकारों की रक्षा के लिये क्या हमें डट कर न लड़ना चाहिये? पश्चिमी सभ्यता और संस्कृति की क्या मांगें हैं? स्वतंत्रता और जनतंत्र को स्थापित रखने के लिये हमें क्या क़दम उठाना चाहिये? मैं इस सम्बन्ध में श्रीमान् मान्यवर के आदेश की प्रतीक्षा में हूँ।

एफ़. बी. पी.

२४ नवम्बर।

मोसियो ज़ां ज़ां तुरेप का ख्याल कि बङ्गाल में अकाल नहीं है। मोसियो फां फां फिंग चीनी राजदूत का ख्याल है कि बङ्गाल में अकाल है। मैं लज्जित हूँ कि श्रीमान् जी ने मुझे जिस काम के लिये कलकत्ते के दूत-भवन में नियुक्त किया था वह कार्य मैं पिछले तीन मास में भी पूरा न कर सका। मेरे पास इस बात की एक भी ऐसी खबर नहीं जिससे मैं विश्वास के साथ कह सकूं कि बङ्गाल में अकाल है या नहीं

है। तीन मास की दौड़-धूप के बाद भी मुझे यह मालूम न हो सका कि ठीक-ठीक डिपलोमैटिक पोज़ीशन क्या है। मैं इस प्रश्न का उत्तर देने से विवश हूँ, लज्जित हूँ, क्षमा चाहता हूं।

और निवेदन है कि श्रीमान् मान्यवर की मंझली बेटी को मुझ से और मुझे श्रीमान् मान्यवर की मंझली बेटी से प्रेम है, इसलिये क्या यह उचित होगा कि श्रीमान् मान्यवर मुझे कलकत्ते के इस भवन से वापस बुला लें और मेरा विवाह अपनी बेटी—मेरा मतलब है श्रीमान् मान्यवर की मंझली बेटी—से कर दें और श्रीमान् मान्यवर मुझे किसी बड़े दूत-भवन में नियुक्त कर दें। इस कृपा के लिये मैं श्रीमान् मान्यवर का मरते दम तक कृतज्ञ रहूंगा।

इडिथ के लिए एक नीलम की अंगूठी भेज रहा हूं, इसे महाराजा अशोक की बेटी पहना करती थी।

मैं हूं श्रीमान् का तुच्छतर सेवक,
एफ़. बी. पटाख़ा,
कलकत्ता स्थित राज-दूत, सांडूघास देश।

: २ :

वह आदमी जो मर चुका है

सुबह नाश्ते पर जब उसने समाचारपत्र खोला तो बंगाल के अकाल-पीड़ितों के चित्र देखे जो सड़कों पर, वृक्षों के नीचे, गलियों में, खेतों में, बाज़ारों में, घरों में हज़ारों की संख्या में मर रहे थे। आमलेट खाते खाते उसने सोचा कि इन निर्धनों की सहायता किस रूप से की जा सकती है—ये निर्धन जो निराशा की मंजिल से आगे जा चुके हैं और मृत्यु की ओर लपक रहे हैं। इन्हें जीवन की ओर वापस लाना, जीवन के दुख-दर्द से पुनः परिचित करना, उन पर दया नहीं उनसे शत्रुता होगी। उसने जल्दी से समाचार-पत्र का पन्ना उल्टा और टोस्ट पर मुरब्बा लगा कर खाने लगा। टोस्ट नरम, गरम और करारा था और मुरब्बे की मिठास और उसकी हल्की सी खटास ने उस के स्वाद को और भी निखार दिया था—जैसे गाज़े का गुबार औरत की सुन्दरता को निखार देता है। एकाएक उसे स्नेह का ख्याल आया। स्नेह अभी तक नहीं आई थी हालांकि उस ने वायदा किया था कि वह सुबह नाश्ते पर उस के साथ मौजूद होगी। सो रही होगी बेचारी.... अब क्या समय होगा? उसने अपनी सोने की घड़ी से पूछा जो उसकी गोरी कलाई पर जिस पर काले बालों की एक हल्की सी कोमल रेखा थी, एक काले फ़ीते से बंधी थी। घड़ी, कमीज़ के बटन, और टाई का पिन—पुरुष यही तीन ज़ेवर पहन सकता है और

स्त्रियों को देखिये कि शरीर को ज़ेवरों से ढक लेती हैं। कान के लिए ज़ेवर, पांव के लिए ज़ेवर, कमर के लिए ज़ेवर, नाक के लिए ज़ेवर, सिर के लिए ज़ेवर, गले के लिए ज़ेवर, बाहों के लिए ज़ेवर और पुरुष बेचारे के लिए केवल तीन ज़ेवर। बल्कि दो ही समझिये क्योंकि टाई का पिन अब फैशन से बाहर होता जा रहा है। न जाने पुरुषों को अधिक ज़ेवर पहनने से क्यों रोका जाता है? यही सोचते सोचते वह दलिया खाने लगा। दलिये से इलायची की महक उठ रही थी। उस के नथने उस की सुगंधि से भर गये और फिर एकाएक उसके नथनों में पिछली रात के इतर की सुगंधि बस गई—वह इतर जो स्नेह ने अपनी साड़ी, अपने बालों में लगा रखा था। पिछली रात का मनोरम नृत्य उसकी आंखों के सामने घूमता गया। ग्रांड होटल में नृत्य सदैव अच्छा होता है। उसका और स्नेह का जोड़ा कितना अच्छा है! सारे हाल की नजरें उन पर जमी हुई थीं। वह कानों में सोने के गोल-गोल आवेज़े पहने हुए थी जो उसकी लवों को छुपा रहे थे। ओठों पर यौवन की मुस्कान और मैक्स फ़ैक्टर की लाली का चमत्कार और छातियों पर मोतियों की माला चमकती, दमकती, लचकती, नागिन की तरह सौ बल खाती हुई। रम्बा का नृत्य कोई स्नेह से सीखे। उसके शरीर का हचकोले खाना और रेशमी साड़ी का बहाव जैसे समुद्र की लहरें चाँदनी रात में तट से अठखेलियां कर रही हों। लहर आगे आती है तट को छू कर लौट जाती है। मद्धम सी सरसराहट उत्पन्न होती है और समाप्त हो जाती है। शोर मद्धम होता जाता है। शोर निकट आ जाता है। धीरे-धीरे लहर चाँदनी में नहाये हुए तट को चूम रही है। स्नेह के अध खुले ओठों में दांतों की सफ़ेदी मोतियों की माला की तरह कांपती नज़र आती थी......एकाएक हाल में बिजली बुझ गई और वह और स्नेह ओठ से ओठ मिलाये बदन से बदन लगाये, आंखे बन्द किये नृत्य के ताल पर नाचते रहे। हाय उन सुरों का मध्यम बहाव, वह रसीला मीठा बहाव, धीरे २ बहता हुवा मृत्यु

की सी पवित्रता, निद्रा और नशा जैसे शरीर न हो, जैसे आत्मा न हो, जैसे तू न हो, जैसे मैं न हूँ, केवल एक चुम्बन, केवल एक गीत हो, एक लहर हो, धीरे २ बहता हुवा......उस ने सेव के कत्ले किये और कांटे से उठा उठा कर खाने लगा। प्याली से चाय उँडेलते हुए उसने सोचा, स्नेह का शरीर कितना सुन्दर है, उसकी आत्मा कितनी सुन्दर है, उसकी बुद्धि कितनी खोखली है......उसे बुद्धिमान औरतें बिल्कुल पसंद न थीं; जब देखो समाजवाद, साम्राज्य, मार्क्सिज़्म पर बहस कर रही हैं। स्वतंत्रता, स्त्री-शिक्षा, नौकरी—यह नई औरत, औरत नहीं दार्शनिकता की पुस्तक है। भाई ऐसी औरत से मिलने या शादी करने की बजाय तो यह अच्छा है कि आदमी बैठा अरस्तू पढ़ा करे। बेचैन हो उस ने एक बार फिर घड़ी पर नज़र डाली। स्नेह अभी तक न आई थी। चर्चिल और स्टालिन और रूज़वैल्ट तहरान में संसार का नक़्शा बदल रहे थे और बंगाल में लाखों आदमी भूख से मर रहे थे। संसार को अटलांटिक चार्टर दिया जा रहा था और बंगाल में चावल का एक दाना भी न था। उसे भारत की निर्धनता पर इतनी दया आई कि उसकी आंखों में आंसू भर आये। हम निर्धन हैं, बेबस हैं, हमारे घर का वही हाल है जो उर्दू कवि 'मीर' के घर का था जिसका ज़िक्र उसने चौथी श्रेणी में पढ़ा था और जो हर समय प्रार्थना करता रहता था, जिस की दीवारें सीली सीली और गिरी हुई थीं और जिसकी छत सदैव टपक टपक कर रोती रहती थी। उस ने सोचा, भारत भी सदैव रोता रहता है। कभी रोटी नहीं मिलती, कभी कपड़ा नहीं मिलता, कभी वर्षा नहीं होती, कभी रोग फैल जाते हैं। अब बंगाल के बेटों को देखो, हड्डियों के ढांचे, आंखों में अमिट शिथिलता, ओठों पर भिखारियों की आहें! रोटी, चावल का एक दाना। एकाएक चाय का घूंट उसे अपने कण्ठ को काटता हुआ सा लगा और उस ने सोचा कि वह अवश्य अपने देशवासियों की सहायता करेगा। वह चंदा इकट्ठा करेगा। सारे भारत का दौरा करेगा और चिल्ला चिल्ला कर उसकी

आत्मा को झंझोड़ झंझोड़ कर जगायेगा। दौरा, जलसे, वालंटियर, चन्दा, अनाज और जीवन की एक लहर देश में इस सिरे से उस सिरे तक फैल जायेगी, बिजली की तरह। एकाएक उस ने अपना नाम मोटे मोटे अक्षरों में लिखा देखा। देश का हर समाचार-पत्र उस की सेवाओं की सराहना कर रहा था और इस समाचार-पत्र में भी जिसे वह अब पढ़ रहा था, उसे अपना चित्र झांकता हुआ नज़र आया, खद्दर के वस्त्र और जवाहर जैकट और हां वैसी ही सुन्दर मुस्कराहट। हां, बस यह ठीक है, उसने बैरे को आवाज़ दी और उसे एक और आमलेट तय्यार करने को कहा। आज से वह अपना जीवन बदल डालेगा। अपने जीवन का हरेक क्षण इन भूखे-नंगे मरते हुए देशवासियों की सेवा में व्यतीत करेगा। वह अपनी जान भी उन पर न्यौछावर कर देगा। एकाएक उसने स्वयं को फांसी की कोठरी में बन्द पाया। वह फांसी के तख़्ते की ओर ले जाया जा रहा था। उसके गले में फांसी का फंदा था। जल्लाद ने चेहरे पर गिलाफ़ ओढ़ा दिया और उसने उस खुरदरे मोटे गिलाफ़ के भीतर से चिल्ला कर कहा : मैं मर रहा हूं, अपने भूखे-नंगे देश के लिए। यह सोच कर उसकी आंखों में फिर आंसू भर आये और दो एक गरम गरम नमकीन बूंदें चाय की प्याली में भी गिर पड़ीं और उसने रूमाल से अपने आंसू पोंछ डाले। एकाएक एक कार पोर्च में रुकी और मोटर का पट खोलकर स्नेह मुस्कराती हुई, सीढ़ियों पर चढ़ती हुई दरवाज़ा खोलकर भीतर आती हुई, उसे 'हैलो' कहती हुई, उसके गले में बाहें डालकर उसके गालों को फूल की तरह अपने सुगंधित ओठों से चूमती हुई नज़र आई। बिजली, गरमी, प्रकाश, प्रसन्नता, सब कुछ एक मुस्कान में था और फिर विष! स्नेह की आंखों में विष था, उसके ओठों में विष था, उसकी कमर के लोच में विष था, उसके लम्बे कद में विष था, उसके केशों में विष था, उसके मध्यम हल्के श्वास के हर बहाव में विष था। वह अजंता का चित्र थी जिस के नयन नक्श चित्रकार ने विष से उभारे थे।

उसने पूछा " नाश्ता करोगी ?"

"नहीं, मैं नाश्ता करके आई हूँ" फिर स्नेह ने उसकी पलकों पर आंसू छलकते देखे, बोली "तुम आज उदास क्यों हो ?"

वह बोला "कुछ नहीं, योहीं, बंगाल के अकाल-पीड़ितों का हाल पढ़ रहा था। स्नेह ! हमें बंगाल के लिए कुछ करना चाहिए।"

"Poor Darling" स्नेह ने आह भर कर और पर्स के शीशे की सहायता से अपने ओठों पर की लालिमा को संवारते हुए कहा "हम लोग उनके लिये क्या कर सकते हैं, इसके सिवा कि उनकी आत्माओं के लिये परमात्मा से शान्ति मांगें।"

वह प्रसन्नता से उछल पड़ा "बस यह बिल्कुल ठीक है, हर मन्दिर में और हर मसजिद में मरते हुए बङ्गालियों के लिए, भूखे-नंगे बङ्गालियों के लिये प्रार्थना की जाय। कितना सुन्दर विचार है ! स्नेह, तुम समझदार होती जा रही हो।"

"कानवैंट की शिक्षा है ना आखिर।" उसने अपने सुन्दर श्वेत दांतों की नुमायश करते हुए कहा।

वह सोच कर बोला "हमें—एक—रेज़ोल्यूशन भी पास करना चाहिये।"

"वह क्या होता है ?" स्नेह ने बड़े भोलेपन से पूछा और अपनी साड़ी का पल्लू ठीक करने लगी।

"अब यह तो मुझे भी ठीक से मालूम नहीं," वह बोला "इतना अवश्य जानता हूँ कि जब कभी देश पर कोई आफ़त आती है रेज़ोल्यूशन अवश्य पास किया जाता है। सुना है रेज़ोल्यूशन पास कर देने से सब काम स्वयं ही ठीक हो जाते हैं.. मेरा ख्याल है, मैं अभी टेलीफ़ोन करके शहर के किसी नेता से रेज़ोल्यूशन के सम्बन्ध में पूछता हूं।"

"रहने भी दो डार्लिंङ्ग," स्नेह ने मुस्कराते हुए कहा। "देखो, जूड़े में फूल ठीक सजा है ?"

उसने नीलराज की कोमल डंडी को जूड़े के अन्दर थोड़ा सा दबा लिया। "बड़ा प्यारा फूल है, नीला, जैसे कृष्ण का शरीर, जैसे नाग का फन, जैसे विष का रङ्ग।"

फिर कुछ सोच कर बोला "नहीं, कुछ भी हो, रेज़ोल्यूशन अवश्य पास होना चाहिये। मैं अभी टेलीफ़ोन करता हूँ।"

स्नेह ने अपने हाथ को ज़रा सी हरकत देकर उसे रोक दिया। कोमल उँगलियों का स्पर्श एक रेशमी रौ की तरह उसके शरीर की रग-रग में फैलता चला गया—धीरे २ बहता हुवा...उस लहर ने उसे बिल्कुल बेबस कर दिया और वह तट की तरह निश्चेष्ट हो गया।

"अन्तिम रम्बा कितना अच्छा था!" स्नेह ने उसे याद दिलाते हुए कहा।

और उसके मस्तिष्क में पुनः च्यूंटियां सी रेंगने लगीं। बङ्गाली अकाल-पीड़ितों की पंक्तियां भीतर घुसती चली आ रही थीं। वह उन्हें बाहर निकालने में सफल हो बोला, "मैं सोचता हूं स्नेह, रेज़ोल्यूशन पास करने के बाद हमें क्या करना चाहिये......मेरे ख्याल में उस के बाद हमें अकाल-ग्रस्त इलाके का दौरा करना चाहिये—क्यों ?"

"बहुत मानसिक परिश्रम से काम ले रहे हो इस समय, स्नेह ने किंचित घबराये हुए स्वर में कहा। "बीमार हो जाओगे! जाने दो, वह बेचारे तो मर रहे हैं, उन्हें आराम से मरने दो, तुम क्यों मुफ्त में परेशान होते हो।"

"अकाल-ग्रस्त इलाके का दौरा करूंगा, यह ठीक है स्नेह, तुम भी चलोगी ना ?"

"कहाँ ?'

"बङ्गाल के गाँवों में।"

"ज़रूर—लेकिन वहाँ किस होटल में ठहरेंगे ?"

होटल का नाम सुनकर उसने अपने विचार का वहीं अपने मस्तिष्क में गला घोंट दिया और कब्र खोद कर वहीं दफ़ना दिया। भगवान् जाने उसका मस्तिष्क इस प्रकार की कितनी अपूर्ण आशाओं, आकांक्षाओं का मरघट बन चुका था।

वह एक बालक की तरह रूठा हु था, अपने जीवन से बेज़ार।

स्नेह ने कहा " तुम्हें बताऊं, एक शानदार नृत्यपार्टी हो जाये ग्रांड में। दो सौ रुपया प्रति टिकट और शराब के पैसे अलग और जो रकम इस प्रकार एकत्रित हो वह बंगाल रिलीफ़ फंड में......।"

"अरे—रे......" उसने कुर्सी से उछल कर स्नेह को अपने गले से लगा लिया "मेरी जान! तुम्हारी आत्मा कितनी सुन्दर है।"

"जभी तुमने कल रात अंतिम रम्बा के बाद मुझ से विवाह की प्रार्थना की थी।" ने हंस कर कहा।

"और तुमने क्या उत्तर दिया था?" उसने पूछा।

"मैंने इन्कार कर दिया था" स्नेह ने शरमाते हुए कहा। "बहुत अच्छा किया" वह बोला। "उस समय मैं शराब के नशे में था।"

कार जीवनी राम, सीवनी राम, पीवनी राम, भोडू मल तम्बाकू विक्रेता की दुकान पर रुकी। सामने ग्रांड होटल की इमारत थी। किसी मुग़ल बादशाह के मकबरे की तरह शानदार और विस्तृत।

उसने कहा "तुम्हारे लिये कौन से सिग्रेट ले लूं ?"

"रोज़! मुझे उनकी सुगन्धि पसंद है" स्नेह ने कहा।

"अभी दू दिन खेते पाई फ़ी की छू खेते दाव।"

एक बंगाली लड़का धोती पहने हुए भीख मांग रहा था। उसके साथ एक छोटी सी लड़की थी। मैली कुचैली धूल में अटी हुई, गंदी और अधमुंदी आंखें। स्नेह ने फेर लिया।

"मेम साहब एकटा पोये शावाओ" लड़का गिड़गिड़ा रहा था।

"तो मैं रोज़ ही ले आता हूँ।" यह कह कर वह जीवनी राम, सीवनी राम, पीवनी राम, भोंदूमल तम्बाकू विक्रेता की दुकान के भीतर गायब हो गया।

स्नेह कार में बैठी रही लेकिन बंगाल की भूखी मक्खियां उसके मस्तिष्क में भिनभिनाती रहीं। मेम साहब............मेम साहब ....मेम साहब। मेम साहब, ने दोएक बार उन्हें झिड़क दिया लेकिन भूख झिड़कने से कहाँ दूर होती है? वह और भी निकट आ जाती है। लड़की ने डरते-डरते अपने नन्हे-नन्हे हाथ स्नेह की साड़ी से लगा दिये और उसका पल्लू पकड़ कर विनयपूर्ण स्वर में कहने लगी, "मेम साहब.........मेम साहब.........मेम साहब।

स्नेह अब बिल्कुल तंग आगई थी। उसने जल्दी से पल्लू छुड़ा लिया। इतने में वह भी आया। स्नेह बोली "यह भिखारी क्यों इतना परेशान करते हैं। कारपोरेशन कोई प्रबंध नहीं कर सकती क्या? जब से तुम दुकान के भीतर गये हो............यह........."

उसने भिखारी लड़के को ज़ोर से चपत लगाई और छोटी लड़की को चुटिया से पकड़ कर जोर से परे धकेल दिया और क्रोध से कार घुमा कर ग्रांड होटल के पोर्च में ले आया।

बंगाली लड़की जो झटका लगने से दूर जा गिरी थी वहीं जमीन पर कराहने लगी। लड़के ने अपनी छोटी बहिन को उठाने की कोशिश करते हुए कहा "तुमार को थाऊ लागे न तो।"

लड़की सिसकने लगी......

नृत्य जोबन पर था।

स्नेह और वह एक मेज़ के किनारे बैठे हुए थे।

स्नेह ने पूछा "कितने रुपये इकट्ठे हुए?"

"साढ़े छः हज़ार।"

अभी तो नृत्य जोरों पर है, सुबह चार बजे तक......"

"नौ हाज़र रुपया हो जायेगा" वह बोला—

"आज तुम ने बहुत काम किया है" स्नेह ने उसकी उंगलियों को छू कर कहा।

"क्या पियोगी ?"

"तुम क्या पियोगे ?"

"जिन और सोडा।"

स्नेह बोली "बैरा, साहब के लिए एक लार्ज जिन लाओ और सोडा।"

"और तुम ?"

"नाचते नाचते और पीते पीते परेशान हो गई हूँ।"

"अपने देश की ख़ातिर सब कुछ करना पड़ता है डारलिंग।" उस ने स्नेह को ढारस देते हुए कहा।

"ओह, मुझे इम्पीरियलइज़्म से कितनी घृणा है !" स्नेह बोली। "बैरा, मेरे लिए एक 'वर्जन' लाओ।"

बैरे ने 'वर्जन' का पैग लाकर सामने रख दिया। 'जिन' की श्वेतता में वरमाउथ की लाली इस प्रकार नज़र आती थी जैसे स्नेह के सुगंधित चेहरे पर उस के लाल-लाल ओठ। स्नेह ने पैग बनाया और काकटेल का रँग सतरंगी हो गया। स्नेह ने पैग उठाया और बिजली के प्रकाश ने उस के पैग में घुल कर याकूत की सी चमक उत्पन्न कर दी। याकूत स्नेह की उगंलियों में थर्रा रहा था। याकूत जो रक्त की तरह सुर्ख़ था।

..नृत्य जोबन पर था और वह और स्नेह नाच रहे थे। एक गत, एक ताल, एक लै, समुद्र दूर.........बहुत दूर.. कहीं नीचे चला गया था और ज़मीन लुप्त हो गई थी और वे आकाश

में उड़ रहे थे और स्नेह का मुखड़ा उस के कंधे पर था और स्नेह के बालों में बसी हुई सुगंधि उसे बुला रही थी। बाल बनाने का ढंग कोई स्नेह से सीखे। यह आम भारतीय लड़कियां तो बीच में से या एक ओर से मांग निकाल लेती हैं और तेल चुपड़ कर बालों में कंघी कर लेती हैं। बहुत हुआ तो दो चोटियाँ कर डालीं और अपने विचार में फ़ैशन की शहज़ादी बन बैठीं। लेकिन यह स्नेह ही जानती है कि बालों का एक अलग महत्व है, उन का अपना सौन्दर्य होता है। उन का बनाव श्रृङ्गार नारी के नारीत्व का शिखर है। जैसे कोई चित्रकार सादा तख्ते पर सौन्दर्य की सुन्दर रेखायें खींचता है, उसी प्रकार स्नेह भी अपने बाल संवारती थी। कभी उस के बालों में कंवल के फूल बन जाते थे कभी कानों पर नाग के फन। वह कभी चाँद का हाला हो जाते, कभी इन बालों में हिमालय की वादियों की सी ऊँच नीच उत्पन्न हो जाती। स्नेह अपने बालों के श्रृंगार में ऐसे नुक्ते पैदा करती थी कि मालूम होता था, स्नेह की बुद्धि उसके मस्तिष्क में नहीं, उसके बालों में है।

नृत्य जोबन पर था और ये बाल उसके गालों से स्पर्श कर रहे थे। उस के अंग अंग में नृत्य का बहाव था और उस के नथनों में उस सुगंधि का इतर। उस का शरीर और स्नेह का शरीर पिघल कर एक हो गये थे और एक शो की तरह साज़ की धुन पर लहरा रह थे। एक शोला, ...एक लहर......लहरें......लहरें हल्की हल्की, गरम गरम सी लहरें, तट को चूमती हुई, लोरियां देकर थपक थपक कर सुलाती हुई, सो ज ओ, मृत्यु में जीवन है। हरकत न करो, शान्ति में जीवन है, स्वतंत्रता न मांगो, परतंत्रता ही जीवन है। चारों ओर हाल में एक मीठा सा विष बसा हुआ था। शराब में...औरत में... नृत्य में.........स्नेह के नीले साये में, उस की अनुभूतिपूर्ण मुस्कान में, उस के अध-खुले ओठों के भीतर काँपती हुई मोतियों की लड़ी में विष.. वष और निद्रा और स्नेह के धीरे से खुलते हुए, बन्द

होते हुए ओठ और संगीत का विष, सो जाओ......सो जाओ......
सो जाओ......एकाएक हाल में बिजली बुझ गई और वह स्नेह के
ओठों से ओठ मिलाए, उस के शरीर से शरीर मिलाए, मद्धम मद्धम,
धीमे धीमे, हौले हौले नृत्य के झूले में गहरी, नरम और गरम गोद में
खो गया, बह गया, सो गया, मर गया.........!"

: ३ :

वह आदमी जो अभी जीवित है

......मैं मर चुका हूँ ? मैं जीवित हूं ?......मेरी फटी फटी ज्योतिहीन आंखें आकाश में किसे ढूंढ रही हैं ? आओ पल भर के लिए इस दूत भवन की सीढ़ियों पर बैठ जाओ और मेरी कहानी सुनते जाओ—जब तक कि पुलिस, सेवा-समिति या अंजुमन खुद्दाम-उल-मुसलमीन मेरी लाश को यहाँ से उठा न ले जायें। तुम मेरी कहानी सुनलो, घृणा से मुँह न फेरो, मैं भी तुम्हारी तरह हाड़-मांस का बना हुआ मनुष्य हूँ। यह सच है कि अब मेरे शरीर पर मांस कम और हाड़ अधिक नज़र आते हैं और उनमें भी सड़ाव उत्पन्न हो रही है और नाक से पानी के बुलबुले से उठ रहे हैं लेकिन यह तो विज्ञान की एक साधारण सी क्रिया है। तुम्हारे और मेरे शरीर में केवल इतना फ़र्क है कि मेरे दिल की हरकत बन्द हो गई है, मस्तिष्क ने काम करने से इन्कार कर दिया है और पेट अभी तक भूखा है। अर्थात् अब भी इतना भूखा है कि मैं सोचता हूँ, यदि तुम चावल का एक दाना ही मेरे पेट में रख दो तो वह फिर से काम करने लगेगा, आज़मा कर देख लो। किधर चले ? ठहरो, ठहरो, ठहरो, न जाओ, मैं तो यों ही मज़ाक कर रहा था। तुम घबरा गए, कलकत्ते के मुर्दे भी भीख मांगते हैं ! भगवान के लिए न जाओ मेरी कहानी सुन लो, हां हां इस चावल के दाने को अपनी मुट्ठी में संभाल कर रखो। अब मैं तुम

से भीख नहीं मांगूंगा क्योंकि मेरा शरीर अब गल चुका है। इसे चावल के दाने की आवश्यकता नहीं रही। अब यह स्वयं एक दिन चावल का दाना बन जायेगा। नरम नरम मिट्टी में, जिसके अणु अणु में नदी का पानी रचा होगा, यह शरीर घुल जायेगा। अपने अन्दर धान की पनीरी को उगते हुए देखेगा और फिर यह एक दिन पानी के स्तर से ऊपर सिर निकाल कर अपने सब्ज़ सब्ज़ खोशों को हवा में लहराएगा, मुस्कराएगा, हंसेगा, खिलखिलायेगा। किरणों से खेलेगा। चान्दनी में नहायेगा, पक्षियों के चहचहों और ठन्डी वायु के झोंकों के मृदु चुम्बनों से इसके जीवन के अंग अंग में एक नया सौन्दर्य, एक नया सङ्गीत उत्पन्न होगा। चावल का एक दाना...... हर खोशे के धान के खोल मे चावल का एक दाना होगा, सीपी के मोती की तरह उजला, स्वच्छ और सुन्दर.. ...आज मैं तुम से एक भेद की बात कहता हूँ, संसार का सबसे बड़ा भेद, जो तुम्हें एक मुर्दा ही बता सकता है और वह यह है कि भगवान से प्रार्थना करो कि वह तुम्हें मनुष्य न बनाए, चावल का एक दाना बना दे। उस सर्व-व्यापक के सामने गिड़गिड़ाओ, विनती करो व्रत रखो, चिल्ला काटो, जिस प्रकार भी हो सके यह प्रयत्न करो कि वह तुम्हें मनुष्य न बनाए, चावल का एक दाना बना दे। यद्यपि प्राण मनुष्य में भी हैं और चावल के दाने में भी लेकिन जो प्राण चावल के दाने में है, वह मनुष्य के जीवन से कहीं उत्तम है, सुन्दर है, पवित्र है और मनुष्य के पास भी इन प्राणों के अतिरिक्त और क्या है? मनुष्य की पूंजी, उसका शरीर, उसका बाग, उसका घर नहीं, बल्कि य ही उसका जीवन है उस का अपना आप! वह इन सब चीज़ों को अपने लिए इस्तेमाल करता है, अपने शरीर को, अपनी भूमि को, अपने घर को, उसके दिल में कुछ चित्र होते हैं, विचार ज्वाला के अङ्गारे, एक मुस्कराहट! वह इन्हीं पर जीता है और जब मर जाता है तो केवल इन्हें अपने साथ ले जाता है।

चावल के दाने का जीवन तुम देख चुके, अब आओ, मैं तुम्हें अपना जीवन दिखाऊँ। घृणा से मुँह न फेरो, क्या हुआ यदि मेरा शरीर मुर्दा है मेरी आत्मा तो जी वत है, और इससे पूर्व कि वह भी मौत की नींद सो जाए, वह तुम्हें उन दिनों की कहानी सुनाना चाहती है, जब आत्मा और शरीर एक साथ चलते फिरते, नाचते, गाते, हंसते बोलते थे। आत्मा और शरीर, दो में आनन्द है, दो में हरकत है, दो में जीवन है, दो में निर्माण है। जब भूमि और पानी मिलते हैं, तो चावल का दाना उत्पन्न होता है! जब स्त्री और पुरुष मिलते हैं तो एक सुन्दर हंसता हुआ बालक उत्पन्न होता है। जब आत्मा और शरीर मिलते हैं तो जीवन उत्पन्न होता है। आओ मैं तुम्हें अपने 'दो' की कहानी सुनाऊं—वे दो जो अब अलग हो चुके हैं। आत्मा और शरीर दोनों में केवल इतना भेद है कि जब शरीर अलग हो जाता है तो उसमें सड़ान उत्पन्न होती है और जब आत्मा अलग होती है तो उस में से धुआं उठता है। यदि ध्यान से देखोगे तो तुम्हें उस धुएं में मेरे अतीत के चित्र कांपते, दमकते, लुप्त होते नज़र आयेंगे...यह क्या चमत्कार था......यह मेरी पत्नी की मुस्कराहट थी...यह मेरी पत्नी है, शरमाओ नहीं, सामने आजाओ ऐ मेरी प्यारी......इसे देखा आप ने? यह सांवली सलोनी मूरत, यह घने केश कमर तक लहराते हुए, यह शरमीली मुस्कान, ये झुकी झुकी हैरान आंखें, यह आज से तीन वर्ष पूर्व की युवती है जब मैंने इसे अतापारा के तट के गांव में समुद्र के किनारे दोपहर के सोए हुए वातावरण में देखा था...... मैं उन दिनों अजात क़स्बे में ज़मीदार की लड़की को सितार सिखाता था और यहां अतापारा में दो दिन की छुट्टी लेकर अपनी बड़ी मौसी से मिलने के लिए आया था। यह मौन गांव, समुद्र के किनारे, बांसों के झुण्ड और नारियल के वृक्षों से घिरा हुआ अपनी उदासी में डूबा था। न जाने हमारे बंगाली गांव में इतनी उदासी कहां से आ जाती है। धरती मौन है, सामने समुद्र, अथाह समुद्र फैला हुआ है, वाता-

वरण ठिठक सा गया है। बांस के छप्परों के भीतर अंधकार है। बांस की हांडियों में चावल दबे पड़े हैं। मछली की बू है, तालाब का पानी काई से सब्ज़ है। धान के खेतों में पानी ठहरा हुआ है। नारियल का वृक्ष एक नुकेली बरछी की तरह आकाश की छाती में गहरा घाव डाले खड़ा है। हर स्थान पर, हर समय पीड़ा का सा अनुभव है, ठहराव का अनुभव है उदासी का अनुभव है, शांति, स्थिरता, मृत्यु का सा अनुभव है। यह उदासी, जो तुम हमारे प्रेम, हमारी समाज, हमारी कला और संगीत में देखते हो, यह उदासी हमारे गांव से शुरू होती है और फिर सारी धरती पर फैल जाती है।

जब मैंने उसे पहले पहल देखा तो वह मुझे एक जलपरी की तरह सुन्दर नज़र आई। उस समय वह पानी मे तैर रही थी और मैं तट की रेत पर टहल रहा था और एक नई धुन सोच रहा था। एकाएक मेरे कानों में एक कोमल स्वर पड़ा "परे हट जाओ, मै किनारे पर आना चाहती हूँ।" मैंने देखा आवाज़ समुद्र में से आ रही थी। लम्बे रेशमो घने बाल और जलपरी का सा चेहरा—हंसता हुआ मुस्कराता हुआ। और दूर परे क्षितिज पर एक नाव जिसका मटियाला बादबान धूप में सोने के पतरे की तरह चमकता नज़र आ रहा था।

मैंने कहा—"क्या तुम सात समुद्र पार से आई हो?"

वह हंस कर बोली "नहीं, मैं तो इसी गांव में रहती हूँ। वह नाव मेरे बाप की है, वह मछलियां पकड़ रहा है, मैं उसके लिए खाना लाई हूं... ...ज़रा देख कर चलो। तुम्हारे पास ही नारियल के तने के साथ खाना रक्खा है और वहां मेरी साड़ी भी है।"

यह कह कर उसने पानी में एक डुबकी लगाई और फिर लहरों में फूटते हुए बुलबुलों की रेखा सी खैंचते हुए किनारे के निकट आ गई। बोली—परे हट जाओ और मुझे वह धोती दे दो।"

मैंने कहा "एक शर्त पर।"

"क्या है ?"

"मैं भी मछली भात खाऊंगा, बहुत भूख लगी है।"

वह हंसी और फिर सन्न से एक तीर की तरह पानी की छाती को चीरती हुई दूर चली गई जहाँ उसके चारों ओर सूरज की किरनों ने पानी में सुनहला जाल सा बुन रखा था और उसका नाज़ुक, कोमल, छरेरा बदन एक नई नाव की तरह उन पानियों में घूमता नज़र आया। वह फिर घूमी और सीधी किनारे की ओर हो ली लेकिन अब हौले हौले आ रही थी, धीरे धीरे, डगमग डगमग......

मैंने पूछा—"क्या हुआ है तुम्हें ?"

बोली—"आजकल भात बहुत मंहगा है, रुपये का दो सेर" मैं तुम्हें भात नहीं खिला सकती।"

"फिर, मैं क्या करूं, मुझे तो भूख......

"समुद्र का पानी पियो"—उसने चंचलता से कहा और फिर एक डुबकी लगाई।

जब वह मेरी पत्नी बन कर मेरे घर आई तो भात रुपये का दो सेर था और मेरा वेतन पचास रुपये था। विवाह से पहले स्वयं मुझे सुबह उठ कर धान पकाना पड़ता था। क्योंकि ज़मीदार की बेटी स्कूल जाती थी और मुझे प्रातःकाल ही उसे सितार सिखाने जाना पड़ता था। शाम को भी उसे दो घण्टे तक अभ्यास कराता था। दिन में भी ज़मीदार बुला लेता था। "सितार सुनाओ जी, जी बहुत उदास है।"

फिर यह नन्हीं-सी बच्ची हमारे यहां आगई......इधर आओ बेटा......हां मुस्करा दो, हँस पड़ो, इनसे कह दो मैं बिल्कुल अबोध हूँ, अनजान हूं, मेरी आयु दो वर्ष की भी नहीं और मुझे झुनझुना बजाने, गुड़िया से खेलने और मां की छाती से लग कर दूध पीने और दूध पीते-पीते उसकी छाती से अपने नन्हें-नन्हें हाथ चिमटाये उसकी गोदी में सो जाने का बहुत शौक़ है। मैं इतनी पवित्र हूं कि स्वयं बोल

भी नहीं सकती, बात भी नहीं करती, केवल मटर मटर तकती हूं, उस आकाश की ओर जिसके स्वामी ने मुझे इस धरती पर भेजा है कि मैं अपने मां-बाप के दिल में प्रसन्नता की किरन बन कर रहूँ और बांस की मैली-सैली छपरिया में खुशी का गीत बन कर घर के आंगन को अपनी हँसी के प्रकाश से भर दूं......मुस्करा दो बेटा !

......हां तो जब यह नन्हीं-सी बच्ची उत्पन्न हुई, उस समय भात रुपये का एक सेर था, लेकिन हम लोग इस पर भी भगवान् के गुण गाते थे जिसने चावल के दाने बनाए और ज़मीदार के पांव चूमते थे जिसने हमें चावल के दाने खिलाये और सच बात तो यह है कि बनाने और खाने के बीच मे जो चीज़ खड़ी है वह स्वयम् एक पूरा इतिहास है। मानव-जीवन के हज़ारों वर्ष की कहानी है। उस सभ्यता, संस्कृति, धर्म, दार्शनिकता और साहित्य की पूरी व्याख्या है। बनाना और खाना बहुत साधारण से शब्द हैं लेकिन ज़रा इस गहरी खाड़ी को भी देखिये जो इन दो शब्दों के बीच पड़ती है।

भात रुपये का एक सेर था।

फिर भात रुपये का तीन पाव हुआ।

फिर भात रुपये का आध सेर हुआ।

फिर भात रुपये का एक पाव हुआ।

और फिर भात लुप्त हो गया।

फिर वृक्षों पर से आम, जामुन, कटहल, शरीफे, केले, समाप्त हो गये। ताड़ी, साग, सब्जी समाप्त, मछली समाप्त, नारियल समाप्त। कहते हैं ज़मीदार के पास मनों अनाज था और बनिये के पास भी, लेकिन कहां था ? किस जगह था ? किसी को मालूम न था। अनाज प्राप्त करने की सब तदबीरें निष्फल गईं। गिड़गिड़ाना, विनती करना, भगवान् के आगे प्रार्थना करना, भगवान् को धमकी देना। सब कुछ समाप्त हो गया। केवल भगवान् का नाम रह गया, या ज़मीदार और बनिये का घर।

अनाज का तोड़ा देख कर ज़मीदार ने मेरा सितार सिखाना बन्द कर दिया। जब लोग भूखे मर रहे हों उस समय संगीत की किसे सूझती है? पचास रुपये देकर सितार कौन सीखता है?

भूख, निराशा और बिलखती हुई बच्ची!

मैंने अपनी पत्नी से कहा "हम कलकत्ते चलेंगे, वहां लाखों लोग बसते हैं, शायद वहां कोई काम मिल जाये।"

"चलो कलकत्ते चलो।"

"चलो कलकत्ते चलो" जैसे यह आवाज़ सारे गांव वालों ने सुन ली। गांव का सामाजिक जीवन एक बन्ध की तरह मजबूत होता है। एकाएक "चलो कलकत्ते चलो।" की आवाज़ ने उस बन्ध का एक किनारा तोड़ दिया और सारा गांव उस छिद्र के रास्ते से बह निकला......चलो कलकत्ते चलो......हर जिह्वा पर यही आवाज़ थी......चलो कलकत्ते चलो

सैंकड़ों हज़ारों व्यक्ति उस सड़क पर चल रहे थे। वह सड़क जो बंगाल के दूर फैले हुए गाँव में से घूमती हुई कलकत्ते की ओर जा रही थी। वह सड़क जो मनुष्यों के लिए शाहरग की तरह थी।.........चलो कलकत्ते चलो........... च्यूंटियां रेंग रही थीं। धूल और रक्त में अटी हुई, लिथड़ी हुई, कलकत्ते की लाश की ओर जा रही थी—हज़ारों लाखों की संख्या में। और उस क़ाफ़िले के ऊपर गिध मंडरा रहे थे और सारे वातावरण में मांस की बू थी, चीखें थीं, आहें थीं और आँसुओं की सेलन और लाशें जो सड़क पर प्लेग के चूहों की तरह बिखरी पड़ी थीं। लाशें जिन्हें गिधों ने खा लिया था, और अब उनकी हड्डियां धूप में चमकती नज़र आती थीं। लाशें जिन्हें गीदड़ों ने खा लिया था, लाशें जिन्हें कुत्ते अभी तक रहे थे लेकिन च्यूंटियां आगे बढ़ती जा रही थीं। ये च्यूंटियां बंगाल के हर भाग से बढ़ती चली आ रही थीं और उनके मस्तिष्क में कलकत्ते की लाश थी! कोई किसी को सुधि लेने वाला कैसे होता।

उन लाखों व्यक्तियों में से हर व्यक्ति अपने लिए लड़ रहा था, जी रहा था, मर रहा था। मृत्यु का एक दिन नियत है। शायद ऐसा ही होना था। उन लोगों की मृत्यु योंही लिखी थी। उन हज़ारों लाखों च्यूंटियों की मृत्यु। पेट में भूख का नरक और आंखों में निराशा का गहरा अन्धेरा लिये ये च्यूंटियां अपने बोझल पांव से सड़क पर चल रही थीं, लड़ रही थीं, कराह रही थीं, मर रही थीं! काश! यदि मनुष्य में च्यूंटियों ही का सा संगठन होता तो भी यह अवस्था न होती। च्यूंटियां और चूहे भी इस बुरी तरह से नहीं मरते।......

रास्ते में कहीं-कहीं भीख भी मिल जाती थी। हिन्दू हिन्दुओं को और मुसलमान मुसलमानों को भीख देते थे, लेकिन भीख से भला कब किसी का पेट भरा है? भीख तो जीवन प्रदान नहीं करती। भीख सदैव धोखा देती है। भीख देने वाले को भी और भीख लेने वाले को भी। हमें भी भीख मिली और एक दिन एक पूरा नारियल हाथ लग गया। बच्ची कब से दूध के लिए चिल्ला रही थी और मां की छातियां उस धरती की तरह थीं जिस पर महीनों से पानी की एक बूंद न बरसी हो। उसका फूल का सा शरीर झुलस गया था। वह बार बार बच्ची को पुचकारने के लिए उस के हाथ में झुनझुना देती। बच्ची को यह झुनझुना बहुत पसन्द था। वह उसे हर समय छाती से लगाये रखती। उस समय भी वह उस झुनझुने को ज़ोर से अपनी मुट्ठी में दबाये अपनी मां के कँधे से लगी बिलक रही थी और रोये जाती थी जैसे कोई बेबस घायल पक्षी बराबर चीखे जाता है। जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो जाती वह बराबर उसी प्रकार बैन किये जाता है।......
लेकिन अच्छा हुआ। ठीक उसी दिन हमें पूरा नारियल मिल गया। नारियल का दूध हम ने बच्ची को पिलाया और नारियल हम दोनों ने खाया। ऐसा मालूम हुआ जैसे सारा जहान जी उठा हो!

अब किसी के पास कुछ न था। सब व्यापार समाप्त हो चुका था। केवल मांस का व्यापार हो रहा था। उसके व्यापारी उत्तरी

भारत से आये थे। उन में अनाथालयों के मैनेजर थे, जिन्हें अनाथों की तलाश थी। माता-पिता अपने नन्हें नन्हें बच्चे उन के हवाले करके उन्हें अनाथ बना रहे थे। वास्तव में निर्धनता ही तो अनाथ उत्पन्न करती है। माता-पिता का जीवित रहना या मर जाना एक प्राकृतिक बात है। उन व्यापारियों में विधवा आश्रमों के कर्मचारी भी थे और खालिस व्यापारी जो हर प्रकार के नैतिक, धार्मिक और सभ्य धोखे-बाज़ी से अलग होकर खालिस व्यापार करते थे। नौजवान लड़कियाँ बकरियों की तरह टटोली जाती थीं।

माल अच्छा है !

रंग काला है !

ज़रा दुबली है !

मुँह पर चेचक है !

अरे इसकी तो बिल्कुल हड्डियां निकल आई हैं

चलो, खैर, ठीक है

दस रुपये दे दो !

पति पत्नियों को, मातायें पुत्रियों को, भाई बहनों को बेच रहे थे। थे वे लोग थे जो यदि खाते-पीते होते तो उन व्यापारियों को जान से मार देने पर तय्यार हो जाते, लेकिन अब यही लोग केवल उन्हें बेच ही नहीं रहे थे बल्कि बेचते समय खुशामद भी करते थे। दुकान-दारों की तरह अपने माल की प्रशंसा करते, गिड़गिड़ाते, झगड़ा करते, एक एक पैसे के लिए मर रहे थे। धर्म, नैतिकता, आत्मिकता, ममता, जीवन की महान् से महान् भावनाओं के छिलके उतर गये थे और नंगा, भूखा, प्यासा, खूँखार जीवन मुह फाड़े सामने खड़ा था।

मेरी पत्नी ने कहा, "हम भी अपनी बच्ची बेच दें।"

डरते डरते, लज्जित सी हो, उसने ये शब्द कहे और फिर तुरंत ही मौन हो गई। उसने कनखियों से मेरी ओर देखा जैसे वह अपने शब्दों के कोड़ों का असर देख रही हो। उसकी आंखों में एक ऐसे

अपराध का अनुभव था जैसे उसने अपने हाथों से अपनी बच्ची का गला दबा डाला हो, जैसे उसने अपने पति को नंगा कर के उसके बदन पर कोड़े लगाये हों, जैसे उसने स्वयं अपने हाथों फांसी का फंदा तय्यार किया हो और अब उसकी दुबली-पतली गरदन उस में लटक रही हो।

मुझे यह शिकायत नहीं कि वह क्यों मर गई। मरने को तो वह उसी समय मर गई थी जब उसने ये शब्द कहे थे। शायद उन शब्दों के जिह्वा तक आने से बहुत समय पहले ही वह मर चुकी थी। लेकिन अब भी समझ में नहीं आता। मर कर भी समझ में नहीं आता। सोचने पर भी समझ में नहीं आता कि उसके मुँह से ये शब्द कैसे निकले ? ऐसा कैसे हुआ ? किस भयानक शक्ति ने उसकी ममता को मार दिया था, उसकी आत्मा को कुचल दिया था ? जैसा कि मैंने अभी कहा, मुझे उसके मर जाने का कोई अफ़सोस नहीं, अफ़सोस तो यह है कि उसकी ममता क्यों मर गई ? वह ममता जिसे हम सब अमर कहते हैं......मुझे अच्छी तरह याद है मैंने उस समय अपनी बच्ची को छीन कर अपनी छाती से लिपटा लिया था......मैंने क्रोध भरी नज़रों से उसकी ओर देखा। लेकिन वह उसी प्रकार—जैसे मेरा उससे कोई सम्बन्ध न हो, मेरे दुख-क्रोध को ध्यान में लाये बिना, लंगड़ाती हुई मेरे पीछे-पीछे आ रही थी। कोल्हू के अन्धे बैल की तरह उसके परेशान बाल धूल में अटे हुये थे। शरीर पर धोती तार-तार हो चुकी थी। पाँव के घाव से रक्त रिस रहा था और वे आँखें... हाय, वह जलपरी कहां गायब हो गई थी, वह समुद्र में सुनहली मछली की तरह तैरने वाली बंगाली युवती !......वह फूल की सी सुन्दरता, जिसमें ताज का मरमर, एलोरा के मन्दिरों की महानता और अशोक के कुतबों की स्थापना घुली हुई थी; आज किधर ग़ायब हो गई थी ? किसलिए यह सौन्दर्य, यह ममता, यह आत्मा उस सड़क पर एक रौंदी हुई लाश की तरह पड़ी थी। यदि यह सच है कि स्त्री

एक विश्वास है, एक चमत्कार है, जीवन की सचाई है, उसकी मंजिल, उसका भविष्य, तो मैं यह कह सकता हूँ कि यह विश्वास, यह सचाई, यह चमत्कार, चावल के एक दाने से उगता है और उसके न होने से मर जाता है।

जलपरी ने मेरी गोद में दम तोड़ दिया। वह थकी-मांदी, धूल में अटी हुई, उसी सड़क के किनारे सो गई, मेरी गोद में, दो तीन हिचकियां, और श्वास गायब ......न जाने मेरा मस्तिष्क क्यों मुझे उस क्षण की ओर घसीट कर ले गया, जब मैंने पहली बार उसके होठों को चूमा था और उसके महकते हुये श्वास ने मुझे सुगन्ध-राज के फूलों की याद दिलाई थी। इस समय भी वही सुगंध-राज के फूलों की महक तेज़ी से मेरे नथनों में घुमती चली आई और मेरी आंखों में आंसू आ गए और मैं उसके मुर्दा ओठों की ओर तकने लगा। और मेरे आंसू उसके ओठों पर, उसके गालों पर गिरने लगे। वह मेरी गोद में मरी पड़ी थी। जलपरी जो उन्नीस वर्ष की आयु मे मर गई। धूल में अटी हुई, नंगी, भूखी, प्यासी, जलपरी चुड़ैल बन कर मर गई। मुझे मौत से कोई शिकायत नहीं, अपने भगवान से कोई शिकायत नहीं, जीवन से, सड़क पर से गुज़रते हुए अन्धे काफ़ले से, किसी से कोई शिकायत नहीं। केवल यही जी चाहता है कि वह इस प्रकार न मर जाती। मैं एक मनुष्य की तरह, नहीं, एक मित्र की तरह, अपने भगवान् से पूछना चाहता हूँ कि इस मे क्या बुराई थी यदि वह जीवित रहती? अपनी पूरी आयु व्यतीत करती। उसका एक छोटा सा घर होता, उसके बाल बच्चे होते। वह उनका पालन करती, उसे अपने पति का प्रेम प्राप्त होता, एक साधारण घराने की छोटी-छोटी प्रसन्नताय। संसार ऐसे करोड़ों व्यक्तियों से भरा पड़ा है जो जीवन से इन छोटी छोटी प्रसन्नताओं के अतिरिक्त और कुछ नहीं चाहते। न राज्य, न ख्याति, फिर भी उसे ये छोटी छोटी प्रसन्नतायें प्राप्त न हुईं। वह इस प्रकार क्यों मर गई और यदि उसे मरना ही था तो

वह समुद्र के तट और नारियल के कुण्ड ही को देख कर मरती। यह कैसी मृत्यु है कि हर ओर वीरानी है और लाशें हैं और आहें और चीत्कार हैं, सड़क की धूल और चुपचाप चलते हुए कदमों की चाप है और दूर कहीं कुत्ते रो रहे हैं.........!

मैंने उसे दफ़नाया नहीं, मैंने उसे जलाया भी नहीं। मैंने उसे वहीं सड़क के किनारे छोड़ दिया और अपनी बच्ची को छाती से चिमटाए आगे बढ़ गया।

अभी कलकत्ता दूर था और मेरी बच्ची भूखी थी। वह अब रो भी न सकती थी, कंठ से स्वर न निकलता था, वह बार बार अपना मुँह ऐसे खोलती जैसे मछली जल से बाहर निकल कर पानी की घूंट के लिए अपने ओंठ खोलती है। हाय! वह नन्हीं सी जलपरी अपने छोटे से खिलौने को अपनी छाती से चिमटाए एक बुझते हुए दीपक की तरह मेरी आंखों के सामने समाप्त हो रही थी बुझ रही थी और मैं चला जा रहा था। मेरे पास और लोग भी थे। मुर्दों का काफ़िला! हर एक का अपना संसार था, लेकिन हर व्यक्ति उसी मौत की वादी में से गुज़र रहा था और आंखों में, चेहरों पर, उसी दैवी शक्ति की छाया मंडरा रही थी जो उस वादी की निर्माता थी। मैं हाथ जोड़ कर प्रार्थना करने लगा.. .. ऐ धरती आकाश के निर्माता! इस अबोध बालिका की ओर देख......क्या तेरे राज्य में इसके लिए दूध की एक बूँद भी नहीं? अन्नदाता!.... देख यह किस प्रकार बार बार मुँह खोलती है, बेकरार होती है और तड़प कर रह जाती है। ऐ भगवान्! तू ने सुन्दर मृत्यु बनाई है लेकिन यह मृत्यु तो सुन्दर नहीं, यह मृत्यु तो मासूम नहीं! यह मृत्यु तो इस नन्हें से जीवन के योग्य नहीं......सुन ले ऐ ब्रह्मांड की अनुभूतिपूर्ण महान् शक्ति .....ऐ भगवानों के अत्याचारी प्रधान..... तू इस सुन्दर कली को अभी से क्यों कुचल कर रख देना चाहता है? इसकी आशाओं के संसारों को देख......समुद्र में बुलबुलों की उज्ज्वल रेखा, धीरे से बहती हुई

नाच, एक सङ्गीत अपने शिखर को पहुंचा हुआ। नारियल के झुण्ड में स्त्री और पुरुष का पहला चुम्बन......निर्दयी, कमीने, पतित !!!

लेकिन न प्रार्थनाएं काम आईं न गालियां और मेरी बच्ची भी मर गई। किस प्रकार तड़प कर उसने प्राण दिए! उसका छटपटाना मेरी इन पथरीली, स्थिर, निष्प्रकाश आंखों से पूछो। वह दूध की एक बूंद के लिए मर गई। वह बूंद जो न आकाश से बरसी, न धरती ने उगली। निश्चेष्ट आकाश, निश्चेष्ट धरती और यह ज़ालिम सड़क !...

मरने से कुछ समय पूर्व मेरी बच्ची ने अपना प्यारा झुनझुना मुझे दे दिया। देखो अब भी मेरी मुट्ठी में दबा पड़ा है। यह अमानत उसने मेरे हवाले की थी। नहीं, नहीं, यह झुनझुना उसने मुझे प्रदान कर दिया था। लापरवाही के साथ, एक ऐसे अबोध ढंग से उसने उसे मेरे हवाले कर दिया था कि मुझे विश्वास हो गया कि उसने मुझे प्रदान कर दिया है, मुझे क्षमा कर दिया है। मुझे अपनी कृपाओं से माला-माल कर दिया है। उसने वह झुनझुना मेरे हाथ में दे दिया और फिर मेरी गोद में मर गई। यह एक लकड़ी का झुनझुना है लेकिन यह मेरा विश्वास है कि यदि वह क्लोपैट्रा होती तो अपना प्रेम मेरे अर्पण कर देती। यदि विक्टोरिया होती तो अपना राज्य मेरे हवाले कर देती। यदि मुमताज़महल होती तो ताजमहल मेरे हवाले कर देती, लेकिन वह तो एक निर्धन नन्ही सी बच्ची थी और उसके पास केवल यही एक लकड़ी का छोटा-सा झुनझुना था जो उसने अपने निर्धन अब्बा के हवाले कर दिया। तुममें से कौन ऐसा जौहरी है जो इस लकड़ी के झुनझुने का मूल्य आंक सके? बड़े आदमियों के बलिदानों पर वाह वाह करने वालो, ले जाओ इस लकड़ी के झुनझुने को, और मानवता के उस मन्दिर में रख दो जो आज से हज़ारों साल बाद मेरी आत्मा तुम्हारे लिए बनाएगी......!!

आख़िर कलकत्ता आ गया, भूखी वीरान बस्ती, निर्दयी शहर। कहीं कोई ठिकाना नहीं कहीं रोटी का कौर तक नहीं। ज्यादा

स्टेशन, श्याम बाज़ार, बड़ा बाज़ार, हरिसन रोड, ज़करिया स्ट्रीट, बो बाज़ार, सोना गाची, न्यू मार्केट, भवानीपुर, कहीं चावल का एक दाना नहीं, कहीं वह नज़र नहीं जो मनुष्य को मनुष्य समझती है।

होटलों के बाहर भूखे मरे पड़े हैं। झूठी पत्तलों में कुत्ते और मनुष्य एक साथ खाना टटोल रहे हैं। कुत्ते और मनुष्य लड़ रहे हैं। एक मोटर फ़र्राटे से गुज़र जाती है।

नंगे बदन में पसलियां लोहे की ज़ंजीरें मालूम होती हैं। उनके भीतर आत्मा को क्यों क़ैद कर रखा है। उसे उड़ जाने दो, इस भयंकर जेलखाने का दरवाज़ा खोल दो...एक मोटर फर्राटे से गुज़र जाती है।

लेकिन शरीर आत्मा की प्रार्थना नहीं सुनता...मायें मर रही हैं, बच्चे भीख मांग रहे हैं। पत्नी मर रही है, पति रक्शा वाले साहब की खुशामद कर रहा है। यह नौजवान औरत बिल्कुल नग्न है। उसे यह पता नहीं कि वह जवान है, वह औरत है। वह केवल यह जानती है कि वह भूखी है और यह कलकत्ता है...भूख ने सुन्दरता को भी समाप्त कर दिया है।

मैं इस दूत-भवन की सीढ़ियों पर मर रहा हूँ। मूर्छित पड़ा हूँ। कुछ लोग आते हैं, मेरे सरहाने खड़े हो जाते हैं। ऐसा लगता है जैसे मुझे सिर से पांव तक देख रहे हैं। फिर मेरे कानों में एक मद्धम सी आवाज़ आती है, जैसे कोई कह रहा है :—

"हरामी हिन्दू होगा, जाने दो, आगे बढ़ो" वह आगे बढ़ जाते हैं। अंधकार बढ़ जाता है .....

फिर कुछ लोग रुकते हैं। कोई मुझ से पूछ रहा है ....."तुम कौन हो?"

मैं कठिनता से अपने भारी पपोटे उठाकर आंखें खोलकर उत्तर देता हूं, "मैं भूखा हूँ।"

वे यह कहते चले जाते हैं, "साला कोई मुसलमान मालूम होता है।"

भूख ने धर्म को भी समाप्त कर दिया है।

अब चारों ओर अंधेरा है। पूर्ण अंधकार, प्रकाश की एक किरन भी नहीं। चुप्पी, गहरी निस्तब्धता!

एकाएक कलीसाओं में, मन्दिरों और मस्जिदों में प्रसन्नता की घंटियां बजने लगती हैं। सारा वातावरण मृदु स्वरों से परिपूर्ण हो जाता है।

एक अखबार बेचने वाला चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा है "तह-रान में मानवता के तीन बड़े नेताओं की घोषणा, एक नये संसार की रचना......"

एक नये संसार की रचना !!

मेरी आँखें आश्चर्य और प्रसन्नता से खुली की खुली रह जाती हैं। अनुभव पत्थर की तरह जम जाते हैं।

मेरी आँखें उस समय से खुली की खुली हैं। मैं राजनीतिज्ञ नहीं हूं, सितार बजाने वाला हूँ। शासक नहीं हूँ, आज्ञा पालन करने वाला हूँ। लेकिन शायद एक निर्धन गायक को भी यह पूछने का अधिकार है कि उस नये संसार की रचना मे क्या उन करोड़ों भूखे, नंगे आदमियों का भी हाथ होगा जो इस संसार मे बसते हैं। मैं यह प्रश्न इसलिए पूछता हूं कि मैं भी इन तीन बड़े नेताओं के नये संसार में रहना चाहता हूं। मुझे भी युद्ध और अत्याचार से घृणा है...और यद्यपि मैं कोई राजनीतिज्ञ नहीं हूँ लेकिन एक गायक होने से इतना अवश्य जानता हूं कि उदास संगीत से उदासी ही उत्पन्न होती है। जो संगीत स्वयं उदास है वह दूसरों को भी उदास कर देता है। जो आदमी स्वयं परतंत्र है वह दूसरों को भी परतंत्र बना देता है। संसार का हर छठा व्यक्ति भारतीय है। यह असंभव है कि अन्य पाँच व्यक्ति दुख की उस जंजीर का अनुभव न करते हों जो उनकी आत्माओं को चीर कर निकल रही है, और एक भारतीय को दूसरे भारतीय से मिला देती है। जब तक मेरी सितार का एक तार भी ढीला होता है उस समय तक

सारा संगीत बेजोड़ और बेकार रहता है। मैं सोचता हूं यही हाल मानव-समाज का है। जब तक संसार में एक मनुष्य भी भूखा है, यह संसार भूखा रहेगा। जब तक संसार में एक मनुष्य भी परतंत्र है, सब परतंत्र रहेंगे। जब तक संसार में एक व्यक्ति भी निर्धन है सब निर्धन रहेंगे।

इसीलिए मैं तुम से यह प्रश्न कर रहा हूं।

तुम मुझे मुर्दा न समझो। मुर्दा तुम हो, मैं जीवित हूं और अपनी फटी फटी ज्योतिहीन आंखों से सदैव तुम से यही प्रश्न करता रहूंगा। तुम्हारी रातों की निद्रा उड़ा दूंगा, तुम्हारा उठना-बैठना, सोना जागना, चलना-फिरना सब दूभर हो जायेगा। तुम्हें मेरे प्रश्न का उत्तर देना होगा। मैं उस समय तक नहीं मर सकता जब तक तुम मेरे प्रश्न का उचित उत्तर न दोगे।

मैं यह प्रश्न इसलिए नहीं पूछ रहा हूँ कि मैं तुम्हारे नये संसार में रहना चाहता हूं। मैं यह प्रश्न इसलिए पूछ रहा हूं क्योंकि मैंने जलपरी के मृतक शरीर को बिना जलाये सड़क पर छोड़ दिया है और मेरे हाथ में लकड़ी का एक झुनझुना है......... !

: २ :

ब्रह्मपुत्र

तोमार जोले बाती तोमार घोरे शाथी ।
अमार तोरे राती अमार तोरे तारा ॥
तुमार अच्छे डांगा अमार अच्छे जोल ।
तुमार बोशे थाका अमार चोला चोल ॥
(टैगोर का एक गीत)

तुम्हारे हां दीपक जलता है और घर में साथी भी है ।
मेरे लिए रात है और तारे ।
तुम्हारे लिए ज़मीन है और मेरे लिए पानी ।
तुम्हारे लिए आराम है, मेरे लिए सदा का चलना ।

अपने जूड़े में श्वेत गुलाब का फूल टिकाये और एक गहरे वसंती रंग की साड़ी पहने, जिसका लहरिया गहरा सुर्ख़ था, लतिका सैन अपने मुन्ने की ओर मुस्कराती चली आ रही थी। मुन्ना लकड़ी के घोड़े पर सवार था और वह उसे चाबुक मार-मारकर, अपने विचार में सरपट दौड़ा रहा था। जब मुन्ने ने अपनी मां को अपनी ओर आते देखा तो उसने लकड़ी के घोड़े की बाग ज़ोर से खैंची और घोड़ा उलट गया और मुन्ना नीचे और घोड़ा उसके ऊपर जा गिरा।

मुन्ना रोने लगा। लतिका ने हँसते-हँसते उसे अपनी गोद में उठा लिया।

मुन्ना रोते रोते बोला "घोड़ा बड़ा शैतान है। इसने मुझे नीचे गिरा दिया।"

लतिका बोली "तूने बेचारे की बाग जो ज़ोर से खैंच दी थी।"

मुन्ना बोला "मैंने मां को देखा था ना।"

लतिका ने उसे चूमकर अपनी छाती से लगा लिया; बोली "अच्छा, देख, मैं बाज़ार जा रही हूँ—मुन्ने के लिए क्या लाऊँ।"

मुन्ना बोला "मैं तो बाजा लूँगा। घोड़े पर चढ़कर बाजा बजाऊँगा और अपनी फौज के आगे आगे चलूँगा।"

यह कहते कहते मुन्ने का चेहरा बहुत गंभीर होगया। बालों की लटें उसके माथे पर बिखर गई थीं। वह रोना भूल गया था। आंसू अभी तक उसके गालों पर चमक रहे थे। लतिका ने रूमाल से उसके

आंसू पोंछ दिये और उसकी लटों में उँगलियां फेर कर उन्हें पीछे झटका दिया।

"लतिका, तू किधर जा रही है?"

यह चाची की आवाज़ थी। चाची हाथ पोंछती हुई रसोई से बाहर निकल रही थी। चाची की आयु बहुत बड़ी थी। उसके सिर के बाल सफ़ेद थे। चेहरे पर झुर्रियां थीं। शरीर सूखा-सूखा और दुबला पतला था। उनका चेहरा बहुत से दुखों की कहानी कहता था, लेकिन इस पर भी चाची के चेहरे पर एक विचित्र सी मोहनी अबोधता थी जो जाने इस बुढ़ापे में भी जब आदमी सब कुछ खो बैठता है, कैसे बाक़ी रह गई थी। आजकल के बच्चों के चेहरों पर भी ऐसी अबोधता नहीं मिलती। चाची ने कैसे और किस यत्न से उस अबोधता का रक्षा की होगी, इसका भेद नहीं खुलता। चाची की आयु साठ और आठ वर्ष की थी। इस आयु में चाची ने अपने गांव को जो ब्रह्मपुत्र के किनारे आबाद था दो बार बहते देखा। दो बार फिर बसते देखा। सात बार छोटे-छोटे अकाल आये और तीन बड़े-बड़े अकाल और अंतिम अकाल में तो चाची का सारा परिवार समाप्त हो गया और चाची अपना गांव छोड़कर लतिका के यहां कलकत्ते चली आई। राय बहादुर मजूमदार लेन में लतिका का घर था। चाची जब पहली बार कलकत्ते आई तो उन्हें यह घर भी बड़ी मुश्किल के बाद मिला और जब वह घर के भीतर प्रविष्ट हुई तो इस समय सामने के मन्दिर में आरती उतारी जा रही थी, लेकिन लतिका के घर में आरती के समय भी अंधेरा था और लतिका का पति कांपती हुई सीढ़ियों पर से दबे पांव उतर बाहर जा रहा था। वह चाची के लिए केवल एक मिनट के लिए रुका और फिर यह कह कर तुरंत चला गया "चाची, मैं फिर आऊँगा। इस समय रुक नहीं सकता। एक ज़रूरी काम है। मेरे पीछे लतिका तुम्हारा सब ख्याल रखेगी।" और फिर चाची ने देखा कि लतिका के पति ने क्षणभर के लिए लतिका का हाथ अपने हाथ में

ले लिया और फिर उसे छोड़ दिया और अंधकारमय सीढ़ियों से नीचे उतरकर पिछले दरवाज़े से बाहर जाने लगा, पछवाड़े की गली में। चाची ने देखा कि लतिका ने बड़ी सावधानी से उसके लिए दरवाज़ा खोला। प्रकाश की एक पतली सी रेखा तड़पती हुई भीतर आई और फिर दरवाज़ा बन्द होगया। लेकिन उस एक क्षण में चाची ने देखा कि लतिका एक लम्बे क़द की, सांवले मुखड़े की, आकर्षक लड़की है। उसने श्वेत साड़ी पहन रखी है और उसकी आंखों में आंसू झल-मला रहे हैं। उन आंसुओं को देखकर चाची क्षण भर के लिए कांप उठी थी। लोग धान, कपास, और गेहूँ बोते हैं, चाची ने तो अपने जीवन में केवल आंसू बोये थे। उन्होंने सोचा था कि शायद यहां कलकत्ते में ये आंसू नहीं होंगे। ये आंसू तो केवल ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे होते हैं जहां किसान चावल के मोतियों की फसल बोते हैं और आंसू काटते हैं। क्या यह संसार ही ऐसा दुख भरा है? एक क्षण के लिए चाची जिस सुख-चैन की तलाश में कलकत्ते आई थीं, उसे भूल गईं। उन्होंने धीरे से लतिका का हाथ पकड़कर बड़े कोमल स्वर में पूछा था "क्या बात है बहू?" लतिका मुस्करा कर अपने आंसुओं को पी गई। उसने चाची का हाथ ज़ोर से दबाकर बड़े मद्धम स्वर में कहा था "कुछ नहीं चाची, आओ, ऊपर आ जाओ।"

लतिका ने चाची का बुक्चा संभाल लिया था और उसे ऊपर ले गई थी।

उस दिन से आज तक चाची ने लतिका के पति को फिर कभी नहीं देखा था। चाची अपना गांव छोड़ कर इसलिए यहां आई थीं कि यहां ब्रह्मपुत्र नहीं है। अब उन्हें पता चला जैसे ब्रह्मपुत्र यहां भी है और जब तक लतिका का पति यह नदी पार न कर ले वह वापस घर नहीं आ सकता। बस उन्हें इतना ही अन्दाज़ा हो सका। वह अक्सर बालकोनी में खड़े-खड़े गीले कपड़े फैलाते हुए सोचा करतीं और उनकी आंखों की कांपती हुई हैरान पुतलियां नीचे गली में भागे जा रहे लोगों

को देखकर दुखित हो उठतीं। ये सब लोग किसी तूफ़ान की पेशवाई को भागे जा रहे हैं? अभी पानी कहाँ चढ़ा है? कहाँ यह आग लगी है?

लेकिन चाची इन प्रश्नों का उत्तर ठीक से न दे पातीं, और अपनी कांपती हुई पुतलियों से नीचे गली में गुज़रने वाले लोगों को आश्चर्य से देखती रहतीं।

उस समय चाची की आँखों में वही अजीब-सा भय था जब उन्होंने लतिका के निकट आकर पूछा "तू कहाँ जा रही है लतिका?"

और फिर लतिका को चुप देखकर स्वयं ही काँपते हुए स्वर में फिर पूछ लिया "क्या जलसे में जा रही है?" लतिका की मुस्कराहट बड़ी अच्छी थी। चाची की मुस्कराहट भी बड़ी अच्छी थी लेकिन चाची की मुस्कराहट ऐसी थी जैसे कोई मरने से कुछ क्षण पूर्व जीवन के सारे दुःख-दर्द को समझ ले और समझकर नीले आकाश की ओर देखकर मुस्करा दे। चाची की मुस्कराहट में अन्तरिक्ष की मोहनी थी लेकिन लतिका की मुस्कराहट सुबह का पहला उजाला थी जो बहुत दूर से और शायद कहीं बहुत निकट से आया था और सितारों की चिलमन उठाकर धीरे-धीरे अन्धकार का पर्दा उलट रही थी। बड़ी मीठी-मीठी, मद्धम मुस्कराहट जैसे कोई रेशम के ऊपर रेशम रख दे, लेकिन यह मुस्कराहट एक विचित्र घनिष्टता और दृढ़ता का अनुभव भी लिए हुए थी। जैसे ब्रह्मपुत्र भी है और तूफ़ान भी है, लेकिन एक नाव भी है जो पार ले जा सकती है।

चाची के ओंठ कांपे। एक श्वेत लट घबराकर मुर्झाए हुए गालों पर गिर पड़ी। उन्होंने एक विचित्र विनयपूर्ण स्वर में लतिका से कहा "तुम जलसे में ज़रूर जाओगी?"

लतिका हँसी। उसने वह श्वेत लट बड़े प्रेम से उठाकर चाची के कान के पीछे घुमा दी और बड़े प्यार से बोली "मैं तो आठ बजे से

पहले घर पहुँच जाऊंगी चाचा। आते ही मुझे खाना दे देना, सचमुच बहुत भूख लग रही होगी।"

लतिका जल्दी से यह कहकर अंधेरी सीढ़ियों से उतरने लगी। चाची सीढ़ियों के ऊपर मुन्ने का हाथ पकड़े देर तक खड़ी रहीं, फिर दरवाज़ा खुला, प्रकाश की एक पतली-सी रेखा तड़पी। फिर अंधेरा छा गया। मुन्ने ने कहा "चाची, चलो! मुझे महाकवि के नन्हे चाँद के गीत सुनाओ।"

चाची अब सब कुछ भूल गईं। उन्हें महाकवि टैगोर के नन्हे चांद के गीत बहुत पसन्द थे। आज उन्होंने मुन्ने को वह गीत सुनाया, जब बच्चा खो जाता है और माँ उसे ढूंढ़ती है और उसका नाम लेकर पुकारती है और बच्चा एक जूही का फूल बनकर उसकी गोदी में आ गिरता है।

गीत गाते-गाते चाची को याद आया, कितने सुन्दर जूही के फूल थे। एक-एक करके वह सब ब्रह्मपुत्र की लहरों मे खो गये और अन्त में चाची की गोद खाली रह गई। सब कुछ मिट गया, मोतियों जैसे बेटे और मोतियों जैसे धान की फसलें। अन्त में केवल ब्रह्मपुत्र नदी रही और ज़मींदार की गढ़ी......चाची गीत गाते-गाते चुप हो गईं और उन्होंने मुन्ने को उठाकर ज़ोर से अपनी बाहों मे भींच लिया।

मुन्ने ने मचलते हुए कहा "ऊहूं! चाची एक गीत सुनाओ" और अब के चाची ने वह गीत सुनाया जिसमें चाँद की नाव आकाश की नदी मे हौले हौले बहती है और बच्चा उसमें बैठा हुआ उसे हौले-हौले खेता जाता है और मुन्ना यह नाव खेते-खेते सो गया।

राय बहादुर मजूमदार लेन से गुज़र कर लतिका अब घनशामदास बाज़ार में चल रही थी। चलते-चलते लतिका को एक बार ऐसा लगा कि जैसे कोई उसके पीछे-पीछे चल रहा हो। उसने घूमकर देखा, कोई नहीं था। शायद यह उसका भ्रममात्र था, कोई उसका पीछा नहीं कर रहा था। फिर भी सावधान रहना आवश्यक था। लतिका ने सोचा,

शहर में दफ़ा १४४ लग चुकी है, संभलकर चलना चाहिए। लतिका ने चारों ओर देखा। बाज़ार में लोग आ जा रहे थे। दुकानें सजी हुई थीं। लोग वस्तुएं ख़रीद रहे थे। बसें और ट्रामें भी गुज़र रही थीं। फिर भी लतिका को ऐसा लगा जैसे यह सारी चुप्पी और शांति छिछली है। जैसे यह वातावरण एक पतले बारीक ब्लेड की तरह तना हुआ है ऐसे कि ज़रा-सा हाथ लगाने से रक्त बह निकलेगा। लोग-बाग चल रहे थे, काम कर रहे थे, बोझ उठा रहे थे, और कहीं-कहीं हँसी की आवाज़ भी सुनाई देती थी। फिर भी लतिका को ऐसा जान पड़ता जैसे उसके पीछे क्रोध की एक गूंज है, जैसे कहीं दूर क्षितिज पर लाल-लाल प्रकाश नज़र आकर लुप्त हो जाता है। जैसे रेत के किनारे धीरे-धीरे लहरें आगे बढ़ रही हों और लतिका चौकन्नी होकर, आगे-पीछे देखने लगती।

खिलौनों की एक दुकान पर खड़े होकर उसने मुन्ने के लिए एक बाजा ख़रीदा और उसे अपने ओठों से लगाकर बजाया। दुकानदार ने मुस्कराकर कहा "आप तो यह बहुत अच्छा बजा लेती हैं" लतिका ने हँसकर बाजा अपने बटुए में रख लिया और दुकानदार को दाम देने लगी। बिल्कुल उसी समय उसने फिर महसूस किया जैसे कोई उसके बहुत निकट से गुज़र कर निकल गया हो। उसने घूमकर देखा। कोई नहीं था। सामने दो आदमी गांधी टोपी पहने मज़े में बातें करते हुए चले जा रहे थे फिर भी लतिका सावधान हो गई। जलसे में जाने से पूर्व वह आज अपने पति से मिलना चाहती थी जो यहीं कलकत्ते में छुपा हुआ था लेकिन अब उसने एकदम फ़ैसला कर लिया कि आज वह उससे नहीं मिलेगी। शायद पुलिस पीछा कर रही हो और कहीं वह अपनी मूर्खता से अपने पति के ठिकाने का पता पुलिस को दे दे। लतिका का दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा। उसने दुकान से उठकर चोर नज़रों से उधर देखा जिधर उसका पति छुपा हुआ था। फिर उसने मुंह मोड़ लिया और ग्रे बाज़ार की बस पकड़ ली। फासला

यहां से अधिक नहीं था और वह पैदल ही जाना चाहती थी, लेकिन उसने सोचा कि रास्ते में कहीं उसका दिल डांवाडोल न हो जाय। उसने बस पकड़ना ही उचित समझा।

बस में उसे नीलिमा और प्रतिमा मिल गईं। नीलिमा बड़ी नाज़ुक-मिज़ाज लड़की थी। वह बहुत अमीर नहीं थी, बहुत सुन्दर नहीं थी, बहुत पढ़ी-लिखी नहीं थी। फिर भी उसे देखकर लोग सदा यह सोचते कि नीलिमा बहुत सुन्दर है, बहुत अमीर है, बहुत पढ़ी-लिखी है। वास्तव में उसके स्वभाव में सलीके और सुघड़ापे को इतना दख़ल था कि वह अपने छोटे से घर में, अपनी छोटी सी आय में, अपने छोटे से ज्ञान में इस प्रकार जीवन व्यतीत करती थी कि जीवन अप्रैल के बादल की तरह निर्मल और चमकता हुआ नज़र आता। नीलिमा को अच्छी सुगन्धियों का बहुत शौक था, क्योंकि हस्पताल में उसे अक्सर गन्दी, सड़ी बदबूओं से वास्ता पड़ता था और नर्स का काम करते-करते उसे उन बदबूओं से चिढ़ सी भी हो गई थी। इसलिए वह अक्सर संध्या समय छुट्टी के बाद बड़ी तेज़ सुगन्धि इस्तेमाल करती थी। लेकिन जब से उसका समाजवादी पति अपनी क्रांतिकारी सरगरमियों के कारण जेल में चला गया था नीलिमा को सुगन्धियों से घृणा सी हो गई थी। वह अब भी साफ़-सुथरी, भावुक लड़की नज़र आती थी। अब भी उसका घर शीशे की तरह चमकता था लेकिन अब उसके बालों में सुगन्धि नहीं थी। इसीलिए तो आज लतिका उसके बालों की सुगन्धि सूंघ कर बहुत हैरान हुई।

लतिका ने पूछा—"क्यों क्या बात है? पति महाशय से मिलने जा रही हो?"

नीलिमा मुस्कराई "नहीं पगली, मैं तो तेरे साथ जलसे में जा रही हूं।"

और प्रतिमा ने अपने गोल-गोल गाल स्वयं ही थपथपाते हुए कहा—"राम, राम! आज तो जैसे सुगन्धियों का तूफ़ान उठ रहा

है, चारों ओर चम्बेली-ही-चम्बेली है। और लतिका ने भी तो आज ग़ज़ब ढा रक्खा है। बसन्त घटायें बांध कर आई है। और लाल गुलाल चारों ओर बिखर रहा है। सखियो! क्या यह सब जलसे में जाने की तय्यारी है? वहां यह सुन्दरता किसे दिखाओगी?

इतना कह कर प्रतिभा ज़ोर से हंस पड़ी। यह प्रतिभा की विशेष आदत थी कि स्वयं ही बात करके स्वयं ही हंस पड़ती थी। प्रतिभा मोटी-मोटी गुलगुली सी लड़की थी। उसका इकलौता बेटा भी अपनी मां की तरह मोटा-मोटा, गुथला-गुथला, भरा-पुरा खुश मिज़ाज नज़र आता था, लेकिन पति महाशय बड़े तुनक स्वभाव और गम्भीर थे। प्रतिभा और उसके पति की विशेषतायें उनके बेटे में इकट्ठी हो गई थीं अर्थात् लड़का मां की तरह मोटा-ताज़ा था और बाप की तरह गम्भीर! ज़रा सी उंगली दिखाने पर ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगता। प्रतिभा आज अपने पति और अपने बेटे दोनों को घर मे छोड़ आई थी। वह अब अपनी सहेलियों से हंस-हंस कर कह रही थी—"आज घर में खूब मज़ा रहेगा। ये दोनों महाशय बारी-बारी से रोयेंगे और एक दूसरे के ऊपर बरतन फैंक कर अपना जी बहलायेंगे।"

लतिका बोली—"अपने घर को इस तरह रखोगी तो कैसे काम चलेगा?"

प्रतिभा बोली—"तो क्या करूं सखी, मुझ से तो एक ही बार दो-दो काम नहीं होते। आज सुबह जलसे के लिए भाषण तय्यार कर रही थी कि पति महाशय चाय मांगने लगे। चाय दी तो खाना मांगने लगे। खाना खिलाया तो टाई मांगने लगे। खोई हुई टाई ढूंढ़ कर दी तो इतने में लड़के ने कुत्ते के मुंह में उंगली देकर मलहार राग शुरू कर दिया। मैंने कुत्ते को घर के पीटा तो पति महाशय ने शाम कलि-यान शुरू कर दिया। अब जब वहां से चली तो दोनों भैरवी गा रहे थे। अब तुम ही बताओ, क्या करूँ?"

नीलिमा ने कहा—"बच्चे को तो किसी अच्छे से डाक्टर को दिखाओ।"

प्रतिभा ने चमककर कहा—"कैसे दिखाऊं ?" कलकत्ते में अच्छा डाक्टर जितनी फ़ीस लेता है उससे तो हमारे घर भर का राशन चलता है। तो क्या बी० सी० राय को बुला कर दिखाऊं ? तुम भी क्या बोर्ज़वा समाज के लोगों की सी बातें करती हो कभी-कभी, और फिर यह तो देखो कि मैं खिलाती क्या हूं अपने बेटे को और अपने उनको ?"

इतना कहकर प्रतिभा ज़ोर से हंसी और फिर बोली—"आज एक हकीम ने बताया है कि इन्हें मछली में शलजम पकाकर खिलाओ तो मोटे हो जायेंगे। आज ही बाज़ार से शलजम खरीद कर लाई हूँ—यह देखो।"

प्रतिभा ने अपने पहलू में बंधे हुए शलजम दिखाये और नीलिमा और लतिका आप ही आप मुस्करा दीं। सचमुच प्रतिभा बड़ी भोली लड़की थी। उस पर क्रोध आना बड़ा कठिन था। नीलिमा ने बड़े प्रेम से प्रतिभा के कंधे पर अपना नाजुक हाथ रख दिया और लतिका ने भी बड़े प्यार से प्रतिभा की कमर में हाथ डाल दिया। लतिका भी प्रतिभा को बहुत चाहती थी क्योंकि प्रतिभा महिला संघ में बहुत अच्छा काम कर रही थी और भाषण देने में तो कोई लड़की उससे बाज़ी न ले जा सकती थी, और फिर वह कितनी सरल स्वभाव थी। कितनी अनथक काम करने वाली थी। कहो तो सुबह से शाम तक एक जगह खड़ी रहे। कहो तो सुबह से शाम तक चलती रहे। धुन की पक्की और अभिमान तो उसे छू तक न गया था। न ही वह अपनी साथी लड़कियों से किसी बात में जलती थी। कितने ही कठिन-से-कठिन कार्य उसे दिये गये उसने हंस-हंस कर पूरे कर दिये। प्रतिभा की यह हंसी उसके दिल से फूटती थी और फव्वारे के पानी की तरह चारों ओर वातावरण में फैल जाती थी। लतिका ऐसे मुस्कराती थी जैसे चाँद

बदली में झिलमलाये। प्रतिभा यूँ जैसे समुद्र की बहती हुई लहर सारे तट पर फैल जाये।

लतिका ने धीरे से पूछा—"आज तू जलसे में क्या कहेगी ?"

प्रतिभा ने बड़े आत्म-विश्वास से अपनी गोल-गोल आंखें घुमाकर कहा—"दीदी, देखती जाओ। आज तुम्हारे सड़े-गले समाज के भुस में वह चिंगारी लगाऊंगी कि सारा कलकत्ता जल उठेगा। बस तुम अपनी यह सुन्दर साड़ी बचा लेना।"

प्रतिभा ने यह कह, ज़ोर से हंस कर लतिका की पीठ पर हाथ मारा और नाजुक-सी नीलिमा उसकी इस हरकत पर अपनी पतली कमर सिकोड़ कर अपनी अप्रसन्नता प्रकट कर रही थी कि इतने में बस बो बाज़ार के नुक्कड़ पर आकर रुक गई और यहां ये तीनों सहेलियां उतर कर इंडियन एसोसियेशन हाल की ओर चल दीं। इतने में दूसरी ओर से एक और बस आकर रुकी और उसमें से एक बड़ी ही सुन्दर लड़की निकली जिसका सजा हुआ जूड़ा, रेशमी साड़ी का कढ़ा हुआ लहरिया और झमझमाता हुआ बलाऊज़ देखकर प्रतिभा चिल्ला उठी—"अरी उम्मिया......उम्मिया......ओ मेरी जान उम्मिया! आज तूने क्या गज़ब ढाया है। दो बच्चों की मां होकर फिर से नई-नवेली दुल्हन की तरह सजी है।"

उम्मिया घोष मुस्कराती हुए आगे बढ़ी। सामने से एक मोटर आ रही थी, इसलिए रुक गई। फिर मोटर गुज़र जाने के बाद उसने बड़ी अदा से अपनी साड़ी संभाली और सरसराती हुई जैसे वायु की लहरों पर उड़ती हुई, ठुमकती हुई, वह सड़क पार करके प्रतिभा, लतिका और नीलिमा से आ मिली। उम्मिया घोष भी महिला संघ की कर्म-चारी थी और उसका पति सिविल सैक्रेटेरियट में नौकर था, इसलिए वह सदैव अपनी पत्नी को महिला संघ में काम करने से, मज़दूर औरतों से मिलने-जुलने और समाज-वादियों के जलसे में जाने से रोकता था। और उम्मिया घोष हंसकर और कभी लड़झगड़ कर

डाल देती थी। फिर एक दिन मिस्टर घोष बोले "सरकार मेरे दोनों बच्चों को नौकरी नहीं देगी। यदि तू नहीं मानेगी तो एक दिन मेरी नौकरी भी छिन जायेगी" और जब उस पर भी उम्मिया घोष न मानी तो इतने क्रोधित हुए, इतने क्रोधित हुए............

लतिका ने जब यह सुना तो उसका चेहरा क्रोध से तमतमा उठा। बोली, "और तू ने कुछ नहीं कहा, चुपके से पिटती रही।"

उम्मिया घोष बोली "मैंने क्या कहा, यह तो जाने दे इस समय। यह तो प्रतिदिन की बक-बक झिक-झिक है, होती रहती है, वह कहते हैं, मैं सुनती हूं।"

नीलिमा ने उम्मिया घोष की सुराहीदार गरदन पर एक लम्बी सी ख़राश का निशान देखा और क्रोध में बोली "जंगली! देखो तो कितने ज़ोर का हाथ मारा है।"

उम्मिया घोष ने मुस्करा कर कहा "नहीं, हाथ तो इतने ज़ोर का नहीं पड़ा। वह हाथ में सोने की अंगूठी पहने थे, इसी से यह जगह छिल गई।"

प्रतिभा ने पूछा "फिर तू आज कैसे आ गई?"

उम्मिया घोष ने कहा "देखती नहीं हो, किसी की शादी में शामिल होने के लिए वस्त्र पहिन रखे हैं। दो दिन हुए मैंने घर पर एक फ़र्ज़ी सहेली की शादी का निमन्त्रण-पत्र मंगवा लिया था। अब क्या पतिदेव सहेली की शादी में जाने से भी रोकेंगे?"

प्रतिभा और उम्मिया घोष एक दूसरी की बाहों में बाहें डाल कर ज़ोर ज़ोर से हंसने लगीं।

इन्डियन एसोसियेशन हाल औरतों से भरा पड़ा था। दीवारों पर बड़े-बड़े बैज लगे हुए थे जिन पर लिखा था—

"सिक्योरिटी एक्ट के कैदियों को रिहा कर दो या उन पर मुकद्दमा चलाओ।"

"हड़तालियों की मांगें पूरी करो।"

"राजनीतिक कैदियों के साथ मानवों का सा बर्ताव करो

"राजनीतिक नज़रबन्दों को रिहा करो।"

"बी० सी० राय का बंगाल टैगोर का बंगाल नहीं। हम मज़दूर किसान राज्य चाहते हैं, पुलिस राज्य नहीं चाहते।"

उम्मिया घोष बोली "और एक बैज यह भी चाहिये—पुलिस राज्य और रामराज्य में क्या फ़र्क है? ठीक उत्तर देने वाले को नोबल प्राईज़ दिया जाएगा।"

यह बात सुनकर आस-पास की बहुत सी औरतें हंस पड़ीं। लतिका ने नज़र दौड़ा कर चारों ओर देखा। आज कामगार औरतें विशेष रूप से इस जलसे में अधिक आई थीं। सारा हाल खचाखच भरा हुआ था। लतिका ने घड़ी देखी। जलसे की कारवाई अब तक शुरू हो जानी चाहिए थी। लतिका और प्रतिभा को आते देख कर स्टेज पर से एक लम्बे क़द वाली बूढ़ी सी औरत उठी और हल्के हल्के कदमों से चलते हुए लतिका के पास आ गई और सख्त स्वर में कहने लगी, "बहुत देर कर दी।"

लतिका क्षमा मांगने लगी।

बूढ़ी स्त्री ने कहा "हम लोग तो घर भी नहीं गये, मिल बन्द होते ही सीधे इधर आ गये। तुम्हें कौन सा मिल में जाना था?"

लतिका और प्रतिभा ने फिर क्षमा मांगी, "रज़िया बहिन क्षमा कर दो ना।"

रज़िया मुस्कराई, बोली "चलो अब जल्दी से शुरू कर दो, हमें तुम्हारा ही इन्तज़ार था।"

रज़िया प्रधान चुनी गई। लतिका ने समाज-वादी नज़रबन्दों की मांगों को पूरा करने का प्रस्ताव प्रस्तुत किया और बड़े जँचे-तुले स्वर में एक छोटा सा भाषण दिया। उसके बाद प्रतिभा ने प्रस्ताव का समर्थन करते हुए आध घंटे तक एक जोशीला भाषण दिया और प्रस्ताव तालियों की गूंज में पास किया गया।

सब औरतें खड़ी होकर तालियां बजा रही थीं और नारे लगा रही थीं कि इतने में किसी ने रज़िया के लिए कागज़ का एक पुर्ज़ा भेजा। रज़िया ने उस औरत को उसी समय स्टेज पर बुलवा लिया। यह एक पीली सी दुबली पतली स्त्री थी जिसके गाल भीतर पिचक गये थे। चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं और बाल उलझ उलझ कर वायु में उड़े जा रहे थे। वह जल्दी जल्दी अपने काले दुपट्टे का पल्लू संभालती भागती हुई आई और धम से स्टेज पर आकर कहने लगी "बहनो! आपने यह पास कर दिया, यह तो बड़ी अच्छी बात की, लेकिन मैं आप को एक बात बताने यहां आई हूं।"

वह एकाएक चुप हो गई। हाल में बातें बन्द हो गईं। सब उस औरत की ओर देखने लगीं। वह बोली और अब उसके स्वर में घबराहट नहीं थी। मेरा पति एक कामगार है, वह जूते के कारखाने में काम करता है। वह कई वर्षों से सुर्ख साथी है, कई हड़तालों में उसने भाग लिया, कांग्रेसियों के साथ जेल भी गया। ख़ैर, जेल जाना उसके लिए कोई नई बात नहीं है, जैसे भूखे रहना हम निर्धनों के लिए कोई नई बात नहीं है।"

वह चुप हो गई। लतिका को लगा जैसे किसी ने उसका दिल पकड़ लिया हो। सारे हाल में सन्नाटा था।

वह औरत फिर बोली "लेकिन पहले अपने नेता लोग पूंजीपतियों के विरुद्ध हड़ताल करने को बुरा नहीं समझते थे, मैं पूछती हूं वे अब इसे बुरा क्यों समझते हैं? कुछ लोग आज-कल कहते हैं कि पूंजीपति भी आखिर हमारे भाई हैं। मैं कहती हूं तो क्या वह पहले हमारे भाई नहीं थे? अब क्या हुआ?"

एक औरत बोल उठी "अब वे तुम्हारे भाई नहीं हैं। अब वे दामाद हैं दामाद!"

इस पर सारा हाल हँसने लगा और तालियां बजने लगीं। रजिया ने कठिनतापूर्वक चुप कराया। वह औरत बड़े क्रोध में आकर कहने

लगी "भाई हों या दामाद, वे पहले भी कारखानेदार थे, हम पहले भी मज़दूर थे। आज भी वे कारखानेदार हैं, हम आज भी मज़दूर हैं। मेरा पति पहले भी हड़ताल कराता था, वह आज भी करायेगा। उसे आज यह अधिकार क्यों नहीं पहुंचता है? आज उसे जेल में क्यों ठूंस दिया गया है? और फिर उस पर मुकदमा भी नहीं चलाया जाता। अंग्रेज़ों के समय में उसे दो-तीन बार सज़ा हुई थी लेकिन हर बार उसे अदालत ने सज़ा दी थी। कुछ मोटों ने झूठे-सच्चे बयान दिये थे। वकीलों में बहस हुई थी। अब क्या है? न वकील हैं न गवाह हैं, न मुकदमा है न दफ़ा है, न क़ानून है, केवल जेल की सलाखें हैं।

वह औरत एक क्षण के बाद पुनः बोली "पिछले सात दिन से हमारे घर राशन नहीं था, क्योंकि अब घर में कोई कमानेवाला नहीं है। मुझे दो महीने से बार-बार बुखार आता था। इसलिए मिलवालों ने मुझे निकाल दिया। घर में जो कुछ था वह थोड़ा-थोड़ा करके हमने बेच दिया। फिर मेरे पास था ही क्या? कल रात को मेरा बेटा भूख से बिलक-बिलक कर मर गया। घर में कुछ नहीं था। कई दिन से नहीं था। मैं अभी अपने बच्चे को दफ़न करके आ रही हूँ। सीधी यहीं आ रही हूँ, ताकि अपना काला दुपट्टा अपनी बहनों के सामने फैलाकर उनसे पूछ लूं, क्या यह प्रस्ताव काफ़ी है? यदि सचमुच यह प्रस्ताव काफ़ी है तो इसकी एक नकल मुझे दे दी जाये ताकि मैं इसे अपने नन्हे बेटे की कब्र पर लगा दूं।

हाल का सन्नाटा एकदम टूट गया। जैसे किसी ने बंद तोड़ दिया हो। बहुत-सी आवाज़ें एकदम गूंजने लगीं :—

"नहीं, नहीं।"

"यह काफ़ी नहीं है!"

"हरगिज़ हरगिज़ यह काफ़ी नहीं है !!"

बहुत-सी औरतें खड़ी होकर चिल्ला रही थीं। इतने में एक औरत,

एक नौजवान कामगार औरत, जिसने लहंगा पहिन रखा था और जिस की चुटिया क्रोध के मारे एक बिफरी हुई नागन की तरह हरकत कर रही थी, धम से स्टेज पर कूद गई और बाहें फैलाकर बोलने लगी "काफ़ी नहीं है तो उठो, आगे बढ़ो......कलकत्ते की शेरनियो, क्या तुम अपने भाइयों, पतियों को यूँ जेल में भूखा मर जाने दोगी? उठो! अभी जलूस निकालकर चलो, जेल की ओर। आज हम इनकी माँगें पूरी करके वापस आयेंगी

"हां, हां, यह ठीक है।" बहुत-सी औरतें एकदम हल्ला करने लगीं। तालियाँ बजने लगीं। जलूस निकालने की तजवीज़ सबको पसन्द आई थी। चारों ओर हंगामा-सा मच गया। रज़िया को बहुत क्रोध आया। उसने ज़ोर से दो-तीन बार मेज़ पर हाथ मारकर औरतों को चुप कराया।

एक औरत बोली "कामरेड प्रेज़िडैंट।"

रज़िया बोली "तुम्हारी ऐसी-तैसी, चुप रहो, नहीं तो उठाकर हाल से बाहर फेंक दूंगी।"

दूसरी बोली "मुझे भी बोलने का अधिकार है।"

रज़िया बोली "तुम कौन हो जी? क्या महिला संघ की मेम्बर हो?"

"नहीं, मैं मेम्बर नहीं हूँ" वह औरत बोल रही थी। और लतिका ने देखा कि वह भूरे रंग की बड़ी कीमती साड़ी पहने हुए है। अधेड़ आयु की मोटी-ताज़ी औरत! माथे पर कुमकुम सज रहा था। बांहों में सोने की चूड़ियां थीं। उसी औरत ने बड़े तीखे स्वर में कहा "मैं मेम्बर तो नहीं हूँ लेकिन आम जलसे में बोलने का मुझे भी अधिकार है और मुझे इसलिए भी विशेष रूप से आज्ञा दी जाय क्योंकि मैं आपके प्रस्ताव का विरोध करना चाहती हूँ।

रज़िया ने उठकर कहा "एक महिला इस प्रस्ताव का विरोध करना चाहती हैं।"

"हां! हां!!" फिर एकदम शोर मचा। दूसरे क्षण में सब औरतें

उसकी ओर देखने लगीं जो गरदन बढ़ाये स्टेज की ओर चली आ रही थी।

"कैसी मक्कार लोमड़ी की तरह चलती है।" एक औरत ओठों ही ओठों में बोली।

दूसरी ने कहा "कैसी चिकनी-चुपड़ी नज़र आती है।"

"खामोश, खामोश। रज़िया ने गरज कर कहा और वे दोनों औरतें सहम गईं और गरदन झुकाकर ज़मीन की ओर देखने लगीं।

वह मोटी-ताज़ी औरत स्टेज पर आकर कहने लगी "बहनो, मुझे राजनैतिक कैदियों और समाजवादी नज़रबन्दों की मांगों से पूरी-पूरी सहानुभूति है। (तालियाँ) मैं उस प्रस्ताव का पूरा-पूरा समर्थन करती हूँ जो इस संबन्ध में आपने मंजूर किया है (तालियाँ)। मैं चाहती हूँ कि कलकत्ता की हर स्त्री आज अपने घर में इस प्रस्ताव पर बहस करे। लेकिन मैं इस जलूस के प्रस्ताव का विरोध करती हूं क्योंकि आप को मालूम नहीं कि आज कलकत्ते में दफ़ा १४४ लगी हुई है। क़ानून तोड़ कर हम क़ानून की ज़द से नहीं बच सकते।"

"कौन बचना चाहता है?" एक आवाज़ हाल के बिल्कुल पीछे से आई।"

वह औरत बोली "देखिये, हम औरतें हैं। हमें अपने घरों को देखना है। अपने बच्चों को, अपने सम्बन्धियों को, अपने पतियों को देखना..."

नीलिमा क्रोध से कांपने लगी। उठकर बोली "मेरा पति जेल में भूखा मर रहा है।"

एक कामगार औरत बोल उठी "ये सोने की चूड़ियाँ उतार कर बात करो।"

दूसरी ने पूछा "ब्लेक मार्केट का सोना है क्या?"

तीसरी बोली "ए बहिन! इसका पति ज़रूर गांधी टोपी पहिनता होगा।"

इस पर बहुत से क़हक़हे उड़े। और एक काली-भुजंग, बड़े-बड़े हाथ-पांव वाली औरत उठकर कहने लगी "मैं आप बहनों से कहती हूं कि मैं इस औरत के पति महाशय को जानती हूं। वह गांधी टोपी नहीं, हैट पहनता है हैट !"

"तुम कैसे जानती हो ?" एक लड़की बोली।

उस काली औरत ने अपने दोनों हाथ अपने कूल्हों पर रख लिए और क्रोध भरे स्वर में बोली "इसका पति हमारे मुहल्ले में रहता है। वह पुलिस सब-इन्सपेक्टर है। अभी पिछले मंगल को उसने मेरे बेटे को लाल झंडे वाला समझ कर अन्दर धर लिया।"

"हाये !" प्रतिभा चिल्लाई "यह पुलिस इंस्पैक्टर की पत्नी है और यहाँ सी० आई० डी० का काम करने आई है—निकल यहां से !" प्रतिभा ने इन्स्पैक्टर की पत्नी को गरदन से पकड़ लिया।

मनोरमा ने व्यंगपूर्वक कहा "जाने दे बहिन ! इस बेचारी को तो राजनीतिक नज़रबन्दों से पूरी-पूरी सहानुभूति है। यह तो बस जलूस निकालने का विरोध करती है

"अह। क्या सहानुभूति जताई है कम्बख्त ने !" एक बूढ़ी औरत बोली, जिसके सिर के बाल आधे से अधिक श्वेत हो चुके थे और जिसका सिर सदैव धीरे-धीरे हिलता रहता था। लतिका को उसकी बोल-चाल से लगा कि वह उत्तरी भारत की रहने वाली है।

इतने में हाल की बहुत सी औरतें पुलिस इन्सपैक्टर की पत्नी के गिर्द एकत्रित हो गईं और हो सकता था कि उसकी ठुकाई भी हो जाती, लेकिन उसी समय रज़िया ने बड़ी चतुरता से काम लेकर सब को ठंडा किया और बीच-बचाव करके उस औरत को जल्से से बाहर निकाला। जब वह जल्से से बाहर निकाली जा रही थी तो वह अत्यन्त घबराई हुई थी। उस परेशानी की हालत में उसकी साड़ी से एक पिस्तौल भी नीचे गिर पड़ा।

"ऊँ हूं !" उम्मिया घोष ने पिस्तौल उठाकर कहा "कम्बख्त पूरा

प्रबंध करके आई थी नज़रबन्दों के हित के लिए।"

उम्मिया घोष अपने बटुए में पिस्तौल इस प्रकार रखने लगी जैसे वह लिपस्टिक हो कि लतिका ने पिस्तौल उससे छीनकर जासूस औरत की ओर फैंक दिया और बोली "यह भी लेती जा, नहीं तो फिर कल-कलोतर को अपने अखबारों में छपवायेगी कि राजतिनैक नज़रबन्दों की हितैषियों की तलाशी पर पिस्तौल निकले।"

जब लतिका और उम्मिया घोष इन्स्पैक्टर की पत्नी को जल्से से निकाल कर दूर तक पहुँचा आईं तो उन्होंने देखा कि बहुत सी औरतें अपनी साड़ियों के पल्लू कसकर बाँध रही हैं। कुछ औरतें बैज उठा रही हैं। रज़िया के हाथ में झंडा था। एक झंडा उस काली-भुजंग औरत के हाथ में भी था जिसने पुलिस इन्स्पैक्टर की पत्नी को पहचाना था। कुछ स्त्रियाँ हाल के कोने में पड़े हुए मटके के पानी से अपने पल्लू भिगो रही थीं।

नीलिमा बोली "यह किस लिए?"

रज़िया ने कहा "जब आंसू लाने वाली गैस चलेगी तो यह भीगा हुआ पल्लू आखों पर रख लेने से कष्ट कम होगा। इस तरह आंखों की जलन भी बहुत कम हो जाती है।"

प्रतिभा ने पूछा "और अगर गैस न चली, गोली चली तो..."

उम्मिया घोष बोली "गोली नहीं चलेगी। अगर गोली चलेगी तो मैं आगे हो जाऊँगी और मेरे गहने-लत्ते देखकर पुलिस वाले ज़रूर यह समझेंगे कि मैं जलूस में नहीं जा रही, मनोरमा के ब्याह की बारात में जा रही हूँ, क्यों मनोरमा?"

"हट पगली" मनोरमा ने कहा।

नीलिमा का चेहरा गम्भीर हो गया, बोली "गोली चल तो सकती है।"

उम्मिया भी गंभीर होकर कहने लगी "नहीं चल सकती, यह

टेगोर का बंगाल है। यहां स्त्रियों पर गोली चलाने की किस में हिम्मत है?"

लतिका बोली "नीलिमा सखी, तू खड़े-खड़े क्या सोच रही है?"

नीलिमा बोली "लतिका, शायद यह हमारी अंतिम मुलाकात है।"

लतिका बोली "पगली हुई है? मैं तो इतनी आसानी से मरने वाली नहीं हूँ।"

उत्तरी भारत की रहने वाली बूढ़ी औरत दरवाज़े पर खड़ी होगई, जहां से औरतें बाहर गुज़र रही थीं। उसके हाथ में छोटी सी डिबिया थी जिसमें सेंदूर भरा हुआ था। वह रास्ता रोक कर कहने लगी, उस का सिर धीरे-धीरे हिल रहा था "मेरी बेटियो, आओ मैं तुम्हें सेंदूर का टीका लगादूं, यह हमारी जीत का सुर्ख निशान है। आज तुम्हारी जीत होगी बेटियो।"

लतिका ने सिर झुका दिया। दूसरे क्षण में सुर्ख टीका उसके माथे पर चमक रहा था।

ज़मीनों पर सुर्ख टीके चमकने लगे। वायु में लाल झंडे खुलते गये, एकाएक प्रतिभा ने इंटरनैशनल शुरू किया।

इन्टरनैशनल गाती हुई औरतें इण्डियन एसोसिएशन हाल से निकलकर जलूस की सूरत में ग्रे बाज़ार में आ गईं और चार-चार की पंक्ति में कालेज स्ट्रीट की ओर बढ़ने लगीं। आगे-आगे रज़िया थी, और वह काली-भुजंग और, उनके पीछे लतिका और नीलिमा और प्रतिभा और मनोरमा। गीता सरकार और उम्मिया घोष उनके पीछे आ रही थीं। लतिका ने एक नज़र पीछे डाल कर देखा। जलूस बड़ी विधि-पूर्वक आगे बढ रहा था और उसके इनकलाबी नारे वातावरण में गूंज रहे थे। लतिका ने देखा कि बाज़ार के वातावरण में जैसे बिजली-सी सनसना गई हो। कुछ लोगों में भय-सा फैल गया और वे इधर-उधर भागने लगे। बहुत से लोगों ने औरतों के साहस की सराहना करनी शुरू की, जिन्होंने अपनी जान पर खेल कर १४४ दफ़ा

के होते हुए जलूस निकाल कर भूख हड़तालियों से अपनी सहानुभूति प्रकट की थी। बहुत से अमीर दुकानदार अपनी दुकानें बंद करने लगे। कुछ रास्ता चलने वाले सड़क छोड़कर तंग गलियों में घुसते गये। कुछ जलूस के साथ आते गये। यों बाज़ार के ऊँचे बालाखानों में कुछ स्त्रियां मेक-अप किये हँस रही थीं। एक ट्राम बिजली का तार रगड़ती हुई आगे निकल गई। लतिका चलते-चलते देर तक उस बिजली के तार को देखती रही। एकाएक चौराहे पर उस तार से एक शोला उत्पन्न हुआ और वह सिहर उठी। वातावरण उस समय बिल्कुल बनावटी-सा दिख रहा था। क़दम आगे बढ़ रहे थे। ज़बान पर गीत के जोशीले बोल थे लेकिन उन बोलों के भीतर और बाहर जैसे उन्हें काटते हुए, उनके आगे-पीछे झांकते हुए कई विचार आते-जाते एक दूसरे से टकरा कर गडमड होते जा रहे थे......चाची के चेहरे पर एक भूरे रंग का मस्सा कितना अच्छा मालूम होता है..................मैं आज अपने पति से क्यों नहीं मिली...ट्राम का तार कैसे भागता जा रहा है... नीलिमा की नाक......मैं आज अपने पति से मिल आती तो अच्छा होता...गोली चल सकती है......नहीं चल सकती......चल सकती है.........नहीं चल सकती .... वह जीपकार आ रही है!—और लतिका के विचार जीप से चिपक गये। अब उसके मस्तिष्क में कुछ नहीं था। सामने से जीप आ रही थी। जीप के ऊपर लासकली का यंत्र लगा हुआ था और जीप में पुलिस-मैन बैठे हुए थे और जलूस आगे बढ़ रहा था और सामने से जीप आ रही थी और निकटतर आती जा रही थी और जीप में पुलिस के सिपाही थे जिनके हाथों में राइफ़लें थीं। और जीप आगे बढ़ रही थी और जलूस आगे बढ़ रहा था और लतिका के सारे विचार, उसका मस्तिष्क, उसका दिल, उस जीप के साथ चिपक गये थे। एकाएक जीप जलूस से कुछ दूरी पर रुक गई और लतिका को एक धचका-सा लगा। और एकाएक उसे ख़्याल आया कि मैंने आज मुन्ने की नीकर धुलने को नहीं दी और फिर

जैसे उसके आगे लतिका को कुछ याद न रहा। जैसे मस्तिष्क पर से काँच का उजला स्वर छन्न से टूट गया। और अब वह उस टूटे हुए काँच के छिद्र में से बाहर देख रही थी।

पुलिस ने जलूस का रास्ता रोक लिया था और एक अफ़सर कह रहा था—"जलूस आगे नहीं जायेगा।"

लतिका के क़दम आप ही आप आगे बढ़ गये।

क़दम नहीं रुके, झंडे नहीं रुके।

"शहर में १४४ दफ़ा लगी हुई है; जलूस निकालना कानून के विरुद्ध है।"

भूख-हड़ताली लोहे की सलाखों के पीछे से झांक रहे थे। औरतों के क़दम आगे बढ़ गए।

"मैं हुक्म देता हूँ, यह जलूस तितर-बितर हो जाये।"

लतिका को यह हुक्म बड़ा छिछला-सा मालूम हुआ, जैसे दूर ताक पर रखा हुआ कोई खिलौना बोल रहा हो।

जलूस आगे बढ़ता गया, सुर्ख सेंदूर के टीके पंक्ति अंदर पंक्ति!

"तितर-बितर हो जाओ! एक दम!!"

एकदम लतिका के मस्तिष्क के नीचे में दो आंखें चमकने लगीं और विचित्र-सा चेहरा।

यह किसकी आंखें थीं? यह किसका चेहरा था? हां यह उसके पति का चेहरा था।

सीढ़ियों पर मुन्ना खड़ा था। पतला-पतला, कांच जगह-जगह से टूट गया था।

एकाएक लतिका को ऐसा लगा जैसे कोई चिंगारी उसके पेट में घुसती चली गई है, ट्राम के बिजली के तार की तरह, और वह कराह कर नीचे गिर पड़ी! मुन्ना सीढ़ियों से नीचे गिर पड़ा और फिर एका-एक अंधेरा छा गया। बीच में प्रकाश की एक किरण-सी तड़पी, आधा

ख्याल, एक चौथाई ख्याल, दो आंखें, एक चेहरा, ...फिर अंधेरा...............

तड़ाख़......तड़ाख़......तड़ाख़.........

रज़िया ने गरज कर कहा "ज़मीन पर लेट जाओ।"

गोली सनसनाती हुई रज़िया के पास से निकल गई। रज़िया ज़मीन पर लेट गई।

सारा जलूस ज़मीन पर लेट गया। बालाखानों के दरीचे बन्द होने लगे। चीत्कार की आवाज़ें आने लगीं। फिर एकदम सन्नाटा छा गया। वायु में केवल गोलियों की आवाज़ सनसनाती हुई मालूम होती थी।

नीलिमा गरदन झुकाये हुए ज़मीन के साथ लगी अपनी आंखों, माथे और कानों को हाथों से ढांपे गली के कोने की ओर घिसट रही थी। उसका हाथ उम्मिया घोष के हाथ में था। वह हाथ पहले चल रहा था फिर रुक गया, वह हाथ पहले गर्म था फिर ठंडा पड़ गया। नीलिमा ने हाथ छोड़ दिया। किसी की बारात गुज़र गई। उम्मिया! नीलिमा आगे घिसटने लगी। आगे जाकर वह फिसल गई और उसके दोनों हाथ किसी के रक्त से लथड़ गये। नीलिमा ने हल्की-सी चीख़ मारकर देखा, प्रतिभा मरी पड़ी थी और उसके पल्लू में बँधे हुए शलजम निकलकर लहू में भीगे हुए थे। शलजम और मछली का शोर्बा! प्रतिभा! तू आज अपने पति महाशय को क्या खिलायेगी? नीलिमा आगे घिसटने लगी। एक गोली ज़न से आई और कोई उसके पीछे ज़ोर से चीख़ा। क्षणमात्र की लम्बी चीख़ जहां जीवन समाप्त हो जाता है और मृत्यु शुरू होती है। यह गीता सरकार थी। गोली उसके भेजे को चीर कर पार हो गई थी। निकट ही एक नौजवान लड़का मरा पड़ा था। पालिश की डिबिया और बुरुश उसके हाथ में था। एकाएक नीलिमा के दांत बजने लगे और उसके मुँह से चीखें निकलने लगीं। रज़िया भागती हुई उसके पास आई "क्या है?" उसने पूछा "तुम्हें कहाँ चोट आई है?"

नीलिमा घबराकर उठी। जलूस छूट गया था। कुछ लाशें ज़मीन पर पड़ी थीं, कुछ लोग कराह रहे थे। कई एक ने नालियों के निकट या दुकानों की सीढियों के नीचे पनाह ली थी।

पुलिस वाले अब हट कर ज़रा दूर खड़े थे। सारे बाज़ार में सन्नाटा था।

नीलिमा ने पूछा "क्या हुआ ?"

रज़िया बोली "अब सब कुछ हो चुका, चलो लतिका के पास।"

नीलिमा ने अपने आप को देखा। उसे कहीं चोट नहीं आई, इस पर वह बहुत हैरान सी हो गई।

रज़िया के बाज़ू से एक गोली छिलती हुई गुज़र गई थी।

रज़िया और नीलिमा लतिका के पास पहुंचीं, जो धीमे-धीमे स्वर में पड़ी कराह रही थी। उसके पास ही मनोरमा औंधे मुँह पड़ी थी। अपने हाथ कानों में दिये।

नीलिमा ने कहा "उठो मनोरमा, उठो ! देखो लतिका कराह रही है। आओ इसे उठाकर ले चलें।"

रज़िया ने कहा "किसे उठाती हो। मनोरमा तो अब नहीं उठेगी। अब तो वह किसी की नहीं सुनेगी।"

नीलिमा ने धीरे से मनोरमा के हाथ उसके कानों से अलग किये। एक कर्ण-फूल उसके कान से अलग होकर नीलिमा के हाथ में आ गया। मनोरमा सचमुच सो रही थी। उसकी छाती में एक गहरा घाव था। उसकी आँखें बंद थीं। उसके ओठ सूखे हुए थे और उसकी कंवारी छातियों में किसी ने ममता के सोते सुखा दिये थे।

"हाय ! हाय !" लतिका धीरे से कराही।

रज़िया और नीलिमा ने चारों ओर देखा। सन्नाटा, निस्तब्धता... जैसे वायुमंडल ने अपना श्वास रोक लिया हो और धरती ने अपने केन्द्र के गिर्द घूमना छोड़ दिया हो।

जूतों की एक दुकान के ऊपर बालाखाने में से एक बूढा चीनी नीचे

झांक रहा था। रज़िया ने उसे नीचे आने को संकेत किया। बूढ़े चीनी ने ध्यान से नीचे देखा। उसकी दुकान तो बंद थी। वह भीतर से होकर बाहर न जा सकता था। बालाखाने से सड़क पर आने के लिये एक सीढ़ी अवश्य थी, लेकिन यह सीढ़ी बाहर दीवार से लगी थी और दीवार नंगी थी और पुलिस वालों की ज़द में थी। कहीं कोई पनाह न थी।

बूढ़ा चीनी सीढ़ी से घिसटता-घिसटता मकड़ी की तरह लगा-लगा, दीवारें टटोलता, नीचे उतर आया। नीचे उतरकर उसने जल्दी से दुकान खोली और फिर नीलिमा और रज़िया की सहायता से वह लतिका को उठाकर दुकान के भीतर ले आया।

सिपाही दूर खड़े तमाशा देख रहे थे।

बो बाज़ार के बालाखानों के ऊँचे दरीचों में औरतें खड़ी-खड़ी रोने लगीं।

जलूस फिर जागने लगा। औरतें ज़मीन पर से उठकर घायलों की देख-भाल करने लगीं और अपने साथियों की लाशें देखने लगीं।

गीता सरकार

मैं गीता सरकार हूँ। मेरी आयु अठारह वर्ष की है। मेरे माता-पिता बहुत निर्धन हैं। इसलिये मुझे मालूम है कि निर्धनता क्या होती है। मैं आर० जी० कारमायकल कालेज में एक नर्स हूँ। मुझे एक लड़के से प्रेम है। उसका नाम अजीत बोस है। वह अगले वर्ष डाक्टरी की परीक्षा पास करलेगा। फिर हम दोनों की शादी हो जायेगी।

"तड़ाख़!"

उम्मिया घोष

मैं हँसने वाली रंगीली चिड़िया हूँ जो सावन के बादलों में उड़ती है और आकाश की नीली झील के सपने देखती है और रात को अपने छोटे से घोंसले में बैठकर अपने दोनों बच्चों को दायें-बायें सुलाकर

अपनी बाहें फैलाकर सो जाती है। बच्चे कितने प्यारे होते हैं। घोंसला कितना सुखदायक होता है। आज मैं अपने दोनों बच्चों को एक अच्छी सी कहानी सुनाऊँगी और वे मेरी नर्म-गर्म छाती से लगे किस प्रकार अपनी मासूम आँखें खोले मेरी कहानी सुनेंगे और कहानी सुनते-सुनते सो जायेंगे।

"तड़ाख़!"

मनोरमा

मैं जलसे से निपट कर तुम्हें ६ बजे ओडियन सिनेमा के बाहर मिलूँगी। नहीं, हम तैरने वाली नंगी औरतों की रंगीन फ़िल्म नहीं देखेंगे। हम चार्ली चपलन की फ़िल्म देखेंगे जो दया और सदाचार का देवता है और अगले हफ्ते जब हमारी शादी हो जायेगी तो हम फिर यही फ़िल्म देखेंगे और उसके बाद बरदवान जायेंगे जहां तुम्हारा घर है। जिसके आंगन में तुलसी का पेड़ है और पंजतारे का भी। वहां हम चांदनी रातों में एक दूसरे के हाथ में हाथ दिये घंटों चुप-चाप बैठे रहेंगे और उस आने वाले बच्चे की कल्पना करेंगे जिसकी सुगंधी में तुलसी का पौदा महकता है। मैं जलसे से निपट कर ६ बजे तक अवश्य ओडियन सिनेमा के दरवाज़े पर पहुंच जाऊंगी, मेरा इन्तज़ार करना।

"तड़ाख़!"

प्रतिमा गंगोली

गुज़र भी जा कि तेरा इन्तज़ार कब से है।

यह हम दोनों का बेटा है। हम दोनों निर्धन हैं। इसके लिए कुछ नहीं कर सके। लेकिन इस बेटे का भविष्य बहुत धनवान है क्योंकि यह उस युग का बेटा है जो हमारी आशाओं की किरण है। वह कांपती हुई प्रसन्नता की किरण सामने से आ रही है.........गुज़र भी जा कि तेरा इन्तज़ार कब से है।

"तड़ाख़!"

पालिश वाला

मेरा कोई नाम नहीं है। मेरे बाप का कोई नाम नहीं है। मेरी मां का कोई नाम नहीं है। मैं कलकत्ता की अँधेरी गलियों की पैदावार हूँ। मैं निर्धनता और पूंजीवाद के आतशिक की संतान हूँ। यह आतशिक आज भी कलकत्ते की आत्मा को एक जोंक की तरह चूस रही है। मैं बूट पालिश करता हूं। लोग चेहरे चमकाते हैं, मैं बूट चमकाता हूं। लोग चेहरे पढ़ते हैं मैं बूट पढ़ता हूं। मैं ठोकरों में रहता हूं। फुट-पाथ पर सोता हूं और होटलों का झूठा खाना खाता हूं।

मेरा कोई नाम नहीं है। वास्तव में मैं यूं ही इन लड़कियों को बचाने आ गया था। मुझे इस जलूस का कुछ ज्ञान नहीं है कि यह क्या है? किधर जा रहा है? मैं बस इतना जानता हूँ कि जब स्त्री पर गोली चलती है तो पुरुष सामने आ जाता है। क्योंकि स्त्री पुरुष की मां है और मां को बचाना हर बेटे का कर्तव्य है, चाहे उस बेटे को कोई मां अपना बेटा कहकर न पुकारे।

मेरा कोई नाम नहीं है। मैं शायद वह मामूली बेनाम कवि हूं जो हर शताब्दी में अत्याचार के विरुद्ध लड़ता हुआ मारा गया है। मैं शायद वह बेनाम सिपाही हूं जो हर महाज़ पर, हर मोरचे पर, हर युद्ध भूमि में अमर हुआ है। मैं शायद वह महापुरुष हूं जिसके देवताओं-जैसे सदाचारी और मेहनती हाथों में क्रांति की पताका लहराती है।

मेरा कोई नाम नहीं। मैं शायद यहां अपनी मां को ढूंढ़ने आया था।

"तड़ाख!"

चीनी बूढ़े की दुकान में नीलिमा ने लतिका का सिर अपनी गोद में लेकर पूछा "अब कैसी हो लतिका?"

लतिका के चेहरे पर चाची ऐसी मुस्कराहट आई, बोली "अच्छी हूं, पेट में मामूली सा दर्द है।"

रज़िया ने कहा "अभी एम्बोलैंस आती होगी। बूढ़े चीनी ने, भगवान उसका भला करे, अभी एम्बोलैंस के लिए टैलीफ़ोन किया है।"

बूढ़ा चीनी इतने में दुकान के भीतर से एक रोटी ले आया। बोला, "इस रोटी को पेट पर रख दो।"

रज़िया बोली "इससे क्या होगा ?"

बूढ़ा हाथ मलते हुए बोला "इससे कुछ नहीं होगा, लेकिन मैं क्या करूँ...क्या करूँ...कुछ समझ में नहीं आता।"

रज़िया बोली "चुपके बैठे रहो, एम्बोलैंस आती होगी।"

बूढ़ा थोड़ी देर के लिए चुप रहा। फिर कहने लगा "यह च्यांग... यह सब उसी च्यांग की बदमाशी है। मैं सब जानता हूँ।"

रज़िया ने कहा "कैसी बावलों की सी बातें कर रहे हो, यहाँ कहाँ तुम्हारा च्यांग आ गया ?"

बूढ़ा चीनी हाथ मलते हुए बोला "वही होगा! तुम नहीं जानतीं। मैं सारी दुनिया में घूमा हूं। हर देश में च्यांग है, छोटा च्यांग, फिर उससे बड़ा च्यांग, फिर उससे भी बहुत बड़ा च्यांग..." चीनी बूढ़े ने हाथ फैलाकर बहुत बड़े च्यांग का डील-डौल बताते हुए कहा "और ये सब च्यांग मिलकर हमें लूटते हैं, हम पर गोली चलाते हैं।"

बूढ़ा चुप हो गया। लतिका धीरे-धीरे कराहती रही.. ...कान में क्लाक टिक्-टिक् करता रहा।

बूढ़ा फिर बोला "इन सब च्यांगों को खत्म करना होगा। और कोई दूसरा रास्ता नहीं है। केवल पीपिंग का रास्ता है जहां हमारी फौजें खुशी के शादियाने बजाती हुई दाखिल हुई हैं" यह कहते-कहते बूढ़े के शोकातुर चेहरे पर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। पीपिंग का नाम सुनकर लतिका के चेहरे पर एक विचित्र-सी मुस्कराहट आई। बोली "अब कितनी देर है ?"

रज़िया बोली "आ रही है......लो वह आगई।"

एक एम्बोलैंस दुकान के सामने आकर रुकी।

रज़िया ने कहा "लतिका! तुम घबराओ नहीं। अब तुम बच जाओगी।"

लतिका ने बड़े संतोष के साथ कहा "हाँ, मैं जानती हूँ, मैं नहीं मरूँगी।"

एम्बोलैंस लतिका को लेकर चल दी।

रज़िया ने गिरा हुआ झंडा उठा लिया। यह झंडा इतना लाल क्यों था? क्यों इतना चमक रहा था? उस चमक में इतना भरपूर क्रोध क्यों था? उस काली-भुजंग औरत ने उम्मिया घोष की लाश को अपने कंधे पर उठा लिया। चार मज़दूर स्त्रियों ने उस नौजवान लड़के की लाश को अपने हाथों में उठा लिया। बाकी लाशें भी उठा ली गईं। जलूस फिर धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। दुकाने खुलती गईं। लोग क्रोध में बातें करने लगे। जलूस बढ़ता गया और बड़ा होता गया। झंडा वायु में खुलता गया। जैसे कलकत्ते की जकड़ी हुई आत्मा अपनी बेड़ियां काटकर उस जलूस में शामिल हो रही हो। लोग-बाग दस, बारह, पन्द्रह, बीस, सौ, हज़ार-हज़ार की गिनती में आकर उस जलूस में मिलते गये और जोशीले नारे—घृणा और क्रोध से भरे हुए नारे—लगाते गये। अब किसी को गोली का, दफ़ा १४४ का, भय नहीं रहा। स्त्रियों ने शहीदों का रक्त अपने माथे पर लगा लिया और छाती तानकर आगे बढने लगीं और पुलिस के सिपाही पीछे हटने लगे। जलूस आगे बढ़ता गया—कलकत्ते के बाज़ारों में, कलकत्ते की गलियों में, कलकत्तेके कूचों में। लोग सिनेमा-घरों में से निकल आये। कारखानों में से निकल आये। क्लर्क, विद्यार्थी, दुकानदार, मज़दूरों के नेतृत्व में आगे बढ़ते गये। जलूस आगे बढ़ता गया—जेलखाने की ओर। अब जनता बाहर निकल आई थी और ज़ालिम धरती के नीचे खंदकों में छुप गये थे।

एम्बोलैंस भागी जा रही थी। उसका भोंपू ज़ोर-ज़ोर से बार-बार भिझाहट से चिल्लाता और हर बार लतिका को उस आवाज़ से अत्यन्त कष्ट होता! यह शोर किसलिए है? यह मेरे पेट में एकाएक हज़ारों गोलियां-सी क्यों चलने लगी हैं। ये शोले क्यों रग-रग में और नस-नस में भड़क रहे हैं? ये नश्तर से क्या चल रहे हैं, जैसे कोई शरीर के हर अंग को गोदे डालता हो। दर्द की लहरें पेट में उठती हैं, घूमती हैं। भंवर, दायरे, आग के शोले, भूचाल, जलता हुआ लावा, मेरे राम! क्या इसी को मृत्यु कहते हैं जैसे शरीर के हर अंग में छाले उबल आयें।

एम्बोलैंस भागी जा रही थी। उसकी लोहे की जालियों के बाहर जीवन था। लतिका ने अभिलाषा पूर्ण नज़रों से बाहर झांका। एम्बोलैंस एक पांच मंजिला इमारत के सामने से गुज़र रही थी। लतिका ने देखा, खिड़कियों में रंगीन पर्दे लहरा रहे थे। दो लड़के सिग्रेट पीते हुए बालकोनी पर झुके हुए हँस रहे थे...एक दर्ज़ी गुलाबी साटन का ब्लाऊज़ सी रहा है...मां बच्चे को लिए खिड़की में खड़ी है। बच्चा ठुमकता है और मुस्करा देता है...ऊपर आकाश गहरा नीला है—लतिका ने आंखें बन्द कर लीं। जैसे उसके मरते हुए शरीर और आत्मा को शांति मिल गई और उसके दिल में शांति की घंटियां बजने लगीं। मृत्यु कुछ नहीं है। जीवन ही सब कुछ है। मृत्यु कुछ नहीं है, बच्चे की मुस्कराहट ही सब कुछ है। इस एक क्षण में लतिका ने दूर खिड़की में खड़ी हुई मां की गोद में से जैसे उस बच्चे को अपनी गोद में ले लिया और उसे चूमकर उसी क्षण उसकी माँ के हवाले कर दिया। जीवन से मृत्यु और मृत्यु से फिर जीवन की ओर...

लतिका सेन अपने जीवन के अंतिम क्षणों में भी ऊषा की पहली किरण की तरह मुस्कराई।

मोर्ग

मोर्ग में छः लाशें पड़ी थीं!

१—लतिका सेन !

२—उर्म्मिया घोष !

३. प्रतिभा गंगोली !

४. गीता सरकार !

५. मनोरमा !

६. एक बेनाम लड़का !

ये छः की छः लाशें मोर्ग में नंगी पड़ी थीं। उनके शरीर पर कोई कपड़ा न था और मोर्ग के कर्मचारी, मनुष्य के भेष में चीलें और गिध, जो सड़े हुए समाज के भीतर सड़े हुए मांस का व्यापार करते हैं। उन लाशों के सम्बंध में अपने विशेष गन्दे घिनावने ढङ्ग में बातें कर रहे थे, मज़ाक़ कर रहे थे, उन्हें अपने गंदे व्यंग का निशाना बना रहे थे।

"साली अच्छी है।"

Discovery of India.

"कैसी गोल-गोल और गुलगुली है।"

Bardoli

"ज़रा इसका शरीर तो देखो, हाय ! क्या मास्टरपीस लौंडिया है।"

My Experiments with Truth.

"इसका मांस अभी तक गरम और नरम है।"

Satyameva Jayate.

नीलिमा ने जो अब अपनी नर्स की ड्यूटी पर वापस आ गई थी, नज़र ऊपर उठाकर देखा। आकाश नंगा था। धरती नंगी थी, सूरज की किरनें नंगी थीं और सीता और सावित्री के शरीर नंगे थे और मोर्ग से बहुत दूर कहीं हज़ारों मील परे वाल्ड रूफ़ एस्टोरिया होटल के शानदार लाऊंज में मिसेज़ विजय लक्ष्मी पण्डित कह रही थीं, "भारत में समाजवाद कभी नहीं आ सकता और इस बात का प्रमाण यह है कि भारत की केन्द्रीय एसम्बली में समाजवादियों का एक भी प्रतिनिधि नहीं है।" समाजवादियों के प्रतिनिधि बेशक केन्द्रीय

एसम्बली में नहीं हैं लेकिन वे यहाँ कलकत्ते की मोर्ग में अवश्य मौजूद हैं। कलकत्ते की जेलों में क़ैद हैं। फांसी के तख़्ते पर लटक रहे हैं। वाल्ड रूफ़ एस्टोरिया होटल का अमरीकी स्वायर बहुत सुन्दर है। लेकिन भारत के भाग्य का फ़ैसला अब ये होटल और ये कोठियाँ नहीं करेंगी। नीलिमा ने सोचा, आज भारत के भाग्य का फ़ैसला कलकत्ते के मोर्ग में हो रहा है। कलकत्ते की जेलों में हो रहा है। कलकत्ते की सड़कों पर हो रहा है। उस समय नीलिमा का जी चाहा कि वह हज़ारों मील दूर बैठी हुई मिसेज़ पण्डित को पुकार-पुकार कर कहे, आओ और देखो कि भारत की इस खुली केन्द्रीय एसम्बली में जो भारत की सड़कों, मिलों, चालों और आंगनों में हो रही है, समाजवादियों का कोई प्रतिनिधि मौजूद है या नहीं ?

नीलिमा ने उन पांचों लाशों की ओर पुनः देखा।

पवित्र नंगी लाशें, जैसे उज्ज्वल ज्वाला, भड़कता हुआ नंगा शोला, उत्पत्ति की तड़पती हुई बिजली ! जैसे इनक़लाब अपने रक्त से हँस दे और जलते हुए, सुलगते हुए अंगारे फूल बन जायें !!

बहुत देर तक ये लाशें नंगी पड़ी रहीं।

बहुत देर तक मोर्ग के कर्मचारी उनका मज़ाक उड़ाते रहे।

बहुत देर तक नीलिमा, नीलिमा औरत और नीलिमा उस हस्पताल की नर्स मोर्ग के कर्मचारियों को उन लाशों को ढक देने के लिए कहती रही।

बहुत देर तक वे लोग मज़ाक उड़ाते रहे और मज़ाक ही मज़ाक में बात को टालते रहे।

नीलिमा, नाज़ुकमिज़ाज नीलिमा का चेहरा एकाएक क्रोध से लाल होगया। उसकी मुट्ठियाँ तन गईं और उसने बेधड़क दोनों हाथों से अपनी साढी खोल डाली और उसे उन लाशों पर डाल दिया।

अब वह सब के सामने नंगी खड़ी थी लेकिन किसमें साहस था

जो उस समय उससे आँख मिला सके। वह उस समय शिवजी की तीसरी आँख थी। जिसे देखती भस्म कर डालती। एक-एक करके मोर्ग के सारे कर्मचारी वहाँ से खिसक गये। पुलिस के सिपाही भी लज्जित होकर वहाँ से चले गये। अब वहाँ कोई न था। केवल नीलिमा शहीदों की लाशों पर पहरा दे रही थी।

इतने में कुछ लोग श्वेत चादरें ले आये।

रात बहुत गहरी हो चुकी थी, लेकिन आज कलकत्ता सोया न था। लोग गलियों और बाज़ारों में क्रोध से भरे घूम रहे थे। कहीं छुटकारा न था। कोई इस क्रोध और घृणा के भाव से भागकर कहीं पनाह न ले सकता था। पूंजीवाद की बढ़ती हुई भेद भावना ने धोखे और आत्मप्रवंचना के समस्त रास्ते बन्द कर दिये थे। नीलिमा तेज़-तेज़ कदमों से गुज़रते हुए यह सब कुछ सोच रही थी और देख रही थी कि आज कलकत्ते के लोग पागल से होकर अपनी बेचैन मुट्ठियों को बार-बार भींचते हैं और इनक़लाबी गीत गाते हुए गली-कूचों में जनता के शत्रुओं को ढूँढ रहे हैं।

चाची कितने समय से बालकोनी पर खड़ी ब्रह्मपुत्र के चढ़ते हुए पानी को देख रही थी। मुन्ना अभी तक सोया न था। वह भी आज बेकरार था, बेचैन था, और उसे मालूम नहीं था कि कौन सी चीज़ है जो उसे यों बेचैन कर रही है। गलियों और कूचों और बाज़ारों में नारे गूंज रहे थे। कभी कहीं कोई धमाका होता और कभी कहीं ज़ोर की चीख़ें सुनाई देतीं। तेज़-तेज़ क़दमों से भागने की आवाज़ आती और फिर नारों के तूफ़ान के बाद एकाएक सन्नाटा छा जाता।

एक ऐसे ही सन्नाटे के क्षण में नीलिमा लतिका के घर में प्रविष्ट हुई। चाची ने सीढ़ियों की बत्ती जलाई और नीलिमा को देखते ही उसके चेहरे को पढ़ लिया क्योंकि चाची ने जीवन में आँसू ही बोये थे और आँसू ही काटे थे और वह इस फ़सल को अच्छी तरह पहचानती थीं।

नीलिमा चाची को अलग ले आकर कुछ बात करने लगी। चाची ने उसे हाथ के संकेत से रोक दिया। कहने लगीं "कुछ न कहो, तुम्हारे चेहरे ने मुझे सब कुछ बता दिया है। यह बताओ कि वह इस समय है कहां ?"

नीलिमा ने रुँधे हुए गले से कहा "शहर से आठ दस मील दूर एक पुराने घाट की चिता में।"

चाची की आँखों की शोकातुर पुतलियाँ क्षणभर के लिए ज़ोर से कांपी। फिर एकदम ठिठक गईं। उन्होंने सीढ़ियों के जंगले को ज़ोर से पकड़ लिया।

मुन्ने ने पूछा "माँ कहाँ है ?"

नीलिमा ने कहा "माँ नहीं आयेगी।"

मुन्ने ने पूछा "माँ क्यों नहीं आयेगी ?"

नीलिमा ने बड़ी कठिनता से कहा "माँ बहुत दूर चली गई है।"

चाची रोते-रोते बोलीं "कहाँ हो तुम महाकवि ठाकुर ! तुमने "नन्हा चाँद" लिखा था जिसमें बच्चे खो जाते हैं और मायें उन्हें जूही के फूलों में तलाश करती हैं। आज कलकत्ते में मायें जूही के फूल बन गई हैं और नन्हे-नन्हे बच्चे उन्हें कलकत्ते की गलियों में ढूँढ रहे हैं। कहाँ हो तुम महाकवि ठाकुर ?"

मुन्ना धीरे से चाची के पास चला गया। बोला "चाची तू रोती क्यों है ? मैं जानता हूं माँ कहाँ गई है।"

'कहाँ ?"

'वह यू जी हो गई हैं। जैसे मेरे पिता यू जी हो गए हैं। फिर एक दिन मैं भी बड़ा होकर यू जी हो जाऊँगा और अत्याचार के विरुद्ध लडूँगा। रो नहीं चाची।" नीलिमा ने अपने बहते हुए आँसू पोंछे बिना मुन्ने के हाथ में लतिका का खरीदा हुआ बाजा थमा दिया।

बाजे को देखकर मुन्ने को ऐसा मालूम हुआ जैसे वह अपनी माँ के मुस्कराते हुए चेहरे को देख रहा हो। और जब उसने बाजे को ओठों से लगाया तो नीलिमा को ऐसा मालूम हुआ कि लतिका अपने ममता भरे ओठों से अपने प्यारे बच्चे को चूम रही है।

बाहर तूफ़ान गरज रहा है।

भीतर मुन्ना बाजा बजा रहा है।

: ३ :

महालक्ष्मी का पुल

महालक्ष्मी स्टेशन के उस पार लक्ष्मीजी का एक मन्दिर है इस मन्दिर में पूजा करने वाले हारते अधिक हैं और जीतते बहुत कम हैं। महालक्ष्मी स्टेशन के उस पार एक बहुत बड़ा गंदा नाला है जो मनुष्य के शरीर की गंदगी को अपने बदबूदार पानी में घोलता हुआ शहर से बाहर चला जाता है। मन्दिर में मनुष्य के मन की मैल धुलती है और गंदे नाले में मनुष्य के शरीर की मैल। और इन दोनों के बीच में महालक्ष्मी का पुल है।

महालक्ष्मी के पुल के ऊपर बाईं ओर लोहे के जंगले पर छः साड़ियां लहरा रही हैं। पुल के उस ओर इस स्थान पर सदैव कुछ एक साड़ियां लहराती रहती हैं। ये साड़ियां कुछ अधिक कीमती नहीं हैं। इनके पहनने वाले भी कुछ अधिक कीमती नहीं हैं। ये लोग प्रतिदिन इन साड़ियों को धोकर सूखने के लिए यहाँ डाल देते हैं और रेलवे लाइन के उस पार जाते हुए लोग, महालक्ष्मी स्टेशन पर गाड़ी की प्रतीक्षा करते हुए लोग, गाड़ी की खिड़की और दरवाज़ों में से झांककर बाहर देखते हुए लोग प्रायः इन साड़ियों को वायु में झूलता हुआ देखते हैं। वे इनके भिन्न-भिन्न रंग देखते हैं। भूरा, गहरा भूरा, मटमैला, नीला, किरमज़ी भूरा, गंदा सुर्ख किनारा, गहरा नीला और लाल। वे लोग प्रायः इन्हीं रंगों को वायु में फैले हुए देखते हैं—एक क्षण के लिए—दूसरे क्षण में गाड़ी पुल के नीचे से गुज़र जाती है।

इन साड़ियों के रंग अब सुन्दर नहीं रहे। किसी समय संभव है जब ये नई खरीदी गई हों इनके रंग सुन्दर और चमकीले हों, लेकिन अब नहीं हैं। धोये जाने से इनकी आब मर चुकी है और अब ये साड़ियाँ अपने फीके दिनचर्या के व्यवहार को लिए बड़ी बेदिली से जंगले पर पड़ी नज़र आती हैं। आप दिन में सौ बार इन्हें देखिये, ये आप को कभी सुन्दर न दीखेंगी। न इनका रंग-रूप अच्छा है न इनका कपड़ा। यह बड़ी सस्ती, घटिया-सी साड़ियाँ हैं। प्रतिदिन धुलने से इनका कपड़ा भी तार-तार हो रहा है। इनमें कहीं-कहीं छिद्र भी नज़र आते हैं। कहीं उधड़े हुए टांके हैं, कहीं बदनुमा चितले दाग़ जो ऐसे पायेदार हैं कि धोये जाने से भी नहीं धुलते बल्कि और गहरे होते जाते हैं। मैं इन साड़ियों के जीवन को जानता हूं क्योंकि मैं इन लोगों को जानता हूं जो इन साड़ियों को इस्तेमाल करते हैं। ये लोग महालक्ष्मी के पुल के निकट ही बाईं ओर आठ नम्बर की चाल में रहते हैं। यह चाल मतवाली नहीं है। बड़ी निर्धन सी चाल है। मैं भी इसी चाल में रहता हूं। इसलिए आपको इन साड़ियों और इनके पहनने वालों के सम्बन्ध में सब कुछ बता सकता हूँ। अभी प्रधान मंत्री की गाड़ी आने में बहुत देर है। आप इन्तज़ार करते-करते उकता जायेंगे। इसलिए यदि आप इन छः साड़ियों के जीवन के बारे में मुझ से कुछ सुन लें तो समय आसानी से कट जायेगा।

इधर यह जो भूरे रंग की साड़ी लटक रही है यह शांता बाई की साड़ी है। इसके निकट जो साड़ी लटक रही है वह भी आपको भूरे रंग की दिखाई देती होगी लेकिन वह तो गहरे भूरे रंग की है। आप नहीं, मैं इसका गहरा भूरा रंग देख सकता हूं क्योंकि मैं इसे उस समय से जानता हूं जब इसका रङ्ग चमकता हुआ गहरा भूरा था। अब इस दूसरी साड़ी का रङ्ग भी वैसा ही भूरा है जैसा शान्ता बाई की साड़ी का। और शायद आप इन दोनों साड़ियों में बड़ी कठिनता से कोई फ़र्क महसूस कर सकें। मैं भी जब इनके पहनने वालों के जीवन

देखता हूं तो बहुत कम फ़र्क़ महसूस करता हूँ। लेकिन ये पहली साड़ी जो भूरे रङ्ग की है वह शान्ता बाई की साड़ी है और जो दूसरी भूरे रंग की साड़ी है और जिसका गहरा भूरा रंग केवल मेरी आंखें देख सकती हैं वह जीवना बाई की साड़ी है।

शान्ता बाई का जीवन भी इस की साड़ी के रंग की तरह भूरा है। शान्ता बाई बरतन मांजने का काम करती है। इसके तीन बच्चे हैं। एक बड़ी लड़की है। दो छोटे लड़के हैं। बड़ी लड़की की आयु ६ वर्ष की होगी। सब से छोटा लड़का दो वर्ष का है। शान्ता बाई के पति स्पून मिल के कपड़ खाते में काम करता है। उसे बहुत सवेरे जाना होता है इसलिये शांता बाई अपने पति के लिये दूसरे दिन की दोपहर का खाना रात ही को पका रखती है। क्योंकि प्रातः स्वयं उसे भी बरतन साफ़ करने के लिये और पानी ढोने के लिए दूसरे घरों में जाना होता है और अब वह अपने साथ अपनी ६ वर्ष की बच्ची को भी ले जाती है और फिर दोपहर को लौटती है। वापस आकर वह नहाती है और अपनी साड़ी धोती है और उसे सुखाने के लिए पुल के जङ्गले पर डाल देती है और फिर एक बहुत ही मैली पुरानी धोती पहन कर खाना पकाने में जुट जाती है। शांता बाई के घर चूल्हा उसी समय सुलग सकता है जब दूसरों के यहां चूल्हें ठंडे हो जायें। अर्थात् दोपहर को दो बजे और रात को नौ बजे। इस समय के इधर और उधर उसे दोनों समय घर से बाहर बर्तन मांजने और पानी ढोने का काम करना होता। अब तो छोटी लड़की भी उसका हाथ बटाती है। शांता बाई बर्तन साफ़ करती है, छोटी लड़की उन्हें धोती जाती है। दो तीन बार ऐसा भी हुआ कि छोटी लड़की के हाथ से चीनी के बर्तन गिर कर टूट गये। अब मैं जब कभी छोटी लड़की की आंखें सूजी हुई और उसके गाल सुर्ख़ देखता हूं तो समझ जाता हूं कि किसी बड़े घर में चीनी के बर्तन टूटे हैं। उस दिन शांता भी मेरी नमस्ते का उत्तर नहीं देती। जलती, भुनती, बड़बड़ाती चूल्हा सुलगाने

मे व्यस्त हो जाती है और चूल्हे में से आग कम और धुआँ अधिक निकालने मे सफल हो जाती है। छोटा लड़का जो दो वर्ष का है धुएं से अपना दम घुटता देख कर चीख़ता है तो शांता बाई इसके चीनी ऐसे कोमल गालों पर ज़ोर-ज़ोर से चपतें लगाने लगती है इस पर बच्चा और अधिक चिल्लाता है। यों तो यह दिन भर रोता रहता है क्योंकि इसे दूध नहीं मिलता और इसे अक्सर भूख लगी रहती है और दो वर्ष की आयु में ही इसे बाजरे की रोटी खानी पड़ती है। इसे अपनी मां का दूध दूसरे बहिन-भाइयों की तरह केवल पहले छः माह प्राप्त हुआ, वह भी बड़ी मुश्किल से। फिर यह भी खुश्क बाजरे और ठंडे पानी पर पलने लगा। हमारी चाल के सारे बच्चे इसी खुराक पर पलते हैं। वे दिन भर नंगे रहते हैं और रात को गुदड़ी ओढ़ कर सो जाते हैं। सोते में भी वे भूखे रहते हैं और जागते में भी भूखे रहते हैं। और जब शांता बाई के पति की तरह बड़े हो जाते हैं तो दिन भर खुश्क बाजरा और ठंडा पानी पी-पी कर काम करते जाते हैं। और उनकी भूख बढ़ती जाती है और हर समय पेट के भीतर और दिल और मस्तिष्क के भीतर एक बोझल सी धमक महसूस करते रहते हैं और जब पेगार (वेतन) मिलती है तो इन में से कई एक सीधे ताड़ी-खाने का रुख करते हैं। ताड़ी पीकर कुछ घंटों के लिये यह धमक गायब हो जाती है, लेकिन मनुष्य सदैव तो ताड़ी नहीं पी सकता। एक दिन पियेगा, दो दिन पियेगा, तीसरे दिन की ताड़ी के लिये पैसे कहाँ से लायेगा? आख़िर खोली का किराया देना है। राशन का खर्चा है, भाजी-तरकारी है, तेल और नमक है, बिजली और पानी है। शांता बाई की भूरी साड़ी है जो छठे सातवें महीने तार-तार हो जाती है। सात मास से अधिक यह कभी नहीं चलती। यह मिल वाले भी पांच रुपये चार आने में कैसी खद्दी निकम्मी साड़ी देते हैं। इनके कपड़े में ज़रा जान नहीं होती। छठे मास से जो फटना शुरू होता है तो सातवें मास बड़ी कठिनता से, सी जोड़ कर, टांके लगाकर काम देता है

और फिर वही पांच रुपये चार आने ख़र्च करने पड़ते हैं और वही भूरे रंग की साड़ी आ जाती है। शांता को यह रंग बहुत पसंद है। इस-लिये कि यह मैला बहुत देर में होता है। इसे घरों में झाड़ू देनी होती है, बर्तन साफ़ करने पड़ते हैं। तीसरी-चौथी मंजिल तक पानी ढोना होता है। वह भूरा रंग पसंद नहीं करेगी तो क्या खिलते हुए शोख़ रंग—गुलाबी, बसंती, नारंगी पसंद करेगी? वह इतनी मूर्ख नहीं है। वह तीन बच्चों की मां है।

लेकिन कभी उसने ये शोख़ रंग भी देखे थे, पहने थे। इन्हें अपने धड़कते हुए दिल के साथ प्यार किया था। जब वह धारावार में अपने गांव में थी, जब उसने बादलों में शोख़ रंगों वाली धनुष देखी थी। जहां मीलों उसने शोख़ रंग नाचते हुए देखे थे, जहाँ उसके बाप के धान के खेत थे; ऐसे शोख़ हरे-हरे रंग के खेत और आंगन में पीलू का पेड़ जिसके डल-डाल से वह पीलू तोड़-तोड़ कर खाया करती थी। जाने अब पीलुओं में वह मज़ा ही नहीं है। वह मिठास और घुलावट ही नहीं है। वह रंग, वह चमक-दमक जा कर कहां मर गई? वे सारे रंग एकाएक क्यों भूरे हो गये? शांता बाई कभी बर्तन मांजते-मांजते, खाना पकाते, अपनी साड़ी धोते, उसे पुल के जंगले पर लाकर डालते हुए यह सोचा करती है। और उसकी भूरी साड़ी से पानी के क़तरे आँसुओं की तरह रेल की पटरी पर बहते जाते हैं और दूर से देखने वाले लोग एक भूरे रंग की कुरूप स्त्री को पुल के ऊपर जंगले पर एक भूरी साड़ी को फैलाते देखते हैं और बस, दूसरे क्षण में गाड़ी पुल के नीचे से गुज़र जाती है।

जीवना बाई की साड़ी जो शांता बाई की साड़ी के साथ लटक रही है गहरे भूरे रंग की है। देखने में इसका रंग शांता बाई की साड़ी से भी फीका नज़र आयेगा लेकिन अगर आप इसे ध्यान से देखें तो इस फीकेपन के बावजूद यह आपको गहरे भूरे रंग की नज़र आयेगी। यह साड़ी भी पांच रुपये चार आने की है और बहुत बोसीदा है। दो एक

स्थान से फटी हुई थी लेकिन अब वहाँ पर टाँके लग गये हैं। और इतनी दूर से मालूम भी नहीं होते। हाँ, आप वह बड़ा टुकड़ा अवश्य देख सकते हैं जो गहरे नीले रंग का है और इस साड़ी के बीच में जहाँ से यह साड़ी बहुत फट चुकी थी, लगाया गया है। यह टुकड़ा जीवना बाई की इससे पहली साड़ी का है और दूसरी साड़ी को मज़बूत बनाने के लिये इस्तेमाल किया गया है। जीवना बाई विधवा है इसलिये वह सदैव पुरानी चीज़ों से नई चीज़ों को मज़बूत बनाने के ढंग सोचा करती है। पुरानी यादों से नई यादों की कटुता को भूल जाने का यत्न किया करती है। जीवना बाई अपने उस पति के लिये रोती रहती है जिस ने एक दिन नशे में इसे पीटा था और इतना पीटा था कि इसकी आँख कानी कर डाली थी। वह इसलिये नशे में था कि वह उस दिन मिल से निकाला गया था। बूढ़ा ढोंढू, अब मिल में किसी काम का नहीं रहा था। यद्यपि वह बहुत तजुर्बेकार था लेकिन उसके हाथों में इतनी शक्ति न रही थी कि वह जवान मज़दूरों का मुकाबला कर सकता। बल्कि अब तो उसे दिन-रात खांसी रहने लगी थी। कपास के नन्हें-नन्हें रेशे उसके फेफड़ों में जाकर इस बुरी तरह धँस गये थे जैसे चर्खियों और अंटियों में सूत के छोटे-छोटे महीन धागे फंस जाते हैं। जब बरसात आती तो ये नन्हें-नन्हें रेशे उसे दमे में ग्रस्त कर देते और जब बरसात न होती तो वह दिन भर और रात भर खांसता रहता। एक खुश्क, निरंतर खंकार घर में और कारखाने में, जहाँ वह काम करता था, सुनाई देती रहती। मिल के मालिक ने इस खांसी की खतरनाक घंटी को सुना और ढोंढू को मिल से निकाल दिया और फिर ढोंढू उसके छः मास बाद मर गया। जीवना बाई को उसके मरने का बहुत शोक हुआ। क्या हुआ यदि क्रोध में आकर एक दिन उसने जीवना बाई की आंख निकाल ली। तीस वर्ष का गृहस्थ-जीवन एक क्षण पर तो न्यौछावर नहीं किया जा सकता। और उसका क्रोध था भी यथोचित। यदि मिल मालिक ढोंढू को यों निर्दोष नौकरी से अलग न करता तो क्या जीवना की आंख

निकल सकती थी ? ढोंढू ऐसा न था। उसे अपनी बेकारी का दु:ख था। अपनी पैंतीस वर्षीय नौकरी से हटाये जाने का शोक था और सब से अधिक दु:ख उसे इस बात का था कि मिल मालिक ने चलते समय उसे एक धेला भी न दिया था। पैंतीस वर्ष पहले ढोंढू जैसे खाली हाथ मिल मे काम करने आया था उसी प्रकार खाली हाथ वापिस लौटा। और दरवाज़े से बाहर निकलने पर और अपना नम्बरी कार्ड पीछे छोड़ आने पर उसे एक धचका सा लगा। बाहर आकर उसे ऐसा मालूम हुआ जैसे इन पैंतीस वर्षों में किसी ने उसका सारा रंग, उस का सारा रक्त, उसका सारा रस चूस लिया हो और उसे बेकार समझ कर बाहर कूड़े-करकट के ढेर पर फैंक दिया हो। और ढोंढू बड़े आश्चर्य से मिल के दरवाज़े को और उस बड़ी चिमनी को देखने लगा जो बिल्कुल उसके सिर पर एक भयानक देव की तरह आकाश से लगी खड़ी थी। एकाएक ढोंढू ने क्रोधवश अपने हाथ मले। ज़मीन पर ज़ोर से थूका और फिर ताड़ीखाने में चला गया।

लेकिन जीवना की आंख जब भी न जाती—यदि उसके पास इलाज के लिए पैसे होते। वह आंख तो गल-गल कर, सड़-सड़ कर, फ्री-अस्पतालों में डाक्टरों और कम्पौंडरों और नर्सों की लापरवाहियों और गालियों का शिकार हो गई। और जब जीवना अच्छी हुई तो ढोंढू बीमार पड़ गया और ऐसा बीमार पड़ा कि फिर बिस्तर से न उठ सका। उन दिनों जीवना उसकी देख-रेख करती थी। शांता बाई ने सहायता के तौर पर उसे कुछ घरों में बरतन साफ़ करने का काम दिलवा दिया था और यद्यपि अब वह बूढ़ी थी और बरतनों को अच्छी तरह साफ़ न कर सकती थी फिर भी वह धीरे-धीरे रेंग रेंग कर अपने निर्बल हाथों की झूठी ताकत के बोदे सहारे पर जैसे तैसे काम करती रही। सुन्दर वस्त्र पहनने वाली, सुगंधित तेल लगाने वाली पत्नियों की गालियाँ सुनती रही और काम करती रही क्योंकि उसका ढोंढू बीमार था और उसे अपने आपको और अपने पति को जीवित रखना था।

लेकिन ढोंढू जीवित न रहा। और अब जीवना बाई अकेली थी। यह भी अच्छा ही था कि वह बिल्कुल अकेली थी और अब उसे केवल अपना ही पेट पालना था। विवाह के दो वर्ष बाद उसके यहां एक लड़की उत्पन्न हुई लेकिन जब वह जवान हुई तो किसी बदमाश के साथ भाग गई और आज तक उसका किसी को पता न चला कि वह कहां है। फिर किसी ने बताया और फिर बाद में बहुत से लोगों ने बताया कि जीवना बाई की बेटी फ़ारस रोड पर चमकीला-भड़कीला रेशमी लिबास पहने बैठी है। लेकिन जीवना को विश्वास न हुआ। उसने अपना सारा जीवन पांच रुपये चार आने की धोती पहने व्यतीत कर दिया था और उसे विश्वास था कि उसकी बेटी भी वैसाही करेगी। वह ऐसा नहीं करेगी, इसका उसे कभी ख्याल तक न आया था। वह कभी फ़ारस रोड नहीं गई क्योंकि उसे इस बात का विश्वास था कि उसकी बेटी वहाँ नहीं है। भला उसकी बेटी वहाँ क्यों जाने लगी; यहां अपनी खोली में क्या नहीं था? पांच रुपये चार आने वाली धोती थी। बाजरे की रोटी थी। ठंडा पानी था। सूखी मर्यादा थी। ये सब कुछ छोड़कर वह क्यों फ़ारस रोड जाने लगी। उसे तो कोई बदमाश चकमा देकर ले गया था। क्योंकि स्त्री प्रेम के लिए सब कुछ कर गुज़रती है। स्वयं वह तीस वर्ष पूर्व अपने ढोंढू के लिए अपने मां बाप का घर छोड़कर नहीं चली आई थी? हाँ जिस दिन ढोंढू मरा और जब लोग उसकी लाश को जलाने के लिए ले जाने लगे और जीवना ने अपनी सेंदूर की डिबिया अपनी बेटी की अंगिया पर उंडेल दी जो उसने एक समय से ढोंढू की नज़रों से छुपा कर रखी हुई थी—ठीक उसी समय एक भारी भरकम स्त्री बड़ा चमकीला लिबास पहने उससे आकर लिपट गई और फूट-फूट कर रोने लगी और उसे देख कर जीवना को विश्वास हो गया कि जैसे उसका सब कुछ मर गया है। उसका पति, उसकी बेटी, उसकी इज़्ज़त। जैसे वह जीवन भर रोटी नहीं गंदगी खाती रही है। जैसे उसके पास कुछ नहीं था। शुरू ही से कुछ नहीं था।

पैदा होने से पूर्व ही उससे सब कुछ छीन लिया गया था। उसे निहत्था, नंगा और बेइज़्ज़त कर दिया गया था। और जीवना को उसी एक क्षण मे ऐसा लगा कि वह जगह जहाँ उसका पति जीवन भर काम करता रहा और वह जगह जहाँ उसकी आंख अंधी हो गई, और वह जगह जहाँ उसकी बेटी अपनी दुकान सजा कर बैठ गई एक बहुत बड़ा अंधा कारखाना है जिसमें कोई ज़ालिम हाथ मानव-शरीरों को पकड़ कर ईख का रस निकालने वाली चर्खी में ठोंसता चला जाता है और दूसरे हाथ से तोड़ मरोड़ कर दूसरी ओर फैंकता जाता है और एकाएक जीवना अपनी बेटी को धक्का देकर अलग खड़ी हो गई और चीख़ें मार मार कर रोने लगी।

तीसरी साड़ी का रंग मटमैला नीला है। यानी नीला भी है और मटियाला भी। कुछ ऐसा अजीब सा रंग है जो बार बार धोने पर भी नहीं निखरता बल्कि और गंदा होता जाता है। यह मेरी पत्नी की साड़ी है। मैं फ़ोर्ट में धन्नू भाई की फ़र्म में क्लर्की करता हूँ। मुझे पैंसठ रुपये वेतन मिलता है। स्पून मिल और बकरिया मिल के मज़दूरों को यही वेतन मिलता है इसलिए मैं भी इन्हीं के साथ आठ नम्बर की चाल की एक खोली में रहता हूँ। लेकिन मैं मज़दूर नहीं हूं, क्लर्क हूँ। मैं फ़ोर्ट में नौकर हूँ। मैं दसवीं पास हूं। मैं टाइप कर सकता हूँ। मैं अंग्रेज़ी में अर्ज़ी लिख सकता हूं। मैं अपने प्रधान-मंत्री का भाषण जलसे में सुनकर समझ भी लेता हूं। आज कुछ देर बाद उनकी गाड़ी महालक्ष्मी पुल पर आयेगी। नहीं, वह रेस कोर्स नहीं जायेंगे; वह समुद्र के किनारे एक शानदार भाषण देंगे। इस अवसर पर लाखों व्यक्ति एकत्रित होंगे। उन लाखों में एक मैं भी हूँगा। मेरी पत्नी को अपने प्रधान-मंत्री की बातें सुनने का बहुत चाव है। लेकिन मैं उसे अपने साथ नहीं ले जा सकता। क्योंकि हमारे आठ बच्चे हैं और घर में हर समय परेशानी सी रहती है। जब देखो कोई न कोई वस्तु कम हो जाती है। राशन तो रोज़ कम पड़ जाता है। अब नल में पानी भी कम

आता है। रात को सोने के लिए जगह भी कम पड़ती है। और वेतन तो इतना कम पड़ता हैं कि महीने में केवल पन्द्रह दिन चलता है। बाकी पन्द्रह दिन सूद ख्वार पठान चलाता है। और वह भी कैसे गालियाँ बकते झकते। घसीट घसीट कर किसी धीमी चाल वाली मालगाड़ी की तरह यह जीवन चलता है।

मेरे आठ बच्चे हैं। लेकिन ये स्कूल में नहीं पढ़ सकते। मेरे पास इनकी फ़ीस के कभी पैसे न होंगे। पहले पहल जब मैंने ब्याह किया था और सावित्री को अपने घर अर्थात् अपनी खोली में लाया था तो मैंने बहुत कुछ सोचा था। उन दिनों सावित्री भी बड़ी अच्छी-अच्छी बातें सोचा करती थी। गोभी के कोमल-कोमल, हरे-हरे पत्तों की तरह प्यारी-प्यारी बातें। जब वह मुस्कराती थी तो सिनेमा की तस्वीर की तरह सुन्दर दीखा करती थी। अब वह मुस्कराहट न जाने कहां चली गई है। उसके स्थान पर एक स्थायी त्यौरी ने ले ली है। वह ज़रा सी बात पर बच्चों को बेतहाशा पीटना शुरू कर देती है और मैं तो कुछ भी कहूँ, जो भी कहूं, कितनी ही नम्रता से कहूँ, वह तो बस काट खाने को दौड़ती है। न जाने सावित्री को क्या हो गया है? न जाने मुझे क्या हो गया है? मैं दफ्तर में सेठ की गालियाँ सुनता हूं। घर पर पत्नी की गालियाँ सहता हूँ और सदैव चुप रहता हूँ। कभी-कभी सोचता हूँ शायद मेरी पत्नी को एक नई साड़ी की आवश्यकता है। शायद इसे केवल एक नई साड़ी ही की नहीं, एक नये चेहरे, एक नये घर, एक नये वातावरण, एक नये जीवन की आवश्यकता है। लेकिन अब इन बातों के सोचने से क्या होता है? अब तो स्वतन्त्रता आ गई है और हमारे प्रधान-मन्त्री ने यह भी कह दिया है कि इस वंश को अर्थात् हम लोगों को अपने जीवन में कोई आराम नही मिल सकता। मैंने सावित्री को अपने प्रधान-मन्त्री का भाषण, जो समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुआ था, सुनाया तो वह उसे सुनकर आग-बगूला हो गई और उसने क्रोध में आकर चूल्हे के निकट पड़ा हुआ एक चिमटा मेरे

सिर पर दे मारा। यह घाव का निशान जो आप मेरे माथे पर देख रहे हैं उसी का निशान है। सावित्री की मटमैली नीली साड़ी पर भी ऐसे कई घावों के निशान हैं लेकिन आप उन्हें देख नहीं सकेंगे। मैं देख सकता हूं।, उनमें से एक निशान तो उसी मूंगिया रंग की जारजट की साड़ी का है जो उसने ओपरा हाउस के निकट भजीमल, भोंदूराम पारचा विक्रेता की दुकान पर देखी थी। एक निशान उस खिलौने का है जो पच्चीस रुपये का था और जिसे देखकर मेरा पहला बच्चा प्रसन्नता से किलकारियां मारने लगा था लेकिन जिसे हम ख़रीद न सके थे और जिसे न पाकर हमारा बच्चा दिन भर रोता रहा था। एक निशान उस तार का है जो एक दिन जब्बलपुर से आया था। जिसमें सावित्री की माँ की सख़्त बीमारी की सूचना थी। सावित्री जब्बलपुर जाना चाहती थी लेकिन हज़ार कोशिश पर भी मुझे किसी से रुपये उधार न मिल सके थे और सावित्री जब्बलपुर न जा सकी थी। एक निशान उस तार का था जिसमें उसकी माँ की मृत्यु की खबर थी। एक निशान...... लेकिन मैं किस-किस निशान का ज़िक्र करूं। इन चतले-चतले, गदले-गदले, गन्दे दाग़ों से सावित्री की पांच रुपये चार आने वाली साड़ी भरी पड़ी है। रोज़-रोज़ धोने पर भी ये दाग़ नहीं छूटते और शायद जब तक यह जीवन रहेगा ये दाग़ यों ही बने रहेंगे। एक साड़ी से दूसरी साड़ी में पहुंचते रहेंगे।

चौथी साड़ी किरमज़ी रंग की है और किरमज़ी रंग में भूरा रंग भी झलक रहा है। यों तो ये सब भिन्न-भिन्न रंगों की साड़ियां हैं लेकिन भूरा रंग इन सबों मे झलकता है। ऐसा मालूम होता है जैसे इन सब का जीवन एक है। जैसे इन सब का मूल्य एक है। जैसे यह सब कभी ज़मीन से ऊपर नहीं उठीं। जैसे इन्होंने कभी ओस में हँसती हुई धनुक, क्षितिज पर चमकती हुई ऊषा, बादलों में लहराती हुई बिजली नहीं देखी। जैसे जो शांताबाई की जवानी है वह जीवना का बुढ़ापा है। वह सावित्री का अधेड़पन है। जैसे यह सब साड़ियां, जीवन, एक

रंग, एक स्तर, एक क्रम लिए हुए हवा में झूलती जाती हैं।

यह किरमज़ी भूरे रंग की साड़ी झब्बू भइये की औरत की है। इस औरत से मेरी पत्नी कभी बात नहीं करती क्योंकि एक तो उसके कोई बच्चा-वच्चा नहीं है और एक ऐसी औरत जिसके कोई बच्चा न हो बड़ी बुरी होती है। और जादू-टूने करके दूसरों के बच्चों को मार डालती है और भूतों को बुलाकर अपने घर में बसा लेती है। मेरी पत्नी कभी उसे मुँह नहीं लगाती। यह औरत झब्बू भइया ने खरीदकर प्राप्त की है। झब्बू भइया मुरादाबाद का रहने वाला है लेकिन बचपन ही से अपना देश छोड़कर इधर चला आया। वह मराठी और गुजराती भाषा में बड़े मज़े से बात-चीत कर सकता है। इसी कारण से उसे बहुत शीघ्र पचार मिल के गन्नी खाते में जगह मिल गई। झब्बू भइया को शुरू ही से ब्याह का बहुत शौक था। उसे बीड़ी का, ताड़ी का, किसी चीज़ का शौक नहीं था, था तो केवल इस बात का कि उसकी शादी शीघ्र से शीघ्र हो जाय। जब उसके पास सत्तर-अस्सी रुपये एकत्रित हो गये तो उसने अपने देश जाने की ठानी ताकि वहां अपनी बिरादरी से किसी को ब्याह लाये। लेकिन फिर उसने सोचा, सत्तर-अस्सी रुपयों से क्या होगा? आने-जाने का किराया ही मुश्किल से पूरा होगा। चार वर्ष की मेहनत के बाद उसने यह रक़म जोड़ी थी लेकिन इस रक़म से वह मुरादाबाद जा सकता था लेकिन जाकर शादी नहीं कर सकता था। इसलिए झब्बू भइया ने यहीं एक बदमाश से बात-चीत करके इस औरत को सौ रुपये में खरीद लिया। अस्सी रुपये इसने नक़द दिये, बीस रुपये उधार में रहे जो उसने एक वर्ष में अदा कर दिये। बाद में झब्बू को मालूम हुआ कि यह औरत भी मुरादाबाद की रहने वाली थी, घीरच गांव की और उसकी बिरादरी ही की थी। झब्बू बहुत प्रसन्न हुआ। चलो यहीं बैठे बैठे सब काम हो गया। अपनी जात-बिरादरी की, अपने प्रांत की, अपने धर्म की औरत यहीं बैठे-बिठाये सौ रुपये में मिल गई। उसने बड़े चाव-चाव से अपना ब्याह रचाया और फिर उसे

मालूम हुआ कि उसकी पत्नी लड़िया बहुत अच्छा गाती है। वह स्वयं भी अपनी पाटदार आवाज़ में ज़ोर से गाने बल्कि गाने से अधिक चिल्लाने का शौकीन था। अब तो खोली में जैसे किसी ने दिन-रात रेडियो खोल रखा हो। दिन के समय खोली में लड़िया काम करते हुए गाती थी। रात को झब्बू और लड़िया दोनों गाते थे। इनके यहां कोई बच्चा न था। इसलिए उन्होंने एक तोता पाल रखा था। मियांमिट्ठू पति और पत्नी को गाते देखकर स्वयं भी लहक-लहक कर गाने लगते। लड़िया में एक बात और भी थी। झब्बू न बीड़ी पिये न सिग्रेट, ताड़ी न शराब। लड़िया बीड़ी, सिग्रेट, ताड़ी सभी कुछ पीती थी। कहती थी, पहले वह यह सब कुछ नहीं जानती थी लेकिन जब से वह बदमाशों के पल्ले पड़ी उसे ये सब बातें सीखनी पड़ीं और अब वह और सब बातें तो छोड़ सकती है लेकिन बीड़ी और ताड़ी नहीं छोड़ सकती। कई बार ताड़ी पीकर लड़िया ने झब्बू पर हमला किया और झब्बू ने उसे रूई की तरह धुनक कर रख दिया। उस अवसर पर तोता बहुत शोर मचाता था। वह रात को दोनों को गालियां बकते देखकर स्वयं भी पिंजरे में टंगा हुआ ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगता—लड़िया को मत मारो मादरचोद—लड़िया को मत मारो मादरचोद। एक बार तो उसकी गाली सुनकर झब्बू क्रोध में आकर तोते को पिंजरे समेत गंदे नाले में फेंकने लगा था लेकिन जीवना ने बीच में पड़कर तोते को बचा लिया। तोते को मारना बड़ा पाप है, जीवना ने कहा। तुम्हें फिर ब्राह्मणों को बुलाकर प्रायश्चित् करना पड़ेगा और तुम्हारे पन्द्रह-बीस रुपये खुल जायेंगे। यह सोचकर झब्बू ने तोते को नाले में फेंक देने का विचार छोड़ दिया।

शुरू-शुरू में तो झब्बू को ऐसी शादी पर चारों ओर से फटकार पड़ीं। वह स्वयं भी लड़िया को बड़े सन्देह की नज़रों से देखता रहा और कई बार उसने बिना कारण ही उसे पीटा और स्वयं भी मिल में न जाकर उसकी निगरानी करता रहा लेकिन धीरे-धीरे लड़िया ने सारी

चाल में अपना विश्वास कायम कर लिया। लड़िया कहती थी कि कोई औरत सच्चे दिल से बदमाशों के पल्ले पड़ना पसंद नहीं करती। वह तो एक घर चाहती है। चाहे वह छोटा-सा ही हो। वह एक पति चाहती है जो उसका अपना हो। चाहे वह झब्बू भइया जैसा हर समय शोर मचाने वाला, ज़बान दराज़, शेख़ीखोरा ही क्यों न हो। वह एक नन्हा बच्चा चाहती है चाहे वह कितना ही कुरूप क्यों न हो। और अब लड़िया के पास घर भी था और झब्बू भी था और यदि बच्चा नहीं था तो क्या हुआ, हो जायेगा। और यदि नहीं होता तो भगवान् की इच्छा। यह मियां मिट्ठू ही उसका बेटा बनेगा।

एक दिन लड़िया अपने मियां मिट्ठू का पिंजरा झुला रही थी और उसे चूरी खिला रही थी और अपने दिन के सपनों में उस नन्हें से बालक को देख रही थी जो वायु में हुमकता-हुमकता उसकी गोद की ओर बढ़ता चला आ रहा था कि चाल में शोर सा बढ़ने लगा और उसने दरवाज़े में से झांक कर देखा कि कुछ मज़दूर झब्बू को उठाये चले आ रहे हैं और उनके कपड़े रक्त से रंगे हुए हैं। लड़िया का दिल धक से रह गया। वह भागती-भागती नीचे गई और उसने बड़ी तेज़ी से अपने पति को मज़दूरों से छीन कर अपने कंधे पर उठा लिया और अपनी खोली में ले आई। पूछने पर पता चला कि झब्बू से गिन्नी खाते के मैनेजर ने कुछ डांट डपट की। उस पर झब्बू ने भी उसे दो हाथ जड़ दिये। उस पर बहुत वावेला मचा और मैनेजर ने अपने बदमाशों को बुलाकर झब्बू की खूब ठुकाई की और उसे मिल से बाहर निकाल दिया। अच्छा हुआ कि झब्बू बच गया अन्यथा उसके मरने में कोई कसर न थी। लड़िया ने बड़े साहस से काम लिया। उसने उसी दिन से अपने सिर पर टोकरी उठाली और गली-गली भाजी तरकारी बेचने लगी जैसे वह जीवन भर यही धंधा करती आई थी। इसी प्रकार मेहनत मजदूरी करके उसने अपने झब्बू को अच्छा कर लिया। झब्बू अब भला चंगा है लेकिन अब उसे किसी मिल में काम नहीं मिलता। वह

दिन भर अपनी खोली में खड़ा महालक्ष्मी के स्टेशन के चारों ओर कारखाने की ऊँची-ऊँची चिमनियों को तकता रहता है। स्यून मिल, न्यू मिल, लाइड मिल, पुवार मिल, धनराज मिल। लेकिन उसके लिये किसी मिल में जगह नहीं है क्योंकि मज़दूर को गाली खाने का अधिकार है, गाली देने का अधिकार नहीं है। आजकल लड़िया बाज़ारों और गलियों में आवाज़ें दे देकर भाजी तरकारी बेचती है और घर का सारा काम-काज भी करती है। उसने बीड़ी, ताड़ी सब छोड़ दिया है। हां, उसकी साड़ी, किरमज़ी भूरे रंग की साड़ी जगह-जगह से फटती जा रही है। थोड़े दिनों तक और यदि झब्बू को काम न मिला तो लड़िया को अपनी साड़ी पर पुरानी साड़ी के टुकड़े जोड़ने पड़ेंगे और अपने मियां मिट्ठू को चूरी खिलाना बन्द करना पड़ेगा।

पांचवीं साड़ी का किनारा गहरा नीला है। साड़ी का रंग गदला सुर्ख है लेकिन किनारा गहरा नीला है और इस नीले रंग में अब भी कहीं-कहीं चमक बाकी है। यह साड़ी दूसरी साड़ियों से बढ़िया है क्योंकि यह पांच रुपये चार आने की नहीं है। इस का कपड़ा, इस की चमक-दमक कहे देती है कि यह उन से कुछ भिन्न है। आप को दूर से यह कुछ भिन्न मालूम नहीं होती होगी, लेकिन मैं जानता हूं कि यह उन से कुछ भिन्न है। इस का कपड़ा बढ़िया है। इस का किनारा चमकदार है। इस की क़ीमत पौने नौ रुपये है। यह साड़ी मंजूला की है। यह साड़ी मंजूला के ब्याह की है। मंजूला के ब्याह को अभी छः मास भी नहीं हुए हैं। उसका पति पिछले मास चर्खी के घूमते हुए पटे की लपेट में आकर मर गया था और अब सोलह वर्ष की सुन्दर मंजूला विधवा है। उसका दिल जवान है। उसका शरीर जवान है। उसकी आशायें जवान हैं लेकिन अब वह कुछ नहीं कर सकती क्योंकि उसका पति मिल की एक दुर्घटना में मर गया है। वह पटा बड़ा ढीला था

और घूमते हुए बार-बार फटफटाता था। और काम करने वालों के विरोध के बावजूद उसे मिल मालिकों ने बदला नहीं था क्योंकि काम चल रहा था और दूसरी सूरत में थोड़ी देर के लिए काम बन्द करना पड़ता। पटे को बदलवाने के लिए रुपया भी खर्च होता था। मज़दूर तो किसी समय भी तबदील किया जा सकता है, उस के लिए रुपया थोड़ी खर्च होता है लेकिन पटा तो बड़ी क़ीमती चीज़ है।

जब मंजूला का पति मर गया तो मंजूला ने हरजाने की अर्ज़ी दे दी जो अस्वीकार हुई क्योंकि मंजूला का पति अपनी बेध्यानी से मरा था इसलिए मंजूला को कोई हरजाना न मिला और वह अपनी वही नई दुल्हन की साड़ी पहने रही जो उसके पति ने पौने नौ रुपये में उसके लिए खरीदी थी क्योंकि उसके पास कोई दूसरी साड़ी नहीं थी जो वह अपने पति की मृत्यु के सोग में पहन सकती। वह अपने पति के मर जाने के बाद भी दुल्हन का लिबास पहनने पर बाध्य थी क्योंकि उसके पास कोई दूसरी साड़ी न थी और जो साड़ी थी वह यही गदले सुर्ख रंग की पौने नौ रुपये की साड़ी थी जिस का किनारा गहरा नीला था।

शायद अब मंजूला भी पांच रुपये चार आने की साड़ी पहनेगी। उसका पति जीवित रहता जब भी वह दूसरी साड़ी पांच रुपये चार आने ही की लाती। इस रूप से उसके जीवन में कोई विशेष अंतर नहीं आया लेकिन इतना अंतर अवश्य आया है कि वह यह साड़ी आज पहनना चाहती है। एक श्वेत साड़ी पांच रुपये चार आने वाली जिसे पहिन कर वह दुल्हन नहीं विधवा मालूम हो सके। यह साड़ी उसे दिन रात काट खाने को दौड़ती है। इस साड़ी से जैसे उसके मृत पति की मज़बूत बाहें लिपटी हैं। जैसे इसके हर तार पर उसके प्यार भरे चुम्बन अंकित हैं। जैसे इसके ताने-बाने में उसके पति के गरम-गरम श्वास मौजूद हैं। उसके काले बालों वाली छाती का सारा प्यार दफ़न है। जैसे अब यह साड़ी नहीं है एक गहरी क़ब्र है जिस की

भयंकर गहराइयों को वह हर समय अपने शरीर के गिर्द लपेटे रखने पर मजबूर है। मंजूला जीवित रूप से कब्र में गढ़ी जा रही है।

छठी साड़ी का रंग लाल है लेकिन उसे यहां नहीं होना चाहिये था क्योंकि उसकी पहनने वाली मर चुकी है। फिर भी यह साड़ी यहां जंगले पर बराबर मौजूद है। प्रतिदिन की तरह धुली धुलाई हवा में झूल रही है। यह माई की साड़ी है जो हमारी चाल के दरवाज़े के निकट भीतर खुले आंगन में रहा करती थी। माई का एक बेटा था, सीतो! वह अब जेल में है। हां सीतो की पत्नी और उसका लड़का यहीं नीचे आंगन में दरवाज़े के निकट पड़े रहते हैं। सीतो, सीतो की पत्नी, उनकी बेटी और बुढ़िया माई, ये सब लोग हमारी चाल के भंगी हैं। इन के लिए खोली भी नहीं है और इन के लिए इतना खाना कपड़ा भी नहीं मिलता जितना हम लोगों को मिलता है। इसलिए ये लोग आंगन में रहते हैं। वहीं खाना पकाते हैं, वहीं ज़मीन पर पड़ कर सो रहते हैं। यहीं पर बुढ़िया माई मारी गई थी। वह बड़ा छिद्र जो आप इस साड़ी में देख रहे हैं—पल्लू के निकट, यह गोली का छिद्र है। यह कारतूस की गोली माई को भंगियों की हड़ताल के दिनों में लगी थी। नहीं वह उस हड़ताल में भाग नहीं ले रही थी। वह बेचारी तो बहुत बूढ़ी थी, चल फिर भी न सकती थी। उस हड़ताल में तो उसका बेटा सीतो और अन्य भंगी शामिल थे। ये लोग महंगाई मांगते थे और खोली का किराया मांगते थे अर्थात अपने जीवन के लिए दो वक्त का रोटी कपड़ा और सिर पर एक छत चाहते थे। इसलिए उन लोगों ने हड़ताल की थी और जब हड़ताल पर रोक लगा दी गई तो उन लोगों ने जलूस निकाला और उस जलूस में माई का बेटा सीतो आगे-आगे था और बड़े ज़ोर-शोर से नारे लगाता था। फिर जब जलूस पर भी रोक लगा दी गई तो गोली चली और हमारी चाल के सामने चली। हम लोगों ने तो अपने दरवाज़े बन्द कर लिए लेकिन घबराहट में चाल का दरवाज़ा बन्द करना किसी को याद न रहा और फिर हमें

अपने बन्द कमरों में ऐसा मालूम हुआ जैसे गोली इधर से उधर से चारों ओर से चल रही हो। थोड़ी देर के बाद बिल्कुल सन्नाटा हो गया और जब हम लोगों ने डरते-डरते दरवाज़ा खोला और बाहर झांक कर देखा तो जलूस तित्तर-बित्तर हो चुका था और हमारी चाल के निकट बुढ़िया मरी पड़ी थी। यह उसी बुढ़िया की लाल साड़ी है जिस का बेटा सीतो अब जेल में है। इस लाल साड़ी को अब बुढ़िया की बहू पहनती है। इस साड़ी को बुढ़िया के साथ जला देना चाहिये था लेकिन क्या किया जाये। तन ढांकना अधिक ज़रूरी है। मरे हुओं की इज़्ज़त से भी कहीं अधिक ज़रूरी है कि जीवितों का तन ढका जाये। यह साड़ी चलने चलाने के लिए नहीं है तन ढकने के लिए है। हां कभी-कभी सीतो की पत्नी इसके पल्लू से अपने आंसू पोंछ लेती है क्योंकि इस में पिछले अस्सी वर्षों के सारे आंसू और सारी आशायें और सारी विजयें और हारें रची हुई हैं। आंसू पोंछ कर सीतो की पत्नी फिर उसी हिम्मत से काम करने लग जाती है जैसे कुछ हुआ ही नहीं। नहीं गोली नहीं चली, कोई जेल नहीं गया। भंगन की झाड़ू उसी प्रकार चल रही है।

ऐ लो बातों बातों में प्रधान मंत्री महोदय की गाड़ी निकल गई। वह यहाँ नहीं ठहरी। मैं समझता था वह यहाँ अवश्य ठहरेगी। प्रधान मंत्री महोदय दर्शन देने के लिए गाड़ी से निकल कर थोड़ी देर के लिए प्लेटफ़ार्म पर टहलेंगे और शायद हवा में झूलती हुई इन छः साड़ियों को भी देख लेंगे जो महालक्ष्मी पुल के बायें ओर लटक रही हैं। ये छः साड़ियां जो बहुत ही मामूली औरतों की साड़िया हैं। ऐसी मामूली औरतें जिन से हमारे देश के छोटे छोटे घर बनते हैं। जहाँ एक कोने में चूल्हा सुलगता है, एक कोने में पानी का घड़ा रखा है। ऊपरी ताकचे में शीशा है, कंघी है, सेंदूर की डिबिया है, खाट पर नन्हा बच्चा सो रहा है। अलगनी पर कपड़े सूख रहे हैं। ये इन छोटे छोटे लाखों करोड़ों घरों को बनाने वाली औरतों की साड़ियां हैं जिन्हें हम भारत

कहते हैं। ये औरतें जो हमारे प्यारे प्यारे बच्चों की मायें हैं, हमारे भोले भाइयों की प्यारी बहने हैं, हमारे सरल प्रेमों का गीत हैं, हमारी पांच हज़ार वर्ष पुरानी संस्कृति का सब से ऊँचा चिन्ह हैं। महा मंत्री महोदय! ये हवा में झूलती हुई साड़ियां तुम से कुछ कहना चाहती हैं। तुम से कुछ मांगती हैं। ये कोई बहुत बड़ी कीमती वस्तु तुम से नहीं मांगती हैं। ये कोई बड़ा देश, कोई बड़ी पदवी, कोई बड़ी मोटरकार, कोई परमिट, कोई ठेका, कोई प्रापर्टी—ऐसी किसी वस्तु की इच्छुक नहीं हैं। ये तो जीवन की बहुत ही छोटी छोटी चीज़ें मांगती हैं। देखिये यह शांता बाई की साड़ी है जो अपने बचपन की खोई हुई धनुक मांगती है। यह जीवना बाई की साड़ी है जो अपनी आंखों की ज्योति और अपनी बेटी की इज़्ज़त मांगती है। यह सावित्री की साड़ी है जिसके गीत मर चुके हैं और जिसके पास अपने बच्चों के लिए स्कूल की फ़ीस नहीं है। यह लड़िया है जिसका पति बेकार है और जिसके कमरे में एक तोता है जो दो दिन से भूखा है। यह नई दुल्हन की साड़ी है जिसके पति का जीवन चमड़े के पटे से भी कम कीमती है। यह बूढ़ी भंगन की लाल साड़ी है जो बन्दूक की गोली को हल के फाले में तबदील कर देना चाहती है ताकि धरती से मनुष्य का रक्त फूल बन कर खिल उठे और गेहूं के सुनहले ख़ोशे बन कर लहराने लगे......

लेकिन प्रधान मंत्री महोदय की गाड़ी नहीं रुकी और वह इन छः साड़ियों को नहीं देख सके और भाषण देने के लिए चौपाटी पर चले गये। इसलिए अब मैं आप से कहता हूं कि यदि कभी आप की गाड़ी इधर से गुज़रे तो आप इन छः साड़ियों को अवश्य देखिये जो महा लक्ष्मी के पुल के बाईं ओर लटक रही हैं और फिर आप इन रंगा-रंग रेशमी साड़ियों को भी देखिये जिन्हें धोबियों ने इसी पुल के दाईं ओर सूखने के लिये लटका रखा है और जो उन घरों से आई हैं जहाँ ऊँची ऊँची चिमनियों वाले कारखानों के मालिक या ऊँचा ऊँचा वेतन पाने वाले ऊँचे लोग रहते हैं। आप इस पुल के दायें बायें दोनों ओर अवश्य

देखिये और फिर अपने आप से पूछिये कि आप किस ओर जाना चाहते हैं। देखिये मैं आप से समाजवादी बनने के लिए नहीं कह रहा हूँ। मैं आपको वर्ग-संघर्ष का आदेश भी नहीं दे रहा हूं। मैं तो आप से केवल यह पूछना चाहता हूं कि आप महा लक्ष्मी पुल के दायें ओर हैं या बायें ओर ?

: ४ :

बारूद और चेरी के फूल

सिओल जल रहा था।

ईंटों के ढेर के पीछे जाईम ने लक्की स्ट्राईक का एक सिग्रेट सुलगाया और अपनी राइफ़ल के सहारे खड़े होकर अपने चारों ओर देखा।

चारों ओर शहर की गिरी हुई इमारतों के मलबे पड़े थे। कहीं-कहीं कंकरीट की अधजली इमारतें बाकी रह गई थीं। शहर के बीचों-बीच हज़ारों टन बमों की मार से हवाई जहाज़ों ने अमरीकी सेना के लिए एक छोटा-सा रास्ता बनाया था ताकि अमरीकी सेना शहर के पूर्व से पश्चिम तक जा सके, लेकिन जब इस पर भी सिओल विजय न हुआ तो फिर हज़ारों टन के बमों से एक दूसरा रास्ता बनाया गया जो उत्तर से दक्षिण तक रास्ता साफ़ करता था। अब शहर को चार टुकड़ों में बांट कर घेरे में ले लिया गया। फिर भी क़दम-क़दम पर लड़ाई हुई। ये कम्बख़्त कोरियाई सिपाही जब तक मरते नहीं लड़ते ही जाते हैं।

जाईम ने एक ज़ोर का कश खैंच कर सोचा, अपने चारों ओर देखा और फिर उसे अपने चारों ओर अधजली इमारतें नज़र आईं। चारों ओर मलबे के ढेर, पानी के नल फटे हुए, बिजली के खम्बे सड़कों पर गिरे हुए। जगह-जगह कोरियाई और अमरीकी सिपाहियों की लाशों

के ढेर। बारूद की कांच, बमों के गहरे गढ़े और वायु में नाइट्रेट और फ़ासफ़ोरस की तेज़ और कड़वी दुर्गन्ध और चारों ओर आँखों को जलाने वाला स्याह धुआं......यह धुआं गुबार की तरह सारे शहर पर छाया हुआ था। लाईम खांसने लगा और फिर खांसते-खांसते गाली बकते हुए मुड़कर अपने साथी से कहने लगा :—

"बड़ी मुसीबत की जंग थी यह, जूस! बड़ी हरामज़ादी, निकम्मी, शैतानी, अल्लाहमारी जंग थी जूस।"

जूस, जिसका असली नाम न लाईम जूस था न औरेंज जूस, न कोका कोला जूस बल्कि केवल जोन्ज़ था लेकिन जिसे उसके साथी इसलिए जूस कहते थे कि उसका चेहरा देखने में बड़ा गोल मटोल, मासूम और पिलपिला सा था। चमड़ी इतनी कोमल कि मालूम होता था कि यदि उस में ज़रा-सी सूई चुभो दी जाये तो तुरन्त रस की धार फूट निकलेगी। बालों का रंग पलाटिनम का सा था और भवें और पलकें तो बिल्कुल श्वेत थीं, जिस में से उस की छोटी-छोटी हरी आंखें मुर्गी के बच्चे की तरह चमकती थीं। अपनी ठोडी खुजाते हुऐ वह बोला, "जंग मुसीबत की थी, खून भी बहुत बहा, लेकिन आखिर आज हमारी विजय है।"

"इस में कोई संदेह नहीं" लाईम ने विजयपूर्ण नज़रों से सामने की कंकरीट की इमारत की ओर देखा। उस इमारत की आधी छत उड़ चुकी थी आधी बाकी थी। छत के ऊपर अमरीकी झंडा लहरा रहा था। खिड़कियां, दरवाज़े, सब टूटे हुए थे और चारों ओर सड़क के ऊपर कांच की क़िरचियां बिखरी पड़ी थीं। लाईम ने सिग्रेट का दूसरा कश लिया और उसे इतने ज़ोर से भीतर खैंचा कि सिग्रेट जल कर आधा होगया और उसकी राख उड़ कर लाईम की आंखों में जा पड़ी और वह गालियां बकता हुआ अपनी आंखें मलने लगा "खुदा ग़ारत करे इन सब ब्लडी एशिया वालों को। कहां आकर ला पटका। मैं अच्छा भला अपने सनसबाटी में इंशोरैंस एजण्ट था।"

"कौन सी कम्पनी के ?"

"दी ग्रिटे फ़ेडरल अमरीकन इन्शोरैंस कारपोरेशन इनकार-पोरेटिड......... ।"

"अब भी उसी के एजण्ट हो ?" जूस ने अपनी छोटी-छोटी आंखें झपकाईं और सामने की एक इमारत की ओर संकेत किया "वह देखो ।"

लाईम ने देखा तो उसे एक अधजली इमारत पर दी ग्रिटे फ़ेडरल अमरीकन इन्शोरैन्स कारपोरेशन का नाम जगह-जगह से टूटा हुआ नज़र आया। उस इमारत के ऊपर भी अमरीकी झंडा लहरा रहा था और इमारत के बाहर अमरीकी सिपाहियों की एक गारद स्टालेन और कमरसेन की तस्वीरें फाड़ने में लगी हुई थी। "अरे सचमुच, यह तो वही है लेकिन मेरी अमरीकन कम्पनी यहां कैसे आ गई ?"

जूस ने मुस्करा कर कहा "इसके साथ और नाम भी हैं, ध्यान से देखो।"

लाईम अधजले नाम पढ़ने लगा—केलेफ़ोरनिया चावल गुदाम, एजण्ट फ़िलिप्स एण्ड फ़िलिप कोरिया कोल एण्ड आयल रिफ़ाईनरीज़ इनकारपोरेटिड, शिकागो।

लाईम खुशी से चिल्लाया "अरे यह तो सब अपने नाम हैं। ऐसा मालूम होता है जैसे अमरीका पहले ही से कोरिया में मौजूद था।"

जूस ने कहा "इस में क्या संदेह है। हम पहले भी यहां मौजूद थे और आज भी मौजूद हैं और यहां से कभी नहीं जायेंगे चाहे शैतान कम्यूनिस्ट कुछ ही क्यों न कहें।

"बिल्कुल" लाईम ने बड़ी दृढ़ता से कहा और उसके जबड़े तन गये। लाईम ताड़ की तरह एक लम्बा अमरीकी था। वह अपनी मां के नाते आधा आयरिश था और आधा जर्मन और बाप के नाते एक चौथाई हब्शी, दो चौथाई मैक्सीकी, एक बटा आठ जिपसी और बाकी फ्रांसीसी अर्थात् शत प्रति शत अमरीकी था जो श्वेत रंग

की प्रधानता, हब्शियों की लिंचिग और टरूमैन के एटम बम में विश्वास रखता था। ऊपर से वह जितना लम्बा था भीतर से उतना ही छोटा था। ऊपर से वह जितना बहादुर था भीतर से उतना ही बुज़दिल, कमीना, ज़ालिम और बेवफ़ा था। कड़ी ड्यूटी से सदैव घबड़ाता था लेकिन जब कोई मोर्चा विजय हो जाता तो विजय का सेहरा लेने सब से आगे होता। जभी तो अभी तक जीवित था। उस की बटालियन के अन्य नौजवान अमरीकी कब के सिओल के महाज़ पर समाप्त हो चुके थे। अब केवल जूस और लाईम बाकी रह गये थे। जूस भी ऊपर से बड़ा मासूम दिखाई देता था लेकिन भीतर से बिल्कुल लाईम जैसा ही था। इसलिए लाईम और जूस दोनों में गाढ़ी छनती थी बल्कि उन्हें सदैव एक साथ देखकर उनके अन्य साथी प्रायः कहा करते थे "वह देखो लाईम जूस की बोतल आ रही है।"

एकाएक सामने की इमारत पर पहली मंजिल के बरामदे में दो अमरीकी सिपाही नज़र आये। उनके हाथ में नीले रंग का कपड़ा था जिसे उन्होंने बरामदे के बाहर लटका दिया ताकि सड़क पर आते-जाते हर अमरीकी सिपाही की नज़र उस कपड़े पर पड़ सके। उस नीले कपड़े पर बड़े-बड़े श्वेत अक्षरों में लिखा हुआ था:—

GRAND AUCTION SALE

(बहुत बड़ा नीलाम)

COME AND BUY

(आइये और खरीदिये)

और फिर बरामदे में बहुत से अमरीकी सिपाहियों की सूरतें नज़र आईं। वे सब लोग पी रहे थे, गा रहे थे और ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहे थे—"शानदार नीलाम है, खुला बाज़ार आम है, आओ खरीदो ऐसा माल फिर कभी नहीं मिलेगा।"

लाइम और जूस उसे देखते ही इमारत के भीतर घुस गये और खटाखट सीढ़ियां चढ़कर पहली मंजिल पर पहुँच गये। भीतर जाकर उन्होंने देखा कि एक बहुत बड़ा हॉल है जिसके दरवाज़े पर आधे डालर का एक टिकट मिलता है जिसे लेकर भीतर जाना पड़ता है। वे टिकट लेकर भीतर गये। भीतर उन्हीं की तरह के दो तीन सौ सिपाही एक ऊँची स्टेज के गिर्द एकत्रित थे। यह स्टेज हॉल के दक्खिनी कोने में थी और एक लम्बे क़द के आदमी से भी ऊँची थी। इस स्टेज के एक ओर दरवाज़ा था और दूसरी ओर निकलने का कोई मार्ग न था। स्टेज के ऊपर रस्सों का एक जंगला बांधा गया था और स्टेज बिल्कुल खाली पड़ी थी। हां सिपाही हॉल में चारों ओर खचाखच भरे हुए चिल्ला रहे थे, गा रहे थे, गालियां बक रहे थे और शराब की बोतलें मुँह से लगाये गटागट पी रहे थे।

लाइम ने जूस और जूस ने लाइम की ओर आश्चर्य से देखा। फिर जूस ने अपने निकट खड़े एक सिपाही से पूछा :—

"यह क्या तमाशा है—बाक्सिंग ?"

ठिगने क़द के अमरीकी ने, जिसके सामने के दो दांत टूटे हुए थे, सिर हिलाकर कहा "नाईं"—वह बहुत पिये हुए था।

लाईम ने पूछा "तो फिर क्या, थियेटर ?"

'नाईं ।"

' तो फिर क्या, डान्स ?"

"नाईं" ठिगने क़द वाले ने कूक से चलने वाले खिलौने की तरह बिल्कुल पहले ऐसी लय पर अपना सिर हिला कर कहा।

लाईम ने ठिगने क़द वाले अमरीकी को ज़ोर से झंझोड़ा और क्रोध भरे स्वर में पूछा :—

"तो फिर क्या ?"

"देखते नहीं हो, नीलाम है—Grand Auction."

"किस चीज़ का नीलाम है ?"

"मुझे क्या मालूम, मैं भी तुम्हारी तरह आधा डालर खर्च कर के अन्दर आया हूँ। यहां स्टेज खाली है। मुझे तो सब ब्लडी मज़ाक मालूम होता है। सब खूनी, खूनी स्टेज, खूनी आधा डालर, खूनी जंग, सब ब्लडी खूनी, मुझे छोड़ दो, मैं थका हुआ हूँ।"

एकाएक हॉल में एक शोर-सा उठा। एक आदमी नीलाम-घर के मैनेजर का पूर्वी लिबास पहने स्टेज पर आया और घंटी बजाकर बोला "एटम बम के बेटो! आज हम ने सिओल पर विजय पाकर जैसे सारे कोरिया पर विजय पाली है। इसी प्रसन्नता में यह नीलाम किया जा रहा है। ऐसा नीलाम आपने जीवन में पहले कभी नहीं देखा होगा। अब देखो और अपनी पाकट खाली कर दो—एटम बम के बेटो!"

इतना कहकर उस ने ज़ोर से घंटी बजाई और स्टेज के पश्चिमी कोने की ओर संकेत किया। संकेत पाते ही पश्चिमी दरवाज़ा खुला और उसके भीतर से कोरियाई लड़कियों की एक कतार स्टेज पर आनी शुरू हुई। क्षण भर के लिये स्टेज पर चुप्पी छा गई क्योंकि लड़कियां बिल्कुल नंगी थीं। नग्न शरीर, आंखें नीची, बाल खुले, नंगे पाँव, हाथ पीठ पर रस्सियों से बँधे हुए ताकि ये कोरियाई लड़कियां किसी प्रकार भी अपनी नग्नता न छुपा सकें, न अपने मुँह हाथों में छुपा कर, न अपने बाल छातियों पर लहरा कर। आज तन ढाकने की कोई सूरत न थी इसलिये वे गरदनें नंगी थीं जहाँ प्रेम ने चेरी के फूलों के हार पहनाये थे। वह छातियां नंगी थीं जहाँ बेज़बान बच्चों ने ममता का रस पिया था। वह कोख नंगी थी जिसके भीतर बीज होता है। बीज के भीतर शगूफ़ा होता है, शगूफ़े के भीतर फूल होता है और फूल के भीतर फिर बीज होता है। एक सुन्दर निर्माता को बहादुर अमरीकी सिपाहियों ने नंगा कर दिया था और यह रस्सों से बंधी हुई, एशियाई आत्मा अपनी शताब्दियों के पतन के दाग़ अपनी छाती पर लिये हुए विजेताओं के बीच घूम रही थी

यह नीलाम-घर आज ही नहीं, आज से बहुत समय पहले भी सजाया गया था। जहाँ-जहाँ अत्याचार ने डेरे डाले थे, चंगेज़ के खेमों में, दमश्क के बाज़ारों में, यूनान की मंडियों में, रोम की एम्फ़ीथियेटरों में, दक्षिणी अमरीका की रियासतों में, हिटलर की जेलों में—जहाँ-जहाँ अत्याचार ने डेरे डाले थे वहाँ यह मासूम आत्मा नग्न की गई थी। नंगे पाँव, छलनी छाती, रक्त में डूबी हुई, अपनी पलकों के भीतर नारित्व की हज़ारों वीरानियां छुपाये। उसने आश्चर्य से उन नीलाम-घरों को देखा था और उनकी वहशी दीवारों से पूछा था, क्या मनुष्य इसलिये उत्पन्न होता है कि वह औरतों को नंगा करे—बच्चों को जलाये और बूढ़ों की छातियों में संगीन घोंपे। या इसलिये कि वह एक पुल बनाये, एक पुस्तक लिखे, एक गीत सुनाये और एक चेरी के फूल को उठा कर अपनी प्रेमिका के केशों में टाँग दे? लेकिन नीलाम-घर की वहशी दीवारों ने इस प्रेम भरे प्रश्न का उत्तर सदैव घृणा से दिया था और आज एटम बम के बेटों ने कोरिया के बाज़ारों में फिर वही नीलाम सजाया था।

हाल में एक क्षण के लिये एकदम चुप्पी छा गई। दूसरे क्षण में सैंकड़ों तालियाँ चीखीं, तालियाँ बज उठीं और अमरीकी सिपाही हिंसक प्रसन्नता और हविस की अग्नि से भड़कते गये। "कम ऑन, जल्दी से बोली शुरू करो।"

"एक डालर! मैं बोली देता हूं।" एक अमरीकी सिपाही ज़ोर से चिल्लाया।

"दो डालर" दूसरा बोला।

"तीन डालर" तीसरा बोला।

"चार डालर...एक दो...एक दो...पांच डालर...एक, दो... एक दो।"

बोली शुरू हो गई लेकिन एक लड़की के लिये कोई बीस डालर से अधिक बोली न दे सकता था और डालर के अतिरिक्त अन्य क़ीमती

चीज़ें भी बोली में कबूल कर ली जाती थीं। जैसे घड़ी, फ्राउन्टेन पैन, टाई पिन...किसी लड़की की बोली समाप्त होते ही उसके हाथों की रस्सी काट दी जाती और उसे उछाल कर स्टेज से नीचे फेंक दिया जाता। जहाँ बहुत सी ऊपर को उठी हुई बेकरार बाहें उसके नंगे शरीर को दबोच लेतीं और उसे हाथों ही हाथों उठाकर अंतिम बोली देने वाले तक फेंक देतीं जो उसकी कमर में हाथ डाल कर या तो वहीं नाचने लग जाता और या उसे उसी प्रकार बाहों में उठाये हाल से बाहर ले जाता।

लाइम ने बड़े संतोष से अपनी पतलून की जेबों में हाथ डाले और जूस की ओर देख कर मुस्कराया। जूस ने उसे आँख मार कर कहा—"बोली क्यों नहीं देते ?"

लाइम ने कहा "अभी अपनी पसंद की कोई लड़की आई नहीं। जब आएगी बोली देंगे और सब से बढ़कर देंगे।"

जूस ने कहा "तुम कैसी लड़की चाहते हो—हज़ल जैसी ?"

"लाइम ने क्रोध से उसे घूर कर कहा "शटअप, हज़ल मेरी प्रेमिका है, उसकी बात मत करो।"

निकट खड़े ठिगने क़द के अमरीकी ने स्टेज पर खड़ी एक नंगी कोरियाई लड़की की ओर संकेत करते हुए कहा—"यह भी तो हज़ल है, रीचल है, अज़ा बेला है, मुझे तो इसके और एक अमरीकी लड़की के शरीर में कोई फ़र्क मालूम नहीं होता।"

लाइम ने घूसा तान कर कहा "चुप हो, तुम कौन होते हो बीच में बोलने वाले।"

उस ठिगने क़द वाले अमरीकी ने बड़े थके हुए स्वर में कहा "मैं, मैं कोई नहीं हूं, मैं एक मामूली अमरीकी सिपाही हूं, लेकिन मुझे यह हंगामा पसंद नहीं है।"

"पसंद नहीं है तो यहां क्यों खड़े हो, जाओ किसी गिरजे में जाओ...या बकरी का दूध पीकर भगवान के गुण गाओ, बास्टर्ड

ठिगने क़द का अमरीकी वहाँ से हट गया और लाइम के ध्यान को चाबुक की आवाज़ ने अपनी ओर खींच लिया। यह चाबुक नीलाम करने वाले ने उस लड़की के शरीर पर मारा था जो रस्सी से बँधी होने पर भी अपने आपको छुड़ाने की कोशिश कर रही थी। उस लड़की का रंग तांबे की तरह सुर्ख था। आँखें सुर्ख और जलती हुई सी और बाल बहुत घने और लम्बे। वह अपनी कोरियाई भाषा में ऊँचे स्वर में कुछ कह रही थी। कदाचित अपनी भाषा में उन सिपाहियों को गालियां दे रही थी। मैनेजर का चाबुक फिर उसके शरीर पर पड़ा और एक लम्बी नीली धारी का निशान उसके तांबे की तरह दहकते हुए शरीर पर छोड़ गया। लड़की ने फिर अपनी पूरी शक्ति से दांतों को रस्से में गाड़ कर उसे काट खाया......

लाइम ने उसे दिलचस्पी से देखा और ऊँचे स्वर में कहा "बीस डालर।"

उसने पहले ही सब से बड़ी बोली दे दी। बहुत से सिपाही उस की ओर आश्चर्य से देखने लगे।

लाइम ने कहा "हां हां क्या देखते हो, बोली मैंने दी है, लड़की को मेरी ओर फैंको।"

"बीस डालर और एक सोने की घड़ी" सारजंट कार्टन पिछले महायुद्ध का पेशावर सिपाही था। क़द ६ फुट से ऊपर निकलता हुआ, बैल की सी गरदन, आंखें मैली, दांत मैले, दिल मैला, रूह मैली और जैसी रूह वैसे फ़रिश्ते।

लाइम ने सारजंट कार्टन की ओर क्रोध से देखते हुए बोली बढ़ाई "बीस डालर और एक सोने की घड़ी और एक फाउंटेन पैन।"

सारजंट कार्टन बोला "बीस डालर और एक सोने की घड़ी, एक फ़ाउन्टेन पैन और एक सोने की अँगूठी" लाइम ने तुरन्त कहा "बीस डालर, सोने की घड़ी, फ़ाउन्टेन पैन, सोने की अँगूठी और मेरी पतलून की पेटी जिस पर चांदी का बकल लगा हुआ है। फैंको इधर लड़की

को, नहीं तो मैं पतलून ऊपर फेंकता हूं।"

बहुत से लोग हँस पड़े और अन्तिम बोली लाइम ही की रही और लड़की उसकी ओर फेंक दी गई। लाइम ने उस लड़ती हुई, झुंझलाती हुई, चीख़ती हुई लड़की को अपनी मज़बूत बाहों में थाम कर, उसे दो चांटे लगा कर राम कर लिया और अब वह उस लड़की को उठा कर हाल के बाहर जाने ही को था कि पश्चिमी दरवाज़े से एक हब्शी दौड़ता-दौड़ता आया और स्टेज पर चढ़ कर हांपते हुए बोला :—

"साथियो, यह ठीक नहीं है।"

"क्या ठीक नहीं है, हब्शी ?" किसी ने पूछा।

"यह नीलाम घर......इसे बन्द कर दो मित्रो! बहुत समय हुआ दक्षिणी अमरीका की रियासतों में इसी तरह के नीलाम-घर बनाये गए थे। मित्रो! जानते हो, हम ने उस नीलाम-घर की कितनी बड़ी कीमत अदा की है। मैं कहता हूँ......।"

"Dirty Nigger" सारजंट कार्टन ज़ोर से चिल्लाया।

"मैं कहता हूं इस हब्शी कुत्ते को स्टेज पर से हटा दो, हाल में से एक दम" बहुत सी आवाज़ें आईं।

"मैं नहीं हटूंगा' हब्शी सिपाही ने चिल्लाकर कहा "यह ठीक नहीं है, यह गलत है, यह हमारी सभ्यता के विपरीत है।"

"सभ्यता! बहुत से सिपाही ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे "साला सुर्ख़ है, कम्यूनिस्ट है।"

हब्शी सिपाही ने अपने दोनों हाथ फैला दिये और अपने सिर को ऊँचा उठाकर कहने लगा "साथियो! मैं कम्यूनिस्ट नहीं हूं। मैं एक मामूली अमरीकी शहरी हूं। मैं हारलम का रहने वाला हूं। हारलम की सातवीं गली में मेरी मां रहती है। मेरे दो छोटे-छोटे भाई हैं। उसी गली के अंतिम सिरे पर जीन का मकान है। जीन बेतहाशा हँसती रहती है। जीन जो हर समय हापकार्न खाती रहती है, जीन

जो मेरी मंगेतर है, औन जो बिल्कुल इन्हीं कोरियाई लड़कियों की तरह है। मेरी मंगेतर का सम्मान करो मित्रो!"

"बिल्कुल कम्यूनिस्ट है" सारजंट ने पिस्तौल निकाल लिया और चिल्लाकर कहने लगा "इसे स्टेज से नीचे फैंक दो।"

हब्शी बोला "मैं कम्यूनिस्ट नहीं हूं। मैंने मार्क्स नहीं पढ़ा, मैंने केवल अंजील पढ़ी है। मुझे आज तक किसी कम्यूनिस्ट से हाथ मिलाने का भी अवसर नहीं मिला, भूल से कई बार हाथ मिला चुका हूँ। मुझे नहीं मालूम कि कम्यूनिज़्म क्या बला है? हां मेरे गिरजा के सफेद पादरी ने मुझ से इतना अवश्य कहा था कि जो अच्छे आदमी होते हैं वे औरत का आदर अवश्य करते हैं क्योंकि औरत हमारी मां होती है, बहिन होती है, मंगेतर होती है। औरत हमारी सभ्यता की इज्जत होती है। उस सफेद पादरी ने मुझ से यह कहा था।"

"बिल्कुल कम्यूनिस्टों की सी बातें करता है।" बाइम ने घूंसा तान कर कहा।

"यह सुर्ख है, इसे जला डालो, स्टेज पर से नीचे लुढ़का दो।"

हब्शी सिपाही की चौड़ी चकली छाती एक विचित्र प्रकार के गर्व से तन गई। उसने धीरे से, लेकिन बड़े गहरे विश्वास के साथ, कहा:—

"नहीं भाइयो! मैं यहां से नहीं हटूंगा जब तक तुम इस नीलाम-घर को बन्द न करोगे। मुझे थोड़ा सा अमरीकी इतिहास याद है। इसे दो सौ वर्ष भी नहीं हुए, जब अफ्रीका के घने जंगलों वाले तट पर जहाज़ों ने लंगर डाले थे और हरे-हरे तोतों वाले, नीली चिड़ियों, चारखाने जराफ़ों और चुपचाप झीलों वाले अफ्रीकी वातावरण में से मेरे पूर्वजों को उनके घरों से जबर्दस्ती पकड़कर उन जहाज़ों के श्वेत मालिक उन्हें अमरीका ले गये थे, वहां मिसिसिप्पी की दरियाई नावों के डेक पर ऐसे ही नीलाम-घर लगे थे। बिल्कुल ऐसा ही मैनेजर था। ऐसे ही उसके हाथ में चाबुक था। उस चाबुक से काले शरीर पर इसी प्रकार खून की धारी उभर आती थी। मित्रो उस धारी की हमने

बहुत बड़ी कीमत अदा की है। तीन वर्ष के अमरीकी गृह-युद्ध में हज़ारों माओं के लाल मर गये। लाखों औरतें विधवा हो गईं और उत्तरी और दक्षिणी अमरीका में सदैव के लिये घृणा की दीवार खड़ी हो गई। मित्रो! अब उस खतरनाक तमाशे को दोबारा शुरू न करो। मैं तुम से सभ्यता के नाम पर नहीं अमरीकी इतिहास के नाम पर कहता हूँ, यह नीलाम-घर अब नहीं चल सकता। यह कोरिया का नीलाम-घर मिट जायेगा। जैसे चंगेज़ का नीलाम-घर मिट गया, जैसे हलाकू का मिट गया, जैसे रोम, यूनान, दमश्क, बर्लिन—ऐसे ही यह नीलाम-घर भी मिट जायेगा। यह अत्याचार मिट जायेगा लेकिन एशिया की औरत सदैव जीवित रहेगी।

एकाएक हाल में तीन गोलियां चलने का स्वर सुनाई दिया और लम्बे, चौड़े चकले हब्शी सिपाही का शरीर ज़ोर से कांपा। उसके फैले हुए हाथ दोनों ओर रस्सों की पकड़ में आ गये। उसकी गरदन एक ओर लुढ़क गई जैसे आज से लगभग दो हज़ार वर्ष पूर्व यसूमसीह की लुढ़क गई थी। फिर उसका भारी भरकम शरीर तड़प-तड़प कर रस्सों पर झुक गया और वहाँ से औंधा होकर नीचे सिपाहियों पर धड़ाम से जा गिरा। उसके गिरते ही हाल में क़हक़हे गूंजने लगे और रक्त की एक धारा स्टेज को सुर्ख करती हुई नीचे फ़र्श को सुर्ख करती चली गई...

कुछ सिपाहियों ने उसकी लाश को उठाकर बाहर बरामदे में फैंक दिया और नीलाम की बोली फिर से शुरू हो गई।

"एक डालर एक लड़की, एक घड़ी एक लड़की, एक टाइपिन एक लड़की, एक चांदी का सिग्रेट-केस एक लड़की!"

नीलाम बढ़ता गया। स्टेज खाली होती गई। स्टेज के पीछे अमरीकी झंडा मुस्कराता गया। झंडा—जिस पर तारे और धारियां थीं। तारे और गहरी नीली ज़मीन पर श्वेत धारियां। तारे और सोने जैसे शरीर पर नीली धारियां। तारे और चाबुकें......!

थोड़े समय के बाद उसी इमारत के एक छोटे से कमरे में लाइम, सारजंट कार्टन और जूस तीन नंगी कोरियाई लड़कियों को अपनी रानों पर बिठाये ताश खेल रहे थे और शराब पी रहे थे। खेल दिलचस्प था, लड़कियां भी अच्छी थीं। शराब भी बुरी नहीं थी और अब तो वह अड़ियल लड़की भी लाइम की गोद में चुप-चाप बैठी थी। हां कभी कभी उसके गिलाफ़ी पपोटों के भीतर से एक नज़र बिजली के कौंदे की तरह लपकती हुई बाहर आती और दूसरे क्षण में वह बिजली फिर कहीं भीतर ही गायब हो जाती। सारजंट कार्टन ने एकाएक ताश के पत्ते मेज़ पर फैंक कर कहा "जाने दो, इस खेल में मज़ा नहीं आ रहा।" "मुझे तो बहुत अच्छा लग रहा है" लाइम बोला। कार्टन ने कहा "मैं गुलामों का खेल खेलना चाहता हूं जिसमें गुलाम बेगम से बड़ा होता है।"

लाइम ने पूछा "लेकिन यह कैसे हो सकता है, ताश में तो सदैव बेगम गुलाम से बड़ी होती है।"

कार्टन ने कहा "यह नया खेल है। पिछली जंग में हम ने इसे नाज़ी क़ैदियों से सीखा था। इस खेल में बेगम गुलाम से छोटी होती है—क्यों जूस ?"

जूस ने कहा "हां, लेकिन इसके लिए तो चार आदमी चाहियें और हम तीन हैं।"

कार्टन ने लाइम की गोद में बैठी हुई कोरियाई लड़की की ओर ललचाई हुई नज़रों से देखकर कहा "कहने को तो हम छः हैं लेकिन

ये लड़कियां हमारा खेल नहीं जानतीं। यही तो मुसीबत है।"

लाइम ने कहा "मैं समझ गया सारजंट तुम क्या चाहते हो?"

"क्या?" सारजंट ने पूछा।

लाइम ने एक शैतानी मुस्कराहट के साथ कहा "तुम जो चीज़ बोली देकर प्राप्त नहीं कर सके उसे ताश के खेल से जीतना चाहते हो, ठीक है ना?"

सारजंट ने हां में सिर हिलाया।

लाइम ने धीरे से कहा "मुझे मंजूर है।"

"लेकिन वह चौथा पार्टनर......?" जूस ने पूछा।

सारजंट उठकर दरवाज़े के बाहिर आ गया। बाहिर वही ठिगने क़द का सिपाही, एक कोरियाई लड़की को अपना लम्बा कोट ओढ़ाये, धीरे-धीरे, सिर झुकाये चला जा रहा था। सारजंट ने उसे आवाज़ दी "ए ब्लडी" ठिगने क़द वाले अमरीकी ने मुड़कर सारजंट की ओर देखा, सारजंट ने उसे अपनी ओर बुलाया। ठिगने क़द वाला अपनी कोरियाई लड़की को लिए उसकी ओर बढ़ा। सारजंट ने उससे पूछा "इसे कोट क्यों ओढ़ा रखा है?"

"यह कोट मेरा है" ठिगने क़द वाले ने उत्तर दिया।

"लेकिन यह कोट इस काम के लिए नहीं है, निकालो इसे।" सारजंट ने कहा और कहते-कहते स्वयं ही उस कोरियाई लड़की का कोट उतार कर उसे फिर नंगा कर दिया। इतने में लाइम भी दरवाज़े पर आ गया। उसने ठिगने क़द वाले को देखते ही बड़ी घृणा से कहा "तुम्हें तो वह हँगामा पसंद नहीं था फिर तुम कैसे इस नंगी लड़की के साथ घूम रहे हो?"

ठिगने क़द वाला मुस्कराया। उसके सामने के दो दांत गायब थे। धीरे से बोला "मैं भी सब के साथ हूं।"

जूस ने दरवाज़ा खटखटाते हुए कहा "तो भीतर आ जाओ, ताश खेलेंगे

"कौन सा खेल ?" ठिगने क़द वाले अमरीकी ने भीतर आते हुए पूछा।

"वही जिस में गुलाम बेगमों से बड़े होते हैं।"

वह चौथी कुर्सी पर अपनी कोरियाई लड़की के साथ बैठ गया। जूस के पूछने पर उसने अपना नाम "सिम्पसन" बताया।

लाइम ने पूछा "सिम्पसन! तुम्हारा कहीं उस बड़े सिम्पसन घराने से तो कोई सम्बध नहीं?

"है!"

"क्या सम्बन्ध है?"

"वही गुलामों का सम्बन्ध है। वे मालिक हैं मैं गुलाम हूँ। हम सब गुलाम हैं। सब छोटे सिम्पसन बड़े सिम्पसनों के गुलाम हैं। अच्छा आओ, ताश फेंटो। लाओ मैं काटता हूँ। अच्छा सारजंट, बताओ तुम किस के गुलाम हो?"

सारजंट ने कहा "मैं ईंट का गुलाम हूँ" और फिर उसने अपनी गोद में बैठी हुई लड़की की ओर संकेत करके कहा "और यह मेरी गोद में ईंट की बेगम है।"

जूस ने कहा "मैं चिड़िया का गुलाम हूँ और यह मेरी चिड़िया है।"

ठिगने क़द वाले ने कहा "देखना कहीं फुर से उड़ न जाय।"

लाइम ने हंस कर कहा "यह मेरी पान की बेगम है जिस पर सारजंट की नज़र है और मैं इसका गुलाम हूँ।" फिर उसने सिम्पसन की ओर मुड़ कर कहा "अब तुम्हारे लिए तो पसंद का सवाल ही नहीं रहा। तुम तो हुकम के गुलाम हो।"

सिम्पसन ने कहा "गुलामों के लिए पसंद का सवाल ही कहां पैदा होता है, वह तो हमेशा हुकम के गुलाम होते हैं। चाहे वह मेकार्थर का हुकम हो या ट्रूमैन का, या उससे किसी बड़े सेठ का हुकम हो जिस का बैंकों, तेल के चश्मों और लोहे के कारखानों पर कब्ज़ा हो।"

कार्टन ने अपनी पेटी ढीली करते हुए कहा "अब अपनी गंदी

राजनीति बन्द करो और खेल शुरू करो।"

सिम्पसन ने कहा "मैं हाज़िर हूँ। चलिये, लेकिन खेल की शर्त क्या है?"

कार्टन ने कहा "शर्त में ये लड़कियां बदी जायेंगी। तुम हुकम के गुलाम हो और यदि तुम्हारे पास हुकम की बेगम आती है तो यह लड़की तुम्हारे ही पास रहती है लेकिन यदि यह हुकम की बेगम लाइम के पास निकल आती है तो यह लड़की तुम्हारी गोद से उठकर लाइम के पास चली जायेगी। इसी प्रकार मैं ईंट का गुलाम हूँ लेकिन यदि मेरे पास पान की बेगम निकल आती है......" "जिस का कोई चांस नहीं" लाइम ने बात काटकर कहा।

कार्टन ने सुर्ख होकर कहा "तो पान की बेगम मेरी हो जायेगी। इस प्रकार यदि किसी के पास चार बेगमें इकट्ठी हो जायें तो वह चारों लड़कियाँ जीत लेगा। ग्रांड नीलाम!"

जूस ने प्रसन्न होकर कहा "बहुत अच्छा खेल है। अब जल्दी से ताश फैंटो...।"

वे लोग ताश फैंट कर खेल में मग्न हो गये। काफ़ी देर तक किसी के पास कोई बेगम न निकली। फिर लाइम के पास ईंट की बेगम निकल आई और सारजंट को अपनी गोद खाली करनी पड़ी। फिर सिम्पसन के पास चिड़िया की बेगम निकल आई और सिम्पसन ने जूस से कहा "मैंने कहा था ना, तुम्हारी चिड़िया फुर से उड़ जायेगी"।

उसके तुरंत ही बाद सिम्पसन को अपनी लड़की से हाथ धोने पड़े और वह उठकर सारजंट की गोद में चली गई। उसके कुछ समय बाद सारजंट के पास ईंट की बेगम निकल आई और अब उसके पास दो लड़कियाँ हो गईं, लेकिन जो बेगम वह अपने पत्तों से निकालना चाहता था वह उसके पास न आती थी और लाइम बराबर मुस्करा रहा था और सारजंट को ताने दे रहा था "पान की बेगम अपने गुलाम के पास बहुत प्रसन्न है, वह तुम्हारे पत्तों में कभी न आयेगी, सारजंट!"

एकाएक बाहर एक ज़ोर का धमाका हुआ और सारजंट, लाइम और जूल उठकर तुरंत बाहर चले गये। यद्यपि सिओल विजय हो चुका था लेकिन शहर के बीच में एक मील के क्षेत्रफल में अभी तक गलियों, कूचों और बाज़ारों और इमारतों के भीतर लड़ाई जारी थी और शहर के अन्य भागों में भी कहीं कहीं गोरीला कोरियाओं के घोंसले अपनी मशीनगनों से अमरीकी जानों का नुकसान कर रहे थे...

जब सारजंट लाइम और जूल वापस भीतर आये तो उन्हें ऐसा मालूम हुआ जैसे भीतर का वातावरण थोड़ा-सा बदल चुका है। उन्होंने संदेह की नज़र से सिम्पसन की ओर देखा, लेकिन सिम्पसन चुप-चाप अपने पत्ते उलटने में व्यस्त था। लड़कियाँ चुपचाप अपनी-अपनी कुरसी पर बैठी थीं।

लाइम को संदेह हुआ जैसे उसने अपनी पान की बेगम के चेहरे पर एक हल्की-सी मुस्कराहट की झलक देखी है; लेकिन नहीं, यह उसका भ्रम था। उसने अपनी गुलामी कबूल कर ली थी और अब बड़ी गंभीरता से फिर उसकी गोद में बैठ गई थी।

सिम्पसन ने पूछा "धमाका कैसा था ?"

सारजंट ने कहा "सामने के बड़े बाज़ार के चौक में एक बड़ी इमारत को हमारे जहाज़ों ने बमबारी से उड़ा दिया है। उसमें एक सौ गोरीले लगातार सात दिनों से लड़ रहे थे और उन पर विजय पाने की कोई सूरत न थी—सिवाय इसके कि उन्हें बिल्कुल खत्म कर दिया जाये।"

"बहुत खूब" सिम्पसन ने कहा, "अब आगे चलो। भगवान की कृपा है कि इस इमारत पर अपना पूरा कब्ज़ा हो चुका है। यहां कोई सुर्ख नहीं है।"

खेल फिर शुरु हुआ। कभी सारजंट के पास दो लड़कियां हो जातीं कभी लाइम के पास, कभी जूल के पास। एक बार तो सारजंट के पास तीन लड़कियां हो गईं, लेकिन पान की बेगम उसके पास कभी न निकली और वह बड़ी झुंझलाहट के साथ खेलने लगा। अब लाइम

बात बात में उसे ताने देने लगा—"जाने क्या बात है पान की बेगम तुम्हारे पास नहीं निकलती।" पान की बेगम अब तक जूस के पास पहुँच चुकी थी और सिम्पसन के पास भी, लेकिन सारजंट की गोद पान की बेगम से खाली थी। समय गुज़रता जा रहा था। संध्या का अंधकार बढ़ने लगा। बाहर से गोरीला मशीन-गनों के घोंसलों से आवाज़ें तेज़तर हो गई थीं, लेकिन सारजंट के पास पान की बेगम न आई। उस के तीन साथियों ने उसे खेल बन्द कर देने को कहा लेकिन सारजंट नहीं माना। आखिर लाइम ने उससे कहा "जाओ सारजंट, मैं अपनी पान की बेगम तुम्हें मुफ़्त में देता हूं", लेकिन सारजंट को इसमें अपना अपमान नज़र आया और वह और भी गंभीरता से खेलने लगा। आखिर जब संध्या बहुत गहरी हो गई तो सिम्पसन ने एकाएक कहा "भई, बहुत हो चुका, अब खेल का अंतिम दाव चलो और बात ख़त्म करो," सारजंट ने कहा "अच्छा अंतिम दाव सही लेकिन पत्ते मैं काटूंगा।"

लाइम मुस्कराते हुए ताश फैंट रहा था, सिम्पसन ने कहा "पत्ते फैंटने की बारी तुम्हारी है लेकिन मुझे फैंटने दो।"

"क्यों?" लाइम बोला।

सिम्पसन ने मुस्करा कर कहा "अन्तिम दाव है, बात मान जाओ।"

लाइम ने ताश को सिम्पसन के हवाले कर दिया। सिम्पसन ने सारजंट की ओर देखा, लाइम की ओर देखा। दोनों की नज़रें ताश पर गड़ी थीं। सिम्पसन धीरे धीरे ताश फैंटने लगा।

लाइम ने कहा "शफ़ल।"

सारजंट बोला "री-शफ़ल।"

सिम्पसन ने ताश को फैंट कर मेज़ पर रख दिया। सारजंट ने कहा "मैं काटूंगा।"

लाइम ने श्वास रोक कर धीरे से सिर हिलाया।

सारजंट ने ताश काट कर पत्ता उठाया। पान की बेगम थी।

लाइम खड़ा हो गया। उसने भारी आवाज़ में कहा "यह धोखा है

सिम्पसन तुम से मिल गया है। यह जाल-साज़ी हुई है।"

"इसका क्या सबूत है" सारजंट ने चिल्ला कर कहा। अब वह भी कुरसी पर से उठ खड़ा हुआ था।

"इसका सबूत यह है" लाइम ने कहा "कि मैंने अन्तिम दाव समझ कर पान की बेगम का पत्ता पहले ही निकाल लिया था।"

"यह देखो", लाइम ने अपने हाथ में पान की बेगम का पत्ता दिखाया।

सिम्पसन बोला "मुझे मालूम था। इसलिए मैंने जालसाज़ी पर जालसाज़ी की और एक दूसरी पान की बेगम सारजंट के पत्तों में रख दी......मैं सदैव जालसाज़ों के साथ जालसाज़ी करता हूँ......उधर घर पर मेरा यही पेशा था।"

लाइम ने पिस्तौल निकाल लिया लेकिन बिल्कुल उसी समय दरवाज़े पर एक अमरीकी सिपाही लड़खड़ा कर गिर पड़ा और गिरते हुए बोला "गोरिला इमारत के भीतर आ पहुँचे हैं उन्होंने नीचे की गार्द का सफ़ाया कर दिया है, जल्दी से भागो।"

लाइम, कार्टन, जूस, सिम्पसन, सभी, लड़कियाँ छोड़ कर भागने लगे। इतने में पान की बेगम ने चिल्ला कर कहा "ठहरो।"

अमरीकी सिपाहियों ने मुड़ कर देखा। पान की बेगम के हाथ में पिस्तौल था। क्षण भर के लिए वह बिल्कुल आश्चर्य चकित से खड़े रह गये। पान की बेगम ने चिल्ला कर टूटी फूटी अंग्रेज़ी भाषा में कहा "तुम ने सोचा था कि इस इमारत में कोई सुर्ख़ नहीं है लेकिन तुम भूल गये कि पान की बेगम का रंग सदैव सुर्ख़ होता है।"

इतना कह कर उसने लाइम की छाती पर पिस्तौल चला दिया। ठीक उसी समय लाइम ने भी गोली चलाई और जूस और कार्टन ने भी और उसी समय उधर सीढ़ियों से भी किसी के गोली चलाने का स्वर सुनाई दिया।

थोड़े समय के बाद सब ओर सन्नाटा छा गया! गोरीलाओं ने सारी इमारत पर फिर से कब्ज़ा कर लिया और जगह-जगह मशीन गनों के घोंसले जमा दिये। सीढ़ियों के निकट ही दरवाज़े पर कार्टन, सिम्पसन, जूस और लाइम की लाशें पड़ी थीं और दरवाज़े पर एक और अमरीकी सिपाही की लाश थी और भीतर वे तीन कोरियाई लड़कियां भी मुर्दा पड़ी थीं जिन्हें उनके अमरीकी खरीदारों ने नीलाम-घर से खरीदा था और इस संसार से जाते हुए उनका भी अंत कर दिया था। चौथी लड़की पान की बेगम भी सख़्त घायल हो गई थी और उसके ऊपर एक गोरीला झुका हुआ था और उसके कन्धे झंझोड़-झंझोड़ कर कह रहा था। "मिगं, मिगं! उठो, होश में आओ, मैं आ गया, तुम्हारा हकहू। मिगं आँखें खोलो एक क्षण के लिये..."

मिगं ने आँखें खोलकर हकहू की ओर देखा। उसके पतले ओठों पर एक अत्यन्त दर्द-भरी मुस्कराहट आई। उसने धीरे से अपनी बाँह उठाकर हकहू के कंधे पर रख दी और कोमल स्वर में बोली: "हकहू ...मुझे क्षमा कर दो। मैंने अंतिम दम तक तुम्हारा कहना नहीं माना और गोरीला सेना में भरती होने से इनकार कर दिया, मुझे इस खतरे का पता न था..."

हकहू ने परेशान होकर कहा "लेकिन तुम यहाँ कैसे आगईं मिगं?"

मिगं बोली "मैं आई नहीं, लाई गई हूँ। ज़बरदस्ती। मेरी तरह और भी चार सौ लड़कियां थीं।"

"चार सौ?" हकहु ने बड़ी परेशानी से पूछा।

"हां हकहू हम चार सौ थीं।" मिगं ने धीरे से रुक-रुक कहा।

हकहू ने पूछा "फिर क्या हुआ?"

मिगं ने कहा "वे मुझे बालों से पकड़ कर घर से बाहर घसीट लाये। पहले मैं नंगी की गई, फिर एक नीलाम घर में जानवर की

तरह बेची गई, फिर ताश के पत्तों की तरह खेली गई। हकहू ! क्या हम लोग जानवर हैं ? ताश के पत्ते हैं...?

हकहू मौन रहा। उसके हृदय में तूफ़ान उठ रहे थे। लेकिन वह उस समय बोल न सकता था। वह सिर से पाँव तक कांप रहा था।

मिगं फिर धीरे से बोली "लेकिन मैंने बदला ले लिया है हकहू ! तुम्हारी मिगं ने उसके खरीदने वाले को अपनी गोली का निशाना बना दिया। वे लोग चुपचाप बैठे थे। मैंने धीरे से एक की पेटी में से पिस्तौल निकाल लिया...उसे पता भी न चला...

हकहू के पथरीले चेहरे पर प्रसन्नता की किरनें दौड़ गई। उस ने मिगं के सिर को सहारा देकर बड़े प्यार से कहा "मिगं मैं जानता था कि तुझे कभी न कभी गोरीला बनना पड़ेगा। काश तू पहले ही बन जाती। कितनी गहरी खंदकों में, कीचड़ से भरे हुए गढ़ों में और पहाड़ों की ग़ारों में मुझे तेरी याद आई है लेकिन हर बार मैंने तेरी याद को घृणा की गाली देकर, अपने भीतर से बाहर फैंक दिया .."

मिगं जो गोरीला न बन सकी। मिगं जो अपने देश के लिये लड़ न सकी।

मिगं का दूसरा हाथ भी ऊपर उठ गया। उसने धीरे से कहा "अब तो अपनी मिगं को क्षमा कर दो। वह इस संसार से जा रही है।"

मिगं के ओठों से रक्त बह निकला, रक्त और थूक जिसे हकहू ने अपने हाथों से पोंछ दिया और मिगं की आँखें फिर बन्द हो गईं और वह बड़ी कमज़ोर आवाज़ में बोली : "याद है हकहू, जब तुम पहली बार हमारे गाँव में आये थे और मैं अपने घर के बाहर सफ़ेदे के झुंड तले तुम्हें मिली थी और तुम ने शांति की अपील का कागज़ मेरे सामने बढ़ा दिया था।"

"याद है" हकहू ने कहा "...वह बहार के दिन थे तुम्हारे गाँव

में आड़ू के वृक्षों पर श्वेत-श्वेत फूल खिले हुए थे। वही फूल तुम्हारे बालों में भी चमक रहे थे।"

"और वह चांदनी रात भी याद है" मिगं बोली "जब प्रेम हमारे दिलों से बांसुरी का संगीत बनकर फूटा था। तुम बांसुरी बजा रहे थे। मैं तुम्हारी गोद में थी और हमारे सिर के ऊपर शमशाद के पत्ते झूल रहे थे। वे पत्ते जिनका रङ्ग एक ओर से सब्ज़ होता है, दूसरी ओर से चांद की तरह श्वेत होता है और आँखों में कभी पीला झलकता है और कभी चाँद..."

"याद है" हकहू ने भर्राये हुए स्वर में कहा" उस समय अभी अमरीकी सिपाहियों ने उस गांव को जलाया नहीं था..."

मिगं ने आँखें खोल कर हकहू की ओर देखा और बिल्कुल मद्धम स्वर में कहा "और उस रात हमने सोचा था कि संसार में शांति होगी और हम अपना छोटा-सा घर बसायेंगे। जिसके भीतर एक छोटा-सा बुत होगा। एक छोटा-सा बच्चा होगा। हमारा पहला बच्चा। और आंगन में चेरी के फूल होंगे और तुम मेरे हाथ की पकी हुई रोटी खा कर धान के खेतों में काम करने जाओगे..."

और हकहू को वह सब कुछ याद आया और उसकी जवानी की तस्वीर, उसके प्रेम का प्रकाश। एक बन्दी चक्कर में एक दिये की तरह जलता नज़र आया फिर वायु के एक ही झोंके से उसकी जवानी बुझ गई, उसका प्रेम मर गया और उसे लगा जैसे मिगं के हाथ ठंडे पड़ गये हैं और उसकी आँखें खुली की खुली रह गई हैं, वे आँखें जो हकहू के प्रेम, छोटे से घर, शमशाद के वृक्ष, बच्चों की हँसी और चेरी के फूलों के लिये तरसती हुई खुली की खुली रह गईं। और हकहू को लगा जैसे उसके अपने गाल गीले हो गये हैं और उसने धीरे से अपने खुरदुरे हाथ से अपने गालों की नमी को दूर किया। धीरे से मिगं की आँखें बन्द कर दीं, धीरे से उसके चेहरे पर अपनी फ़ौजी टोपी डाल

दी, धीरे से अपना कोट उतार कर उसके शरीर पर डाल दिया और धीरे-धीरे उल्टे पांव कमरे से बाहर निकल आया।

बाहर बरामदे में अक्तूबर की शरद रात थी। नग्न आकाश पर तारे ठिठुर रहे थे। कहीं-कहीं कोई ज़ोर का धमाका होता। कहीं कोई इमारत गिर जाती और फिर लाल शोले क्षितिज पर लहराने लगते। फिर दूर से और नज़दीक से मशीनगनों के चलने की आवाज़ें आतीं और फिर एक दम सन्नाटा छा जाता। ऐसे ही सन्नाटे के क्षणों में हकहू ने बरामदे में खड़े-खड़े एक क्षण के लिये सोचा। आज मिर्गी बहुत दूर चली गई है और मेरे कोरिया के लिये काली अंधेरी रात है। लेकिन क्या संसार के लोग अपने घरों में बैठे हुए यह कभी नहीं सोचते हैं कि किस तरह आज कोरिया अपने रक्त से शांति की अपील पर हस्ताक्षर कर रहा है।

हकहू ने घूर कर रात के अंधकार में देखा जैसे वह उस काली भयानक रात के अंधेरे विस्तार से अपना उत्तर चाहता हो। एकाएक रात का सन्नाटा गोरीला मशीन गनों के शोर से भंग हो गया और जैसे हकहू को अपना उत्तर मिल गया और उसने मुस्करा कर अपनी गन के ज़बड़े में कारतूस की पेटी अच्छी तरह जमा दी और अपने मोर्चे पर जम कर बैठ गया।

उसने धीरे-धीरे अपने कारतूसों को गिना जैसे वह मोतियों के दाने गिन रहा हो। उन्हें गिनते-गिनते उसके ओठों पर एक गर्वपूर्ण मुस्कराहट उभर आई और उसने अपने आप से कहा—हम न जानवर हैं, न ताश के पत्ते। हम कोरिया के आज़ाद मनुष्य हैं। दुश्मन हमारे देश के कोने-कोने पर कब्ज़ा कर सकता है लेकिन हमारे दिल का एक

कोना भी उसे नहीं मिल सकता और जब तक हमारे दिल आज़ाद हैं हमारा कोरिया आज़ाद रहेगा। बेशक आज रात काली है लेकिन इस में कहीं-कहीं तारे भी हैं। बेशक आज सिओल जल रहा है लेकिन सिओल जलते हुए भी लड़ रहा है। सिओल को सामराजी कभी नहीं जीत सकते। सिओल कोरिया का दिल है।

: ५ :

मैं इन्तज़ार करूंगा

ज़ीई देखने में बड़ी नाज़ुक और सुबक थी। उसकी सुन्दरता मिंग वंश की किसी पुरानी चीनी सुराही की तरह थी जो किसी अमीर घर के फूलदार ताक में या ऊँचे-ऊँचे शीशों वाले दरीचे में अपना अछूतापन लिए जगमगा रही हो। पहले दिन जब मैं कागज़ के फूल बेचने निकला तो मुझे वह बिल्कुल इसी तरह नज़र आई जिस तरह मैंने अभी बयान किया है। वह अपने बूढ़े बाप हांग के साथ क्राफ़ोर्ड मार्केट के तिराहे पर कागज़ के फूल, शगूफ़े, बेलें, गमले, टहनियां, टोकरियां, टोपियां और पंखे उठाये खड़ी थी। शरद ऋतु थी और उसने नीले रंग की एक सदरी पहन रखी थी और नीले रंग का एक पायजामा जिसमें भी रुई की तह सिली हुई थी। उसके पांव बंधे हुए नहीं थे अर्थात् वह उन पुरानी चीनी औरतों में से नहीं थी जिनकी चाल देखकर सदैव सरकस के तने हुए रस्से का ख्याल आता है जिस पर सरकस वालियां छाता हाथ में लेकर अपना संतुलन कायम रखने की कोशिश किया करती हैं।

बूढ़े हांग का चेहरा एक सूखे हुए सीताफल की तरह था। संसार के ऊंच-नीच ने उसे अच्छी तरह कूट-पीट कर उस पर तरह तरह के निशान बना दिये थे। उसके चेहरे को देख कर आप एशिया के पिछले पचास वर्ष का इतिहास पढ़ सकते हैं। आँखों में भय और चालाकी और अंधी मूर्खता! आंखों के गिर्द स्याह हलके और झुर्रियों की रेखायें।

पराधीनता की ज़ंजीर-दर-ज़ंजीर। बायें गाल पर एक घाव का स्याह निशान जो गाल की हड्डी से शुरू होकर जबड़े तक चला गया था। यह घाव उसे हांगकांग में मिला था जब रिक्शा को धीमा चलाने के दोष में उसे एक गोरे ने धर के पीटा था। ठोकरों से, मुक्कों से और चाबुक से। ऐसे ऐसे उसकी पीठ पर और शरीर के अन्य भागों पर अनेक निशान थे। अत्याचार के इतिहास के काले संगे-मील जो उसके जीवन में एक शिकारी की तरह उभरे और एक कसाई की तरह अपनी निर्दयता के चिन्ह छोड़कर आगे चले गये। बहार कैसे आती है, शगूफ़े कैसे फूटते हैं, फूल कैसे खिलते हैं, फूलों से बोझल टहनी कैसे सिर झुकाती है? इन चीज़ों का उसे कुछ पता न था। उसके जीवन ने पहले तो एक बहुत बड़ी भूख देखी, फिर एक बहुत बड़ी चट्टान देखी, फिर एक बहुत बड़ा मरुस्थल देखा। और जब वह यहाँ तक पहुंचा तो उसके साहस ने उसे जवाब दे दिया और उसने सोच लिया कि संघर्ष करना व्यर्थ है। जीवन ऐसा है और ऐसा ही रहेगा। इसमें अनगिनत लोग पिसते हैं और गिनती के लोग मज़े करते हैं। गिनती के लोग इज़्ज़त पाते हैं और अनगिनत लोग बेइज़्ज़ती सहते हैं। गिनती के लोग अत्याचार करते हैं और अनगिनत लोग अत्याचार सहते हैं। और इसका कोई हल नहीं है, क्योंकि महान देवताओं ने जो आकाश के ऊपर रहते हैं, यह जीवन ऐसा ही बनाया है। इसमें परि-वर्तन उत्पन्न करना भी पाप है और जब उसने यह सोच लिया तो उसने अपने बादबान गिरा दिये, अपना मस्तूल झुका दिया और अपनी नाव को खींच कर बम्बई के तट पर ले आया। अब वह दस वर्ष से बम्बई के एक गंदे मुहल्ले कमाठी पुरा में रहता था। अफ़्यून खाता था, चंडू पीता था और कभी कभी क्रोध आने पर अपनी पहली पत्नी की बेटी ज़ीई को पीट भी लिया करता था। आठ वर्ष इसी शग़ल में अच्छे निकल गये लेकिन आकाश के महान देवताओं को भला उसका आराम और शांति कहाँ भाती थी! इसलिए उन्होंने उसकी वेश्या पत्नी को भी

उससे छीन लिया और जब वह कुछ दिन बीमार रहकर परलोक सिधार गई तो बूढ़े हांग को और उसकी बेटी ज़ीई को जो अब जवान हो गई थी कागज़ के फूल और पंखे बेचने का धंधा करना पड़ा।

और आज आकाश के देवताओं ने उस पर एक और अनर्थ ढाया अर्थात् मुझे उसके बराबर फूल बेचने पर मजबूर करके क्राफ़ोर्ड मार्केट भेज दिया। बूढ़े हांग की आँखों में भय और चालाकी और अंधी मूर्खता की गहरी घृणा मुझे देखकर चमक उठी और उसने अपनी बेटी से चीनी भाषा में कुछ कहा और उसने भी मेरी ओर घृणा से देखकर मुंह फेर लिया।

हालांकि मैं इस घृणा का पात्र न था। मुझे भी विवश कर दिया गया था। वास्तव में मैं एक महान कलाकार बनना चाहता था। रंगों से मुझे शुरू ही से बड़ी दिलचस्पी थी और दसवीं श्रेणी तक मुझे जिस क्लास में सब से अधिक दिलचस्पी थी वह यही आर्ट की क्लास थी। मैं दिन भर चित्र बनाता रहता। तरह तरह के फूल और नक्शो-निगार उजागर करता रहता और अन्य विषयों की ओर बहुत कम ध्यान देता। परिणाम स्वरूप मैं दसवीं श्रेणी में फेल हो गया और मेरे चचा ने जो मेरे मां बाप के मर जाने के बाद मेरा खर्चा पूरा करते थे मुझे आगे पढ़ाने से इनकार कर दिया और उसके थोड़े दिनों के बाद जब उनके दफ़्तर में छँटनी हुई और वह बाहर निकाल दिये गये तो उन्होंने भी अपने घर में छँटनी की और मुझे बाहर निकाल दिया। अब मुझे वहाँ सोना पड़ा जहाँ कुछ एक कमीनों को छोड़कर बम्बई के सारे शरीफ़ आदमी सोते हैं अर्थात् फुट-पाथ पर। फुट-पाथ पर सोते सोते पहले दो-चार दिन तो मुझे बड़े विचित्र विचित्र सपने आये यानी मैंने देखा कि मेरे पास एक पेकार्ड गाड़ी है और मेरे चचा उसके ड्राइवर हैं। मैं विश्वविद्यालय का वाइस-चांसलर हूँ और उन प्रोफ़ैसरों को डांट रहा हूँ जिन्होंने मुझे दसवीं में फेल कर दिया था। मैं पैरिस में हूँ और संसार के बड़े-बड़े कलाकार मुझे अपने चित्र दिखाते हैं और

मैं घृणा से उनकी ओर देखकर कहता हूँ "छिः ! क्या बेहूदी कला है तुम्हारी !" लेकिन इसके बाद जब मुझे दो चार फ़ाके लगे और रात को सपनों में भी रोटियां नज़र आने लगीं तो मैंने सोचा कि कुछ न कुछ करना चाहिये। सब से पहले मैंने क्लर्की की कोशिश की। मालूम हुआ कि क्लर्की के लिए ग्रैजूएट होना, और ग्रैजूएट होकर किसी बड़े आदमी का साला होना, बहुत ज़रूरी है। इसके बाद मैंने एक नाई के यहां नौकरी कर ली। नाई बाल काटता था, मैं सिर पर ब्रुश फेरता था। थोड़े दिनों में नाई ने अपनी दुकान बन्द कर दी, क्योंकि उसे शीघ्र ही मालूम हो गया कि बम्बई में फ़ाके, बेकारी, भूख और राशन से लोगों के सिर के बाल उड़ते जा रहे हैं। पहले लोग नाई से बाल कटवाने के लिए आते थे, अब खाली सिर पर ब्रुश फिरवाने के लिए आने लगे और नाई ने विवश होकर अपनी दुकान बन्द कर दी। आजकल वह वरसोवा में मछलियाँ पकड़ता है। इसके बाद मैंने मिल में नौकरी की, फिर स्ट्राइक की, फिर पकड़ा गया। फिर तीन महीने जेल में बन्द रहा। उसके बाद मिल-मालिकों ने सब जगह मेरा हुक्का-पानी बन्द कर दिया यानी जात से बाहिर कर दिया। अब मुझे किसी मिल में काम नहीं मिलता था। विवश हो मैंने खोंचे वाले का काम किया, ईरानी होटल में नौकरी की। लेकिन कहीं पांव न जमे। आखिर सोच-सोच कर मैंने कागज़ के फूल तय्यार करके उन्हें क्राफ़ोर्ड मार्केट के सामने बेचने का काम शुरू किया। एक समय से मैं देख रहा था कि यहां इन फूलों की अच्छी खासी बिकरी हो जाती है। बहुत से चीनी इस कारोबार में लगे हुए हैं। कुछ एक देशी लोग भी हैं लेकिन हाथ की सफ़ाई में उनका मुकाबिला नहीं कर सकते। इसलिए दो चार दिन के बाद ही क्राफ़ोर्ड मार्केट के सामने से कहीं और चले जाते हैं। या शायद कुछ और धंधा करते होंगे। इसलिए यहां जो चीनी फूल बेचने वाले नज़र आते हैं वह बराबर नज़र आते हैं। लेकिन अपने देसी लोग जो नज़र आते हैं वे कभी-कभी नज़र आते हैं और कभी-कभी गुम हो जाते हैं।

दो तीन चीनी कालबादेवी रोड को जाने वाली सड़क की ओर खड़े रहते हैं। दो चार बोरी बन्दर जाने वाली सड़क के सामने, दो चार मंगलदास मार्केट के सामने मौजूद होते हैं। हां क्राफ़ोर्ड मार्केट के सामने जहां ट्राम का जंकशन है वहां मैं केवल बूढ़े हांग और उसकी लड़की ज़ी ई को देखता था। मैंने सोचा, यहाँ ज़रा मुकाबिला कम है। बिकरी की गुंजाइश अधिक होगी इसलिए मैं भी अपने फूल पत्तियां लेकर वहीं जम गया। मेरा जमना वहां इतना ही ज़रूरी था जितना बूढ़े हांग और उसकी बेटी ज़ी ई का मुझे घृणा की नज़र से देखना।

ख़ैर, बूढ़े हांग की घृणा की तो मुझे इतनी परवाह नहीं थी लेकिन ज़ीई ऐसी जवान और सुन्दर लड़की की घृणा मैं कैसे सहन कर सकता था। और फिर यह बात भी नहीं थी कि मेरे फूल उन से बुरे थे। फूल काटने का सलीका मुझे आ गया था यद्यपि जेब काटने का सलीका अभी तक न आया था। क्रसंथम के गुम्फे दार फूल ऐसे अच्छे बनाये थे मैंने कि रात की पार्टियों में शामिल होने वाले सस्ते किस्म के भावुक लोग उन्हें हाथों-हाथ खरीद कर ले गये। मेरे गमलों में जंगली बेलों के सुर्ख़ गुलाब देखकर आप बुलबुल का चहकना सुन सकते थे और श्वेत चमेली के फूलों के साथ झालरदार पत्ते इतने अच्छे कतरे थे मैंने कि लोग उन श्वेत फूलों को उन झालरदार पत्तों के साथ नकली सुगंधि लगाकर अपने ड्राइंग रूम सजाते हैं और नकली आचार पर अमल करते हुए नकली स्वर्ग को सिधार जाते हैं। अतएव जब संध्या हुई तो मैंने अपने सब फूल बेच दिये। केवल गुलाब की एक डंडी रह गई जिसे मैंने ज़ीई के हवाले कर दिया ताकि वह उसे अपने बालों में टांक ले। लेकिन ज़ीई ने बड़ी सख़्ती से उस डंडी को तोड़ मरोड़ कर परे फैंक दिया और बूढ़े हांग ने मुझे क्रोध से घूर कर कहा "आज तो मैंने तुम्हें क्षमा कर दिया है लेकिन अगर कल को तुम यहां मुझे नज़र आये तो या तो गुंडों से पिटवा दूंगा या पुलिस से कह कर तुम्हें गिरफ़्तार करवा दूंगा।"

मैं ने कहा "पुलिस सब की है, पुलिस वाला क्या तुम्हारा चचा लगता है ?"

हांग ने कहा—"मैं यहां खाली खड़े होने के लिये पुलिस के संतरी को आठ आने देता हूं ।"

मैंने अपनी भरी हुई जेब के सिक्के खनखनाये और उससे कहा, "तुम अठन्नी दोगे तो मैं बारह आने दूंगा और दूसरे दिन जब पुलिस का संतरी आया तो मैंने यही किया । इस पर बेचारा हांग विवश हो कर रह गया और अंत में उसे मुझ से समझौता करना ही पड़ा । समझौते की पहली शर्त यह थी कि मैं उसकी लड़की को भगा कर नहीं ले जाऊंगा । दूसरी शर्त यह थी कि जो फूल वे बेचते हैं वे मैं तय्यार नहीं करूंगा । तीसरी शर्त यह थी कि मैं कागज़ के फूलदार पंखे लाकर नहीं बेचूंगा । यह उन्हीं की मनापली रहेगी । अंतिम दो शर्तें मैंने मान लीं लेकिन ज्यूं ज्यूं दिन गुज़रते गये और मुझे ज़ीई अच्छी से और अच्छी लगने लगी, मुझे वह पहली शर्त अखरने लगी । लेकिन ज़ीई मेरी ओर कोई ध्यान न देती थी और यह बड़ी आशावर्धक बात थी क्योंकि मैं अपने छोटे से जीवन के छोटे से तजुर्बे की बिना पर यह अवश्य जानता था कि जो लड़कियां पहली मुलाकात ही में चपड़-चपड़ बातें करने लगती हैं वह बहुत खतरनाक होती हैं और यदि गलती से भी आप का हाथ उनके कांधे से छू जाए तो तुरन्त पुलिस तक मामला ले जाती हैं—लेकिन ज़ीई ऐसी न थी, वह मुझ से बहुत कम बात करती थी और अक्सर अपने गिलाफ़ी पपोटों के भीतर से मुझे यूं देखती थी कि मैं सोचता था शायद इन गिलाफ़ी पपोटों के भीतर की आंखों के भीतर और भी कई आंखें बन्द हैं जो मुझ को नज़र नहीं आती हैं । और मेरा दिल उसकी नज़र के सामने यूं कांपने लगता था जैसे स्कूल का बच्चा हैड मास्टर के बैंत के सामने ।

बूढ़े हांग ने मेरे दिल की हालत का अंदाज़ा करके एक दिन जब

ज़ीई उसके साथ नहीं आई थी, मुझ से पूछा "तुम ज़ीई से शादी करोगे ?"

"शादी ?" मैंने चौंक कर कुछ उस से, कुछ अपने आप से, पूछा।

"हां, हां !" बूढ़े हांग ने एक बड़ी ही चालाक मुस्कराहट के साथ अपने टूटे हुए दांतों वाला मुँह खोलते हुए कहा "ज़ीई से शादी करोगे ? और अब तुम कर भी सकते हो। कमाते हो, सूरत-शकल भी अच्छी है, पढ़े-लिखे भी हो और मेरी ज़ीई भी कुछ ऐसी-वैसी नहीं है। वह अंग्रेज़ी भी पढ़ सकती है और चीनी भी। सारे कमारी पुरा में इस जैसे फूल और कोई नहीं तैयार कर सकता। न अंग्रेज़ी टोपियां, न पंखे ! वह कोई उजड्ड गंवार नहीं है।"

मैंने कहा "अच्छा मैं ज़ीई से शादी करलूंगा हालांकि मेरा इरादा इसे भगाकर ले जाने का था।"

हांग बोला "वह मैं जानता हूँ। ऐसा बुद्धू नहीं हूँ। आदमी की नज़र पहचानता हूँ लेकिन तुम मेरे जीते जी इसमें कभी सफल नहीं हो सकते।"

मैंने कहा "कोशिश तो की जा सकती है। सफलता चाहे न हो। यह बात आकाश के देवताओं पर छोड़ देनी चाहिये।"

हांग बोला "यह बात तो मैं पुलिस वालों के सुपुर्द करूँगा। इस मामले में आकाश के देवताओं पर कम भरोसा करता हूँ।"

मैंने कहा "अच्छी बात है, तो मैं भगाने का विचार छोड़ देता हूँ। शादी के लिए मान जाता हूँ। कितने रुपये लोगे ?"

हांग ने इधर-उधर देखकर कहा "एक बूढ़ा मालदार चीनी जिसका फ़ोर्ट में रेस्टोरां भी है, ज़ीई के एक हज़ार देता है। मैंने बूढ़ा समझकर हां नहीं की। तुम्हें छ सौ में दे दूंगा।"

"छ सौ मैं कहाँ से लाऊँगा ?"

हांग ने कहा "किस्तों में दे देना।"

मैं चुप होकर कुछ सोचने लगा।

हांग ने कहा "किस्तों में कोई हर्ज नहीं है। आजकल तो रेडियो, गाड़ी, फ़र्निचर हर चीज़ किस्तों पर मिल जाती है। तुम चालीस-पचास रुपये महीना भी दोगे तो साल भर में अदा हो जायेंगे। अगले साल तुम शादी कर लेना।"

मैंने कहा "मुझे मंजूर है, लाओ हाथ।"

बूढ़े ने हाथ मिलाते हुए और मुस्कराते हुए मुझसे कहा "आज से तुम समझो कि मेरे बेटे हो गये। इसलिये एक अकल की बात कहता हूँ। हर रोज़ अपनी कमाई में से कुछ निकाल कर मुझे देता जा। हर महीने हिसाब करना भी मुश्किल हो जायेगा। रोज़ का रोज़ बचालो तो बच जाता है। महीने के बाद बचाना बहुत मुश्किल हो जाता है। मुझे इस चीज़ का तजुर्बा है।"

मैंने कहा "बहुत अच्छा! रोज़ का रुपया सवा रुपया मुझ से ले लेना। बाक़ी महीने के आख़िर में।"

"शाबाश" कहकर बूढ़े हांग ने फिर मुझ से ज़ोर से हाथ मिलाया, और कहने लगा "मगर ज़ीई के कान में इसकी भनक न पड़ने पाये। न तुम्हारे सलूक से और न तुम्हारी किसी बात से उसे यह पता चले कि हम लोग क्या करने वाले हैं। और हां शादी से पहले मैं उसे तुम से अधिक बात-चीत का मौका भी नहीं दूँगा। हमारे हां यह रिवाज नहीं है।

मैंने कहा "हमारे हां भी यह रिवाज नहीं है।"

बूढ़े हांग ने कुछ खांसने, कुछ हंसने के बीच में कहा "और यह बहुत अच्छा रिवाज है। जब तक स्त्री-पुरुष एक दूसरे से बात न करें, भ्रम बना रहता है। मुझी को लो, जब मैं ने ज़ीई की मां से शादी की, मुझे पता न था कि उस की ज़बान कितनी तेज़ चलती है और उसे भी यह पता न था कि मेरे मुंह से कितनी बू आती है। शादी के बाद दोनों का भ्रम खुल गया। हा, हा, हा!"

"हा हा हा" मैं भी खूब हंसा। फिर एक दम गंभीर होकर मैं ने

उस से पूछा "ज़ीई की ज़बान कैसे चलती है ?"

वह बोला "चिंता न करो। चांदी की घंटी है, चांदी की घंटी।"

इस बात को छः महीने गुज़र गये। मैं अभी तक हांग को डेढ़ सौ रुपये ही दे सका था क्योंकि रोज़गार कई बार मंदा भी पड़ जाता है। लेकिन हांग बेचारा मेरी मजबूरी समझता था। इसलिए चुपके से मैं जो रकम भी देता था कबूल कर लेता था। मेरा सलूक ज़ीई से और ज़ीई का सलूक मुझ से उसी तरह था। यानी वही कम बातचीत और कम ही एक दूसरे की ओर देखना। बल्कि अक्सर तो उस की ओर से विचित्र प्रकार की विमुखता का अनुभव होता जिससे मैं परेशान हो उठता और मैं अपने दिल की बात प्रकट करने के लिए बेचैन हो जाता।

आख़िर एक दिन मुझे इसका अवसर मिल ही गया। मोनसून के दिन थे। मूसलाधार वर्षा हो रही थी। मैं अपने कागज़ के फूलों को लिए ट्राम स्टैंड के भीतर दुबका खड़ा था। मेरे निकट ही एक बूढ़ा मूंगफली पर कोयलों की छोटी-सी हंडिया रखे बैठा था। एक भिख-मंगा लड़का अपने चीथड़ों से बदन ढांपने की असफल चेष्टा कर रहा था और दांत बजा रहा था, उसकी पतली-पतली बांहों पर और टांगों पर खाल मढ़ी नज़र आती थी और उसका पेट आगे को बढ़ा हुआ था। चारों ओर ज़ोर की वर्षा हो रही थी। लोग दुकानों में दुबके खड़े थे। सड़कों पर कहीं-कहीं बन्द विक्टोरिया नज़र आ जाती या फिर बन्द मोटरें शीशे चढ़ाये हार्न बजाती हुई इधर से उधर गुज़र जातीं। खड़े-खड़े दिन ढल गया। संध्या हो गई। बत्तियां जल उठीं लेकिन वर्षा बन्द नहीं हुई। ट्राम और बस का चलना भी बन्द हो गया लेकिन वर्षा बन्द नहीं हुई। मैं चुपचाप छुते हुए ट्राम स्टेएड के एक कोने में अपने कागज़ी फूल लिये ज़ीई और बूढ़े हांग के इन्तज़ार में खड़ा रहा। आज दिन भर से ज़ीई को न देखा था। रोज़ देखता था इसलिये न देखने

की पीड़ा से परिचित था। आज मालूम हुआ कि जिसे रोज़-रोज़ जी-जान से देखा जाये उसे एक दिन का न देखना कितना खल जाता है, कितना बुरा मालूम होता है। आज वर्षा कितनी उदास है। मार्केट के सामने के खम्बे कितने अकेले हैं। सड़क कितनी सुनसान है। ट्राम की लाइन कितनी दूर तक चुपचाप अपनी छाती में किसी अनजाने दुख को छुपाये चली गई है। जीवन जो कल तक कागज़ के फूलों की तरह खिल उठा था आज किस प्रकार एक कली की तरह बन्द हो गया है। जैसे उसने प्रेम के सारे दरवाज़े मुझ पर बन्द कर दिये हों और मुझे बाहर सड़क पर ट्राम स्टेण्ड पर खड़ा करके स्वयं कहीं चली गई हो.

एकाएक किसी ने मेरे निकट आकर मुझ से पूछा "आज कितने के फूल बिके?"

पूछने वाले ने प्रश्न इतने निकट से आकर किया कि उसके श्वास की गरमी मेरे गालों को छू गई और जब मैंने उसे देखने के लिये सिर उठाया तो उसने जल्दी से अपना चेहरा परे हटा लिया और मेरी आंखों में ज़ीई की गिलाफ़ी आंखों की चमक कौंद गई। हां यह ज़ीई ही थी। अकेली! वर्षा में भीगी हुई। सुगन्धि की तरह उड़ती हुई। भीगे बालों में भीगी महक लिए। उसके भीगे-भीगे ओठों पर एक विचित्र सी चमक थी।

मैंने कहा "इस वर्षा में तुम अकेली कैसे आ गईं? हांग कहां है?"

उसने कहा "उन्होंने मुझे आपके पास भेजा है। सवा रुपया लाने के लिये। उनकी तबियत ठीक नहीं है। डाक्टर से दवा लानी है।"

मैंने चुपके से सवा रुपया दे दिया।

वह बोली "यह सवा रुपया कहां से आया आज तो फूल बिके नहीं होंगे?"

मैंने कहा "कल के बचे थे।"

वह बोली "कल भी तो सवा रुपया दिया था।"

मैंने कहा "तुम्हें कैसे मालूम है?"

वह बोली "मैं सब जानती हूं।"

मैं चुप रहा।

वह बोली "कब तक यह सवा रुपया देते रहेंगे?"

मैंने कहा " जब तक छः सौ पूरे नहीं हो जाते।"

ज़ीई ने एक आह भरी, बोली "वह आप से छः सौ ले रहे हैं। एक और से आठ सौ पर मामला कर रखा है। तीसरे से बारह सौ पर सौदा हुआ है। ज़ीई तो एक है शादी तीन जगह कैसे होगी?"

मैं हक्का-बक्का होकर उसके मुंह की ओर देखने लगा।

मेरा आश्चर्य देख वह बोली "ठीक कह रही हूं।"

मैंने क्रोध में आकर कहा "यह बहुत बुरी बात है।"

ज़ीई ने एक आह भरी, बोली "इससे भी बुरी-बुरी बातें हमने देखी हैं।"

लेकिन मैंने तो तुम्हारे साथ कोई बुरा सलूक नहीं किया है। मैंने और भी क्रोधित हो कर कहा।

ज़ीई ने एक बड़े उदास और फीके स्वर में, जिसमें अत्यन्त थकन मौजूद थी, मेरी ओर मुड़ कर कहा, "क्या यह सौदा करने से पहले आपने मुझ से पूछ लिया था? क्या आपको मालूम नहीं था कि चीनी औरत के पांव अब बंधे हुए नहीं हैं? अब वह अपने पांव से चलकर कहीं भी जा सकती है।" जिस ढङ्ग से उसने 'कहीं' कहा, मुझे ऐसा लगा जैसे वह मेरे निकट से उठकर कहीं दूर चली गई है और शायद वह कहीं बहुत दूर चली गई थी। भारत से आगे, बर्मा से, स्याम से, हिन्दचीनी से आगे चीन के खेतों पर उसकी नज़र पड़ रही थी।

वह बोली, बहुत धीरे-धीरे, "आज मुझे अपना देश याद आ रहा है जहां लोग नये जीवन के लिए लड़ रहे हैं। जहां मेरे जैसी लड़कियां भी पुरुषों के कांधे से कांधा मिलाये लड़ रही हैं। एक मैं ही यहाँ पड़ी सड़ रही हूं। काश कोई मुझे कहीं से पर दे दे। मैं आज ही इसी समय उड़कर वहाँ पहुँच जाऊँ जहाँ यह लड़ाई हो रही है।"

"यह कैसी लड़ाई है ?" मैंने आश्चर्य से उसकी ओर देखते हुए कहा। ज़ीई आज बोल रही थी।

उस ने उत्तर नहीं दिया। फिर कुछ देर बाद बोली "तुम जानते हो मेरा असली नाम ज़ीई नहीं है।"

"नहीं ?"

"मेरा असली नाम कुछ और था। यह नाम मैंने स्वयं रखा है। ज़ीई एक बहादुर चीनी लड़की थी जो च्यांगकाईश्रेक के अत्याचार के विरुद्ध वीरता से लड़ती हुई अमर हो गई। मैं भी ज़ीई की तरह लड़ना चाहती हूं।"

"किस लिए ?"

वह बोली "तुम्हें कैसे समझाऊँ—अच्छा कोशिश करती हूँ...... सुनो......जहां हमारा गाँव है वहाँ हान नदी बहती है। हमारे गाँव का नाम क्वाँगशा है। वहाँ पर नाशपातियों के झुँड हैं और आड़ू के पेड़ हैं और नदी के किनारे-किनारे बल्लू के वृक्ष अपनी टहनियाँ नदी पर झुकाये दूर तक चले गये हैं। घाटी के ऊपर, सारे गांव के ऊपर नज़र रखता हुआ बूढ़े सरदार बू का घर है जिस ने मेरे बाप की ज़मीन छीनकर उसे गांव से बाहर निकाल दिया था। उस समय मैं केवल चार वर्ष की थी।"

"गांव से क्यों निकाला ?"

"इसलिये कि कर्ज़ा न दिया जा सका—जो बूढ़े सरदार ने मेरे बाप को मेरे जन्म के अवसर पर दिया था।"

एकाएक मुझे अपने चचा के घर से निकलना याद आगया। मैंने कहा "अरे अब मैं समझ गया।"

"कैसे ?" वह बोली।

"बस अपने तजुर्बे से।"

"अपना तजुर्बा बहुत ज़रूरी है।"

"अच्छा आगे बताओ।"

वह बोली "फिर हम अपने गांव से दूसरे गांव में आ गए। वहां हम दूसरे लोगों के खेतों में मज़दूरी करते रहे। मेरी मां बहुत सुन्दर थी।"

मैंने कहा "इसका मुझे कुछ-कुछ अंदाज़ा होता है।"

ज़ीई शरमाई, कुछ प्रसन्न हुई, बोली "तुम प्रशंसा कर चुको तो आगे चलूँ।"

"अच्छा आगे चलो।"

"चूं कि मेरी मां बहुत सुन्दर थी और हम लोग बहुत निर्धन थे इसलिए वे दूसरे लोग जिनके खेतों में हम काम करते थे हम से काम कराने के बाद ऐश भी चाहते थे। मेरे बाप को यह मनज़ूर न हुआ। इसलिए हम उस गांव से भी निकल आये।"

"फिर?"

"फिर बहुत सख़्त अकाल पड़ा। लोग भूख से मरने लगे। मेरे बाप ने तंग आकर अपनी पत्नी को एक अमीर बूढ़े के हाथ दो हज़ार में बेच दिया।"

"तुम्हारी मां को?"

"हां, उसी को।"

"उन दो हज़ार डालरों से हम लोग हांग कांग आये। सुना था वहां रिक्शा चलाने का अच्छा धंधा है। मेरे बाप ने एक रिक्शा ख़रीद ली और रिक्शा चलाने लगा। गोरे लोग शराब पीकर अक्सर दंगा तो करते ही हैं लेकिन एक दिन एक गोरे ने मेरे बाप को इतने चाबुक मारे कि वह बेहोश हो गया। फिर गोरे ने उसकी रिक्शा को आग लगा दी"

"दो हज़ार डालर जल गये। फिर?" मैंने पूछा।

"फिर मेरे बाप ने मुझे बेचना चाहा लेकिन मैं बहुत छोटी थी। बहुत निर्बल थी, बहुत दुबली पतली थी कोई मुझे खरीदने पर तय्यार न हुआ। आखिर एक पादरी ने मुझे अपने घर में रख लिया, नौकरानी। पादरी की बीबी मुझे अंग्रेज़ी पढ़ाने लगी। वह बड़े अच्छे दिन थे। मैं अच्छी ख़ासी मोटी ताज़ी हो गई। लेकिन मेरे बाप को कोई

नौकरी न मिली। इसलिए उसने एक अंग्रेज़ कम्पनी के गोदाम में चोरी की और पकड़ा गया और उसे दो वर्ष की जेल हो गई।"

मैं चुप चाप सुन रहा था।

वह फिर बोली "उसने चावल चुराये थे गोदाम से। क्योंकि वह भूखा था और वह इसलिए भूखा था कि उसके चावल उसके खेत से चुराकर च्यांग काई शैक की सरकार ने अंग्रेज़ों के गोदामों में भर दिये थे और अमरीकनों के गोदामों में। उन लोगों ने केवल उसके चावल ही नहीं चुराये थे बल्कि उसके खेत भी हथिया लिए थे और सरदार वू को दे दिये थे।"

वह देर तक चुप रही।

मैंने कहा "फिर ?"

वह बड़ी बेदिली से बोली "फिर हम सिंगापुर आगये। सिंगापुर से मलाया गये। वहां रबड़ के बाग़ों में काम करते रहे। वहां से बर्मा गये और फिर बम्बई आ गये। आगे तुम जानते हो।"

"और अब ?" मैंने पूछा।

"और अब मैं तुमसे यह कहती हूं कि तुम मेरे बाप को सवा रुपया देना बन्द कर दो। मैं तुम से क्या, किसी से भी शादी नहीं करूंगी।"

"क्यों ?"

"मैं वापस चीन चली जाऊंगी। जिस दिन मेरे पास रुपया हुआ, मैं चीन चली जाऊंगी।

"तो फिर तो मुझे हर रोज़ डेढ़ रुपया देना चाहिये।"

वह मेरी ओर आश्चर्य से देखने लगी—बोली :—

"मैं यह रुपया लेकर चीन चली जाऊंगी तो तुम्हें क्या मिलेगा ?"

मैंने कहा "मैं इन्तज़ार करूंगा।"

वह मेरी ओर देखकर मुस्कराई, बोली "मैं तो इतनी अच्छी नहीं हूं। नाक भी अच्छी नहीं है। तुम मेरा ख्याल न करो। देखो तुम्हारे

भारत में कितनी अच्छी लड़कियाँ हैं। इनकी नाक कितनी अच्छी होती हैं। आँखें कितनी बड़ी-बड़ी, नुकीली, जैसे अभी चेहरे से बाहिर निकल पड़ेंगी। हाय! ऐसी अच्छी आँखें तो मैंने कहीं नहीं देखीं। यह तुम को क्या हुआ है?"

मैंने कहा "तुम जाओ, मैं इन्तज़ार करूंगा।"

वह मेरे निकट आकर बोली "मुझे भूख लगी है।"

मैंने कहा "अब मेरे पास केवल मूंगफली के पैसे रह गये हैं" मैंने मूंग फली वाले से कहा "दो आने की मींग दो।"

वह बोली "मींग मूंगफली को कहते हैं? बिल्कुल चीनी नाम मालूम होता है, मींग!"

मूंगफली खाते खाते कई बार हाथों में हाथ उलझ गये लेकिन उलझ-उलझ कर फिर सुलझ गये। उसकी आँखें और गहरी हो चली थीं। वह काँप रही थी। मैं भी काँप रहा था और चारों ओर वर्षा हो रही थी। फिर थोड़े समय के बाद उसने कहा "चारों ओर लोग हैं फिर भी कैसा एकांत है।"

मैंने कहा "और कितना अच्छा एकांत है

वह हंसी, बोली "अब मैं जाती हूं।"

मैंने उससे तो कुछ नहीं कहा। अपने मन से केवल इतना कहा—अब यह कहीं भी चली जाये इससे कुछ न होगा। मैं इसका इन्तज़ार करूंगा।

और बहुत सा समय गुज़र गया। समय गुज़रने का पता केवल शाम के समाचार पत्र से मालूम होता था। जब यह पता चलता था कि पीपिंग समाप्त हो गया। पीकिंग विजय कर लिया गया। शंघाई समाप्त हो गया। माओ की सेनायें चीन के एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुँच गईं और हांग कांग के तट से टकराने लगीं। जिस दिन यह हुआ यानी चीन की सेनायें हांग कांग की सीमा पर पहुँच गईं उसी दिन हमारे प्रेम की सीमा भी आ पहुँची।

वह बोली "बस अब किराया हो गया है।"

मैंने कहा "लड़ाई तो यहाँ भी लड़ी जा सकती है।"

उसने कहा "वह तुम्हारा काम है। मैं वहाँ जाऊँगी।"

मैंने उसका हाथ पकड़ कर कहा "ज़ीई, संसार तो जगह-जगह से टूटा पड़ा है। इस काम को तो यहां से भी शुरू किया जा सकता है। आओ हाथ में हाथ दो।"

वह हिचकिचाई, कुछ सोचने लगी। थोड़ी देर तक उसका हाथ मेरे हाथ में रहा, फिर बड़ी नरमी से उसने अपना हाथ मेरे हाथ से मुक्त कर लिया और मेरा हाथ अकेला रह गया।"

उसने कहा: "मुझे जाने दो। मुझे अपने देश जाने दो। मैं यहाँ रही तो भी कभी प्रसन्न न रहूंगी। हां वहां जाकर सोचूंगी।

मैंने कहा: "मैं इन्तज़ार करूँगा।"

जाने से पूर्व बूढ़े हांग और ज़ीई में बड़े ज़ोर की लड़ाई हुई। बूढ़ा हांग वापस न जाना चाहता था और यह भी नहीं चाहता था कि उसकी बेटी वापस चीन चली जाये। इसलिये वह रोया-धोया। उसने ज़ीई को धमकाया, मारा-पीटा। मामला पहले पुलिस में और बाद में अदालत तक ले गया लेकिन ज़ीई अब बालिका न थी और अब वह अपने देश जा सकती थी और संसार की कोई शक्ति उसे रोक न सकती थी। प्रेम के मज़बूत हाथ भी उसे रोक न सके और वह बम्बई से कलकत्ते और कलकत्ते से हांगकांग चली गई। जाने से पूर्व कोई अधिक बात-चीत मुझ से नहीं हुई। अन्तिम नमस्कार के समय भी उसकी आंखों में आँसू नहीं थे। प्रसन्नता की चमक थी और एक विचित्र प्रकार की बेकरारी और बेताबी। हां बिल्कुल अन्तिम समय उसने एक बार दृढ़ता से मेरा हाथ पकड़ा और मेरे कान में कहा "मैं अवश्य आऊँगी, मेरा इन्तज़ार करना।" और वह चली गई।

और उसके जाने के बाद मुझे ऐसा लगा जैसे सारे संसार की सुगंधियां पंख लगाकर उसके साथ उड़ गई हैं और मेरे हाथ में केवल कागज़ के फूल रह गये हैं।

बूढ़ा हांग उसे विदा करने भी नहीं आया। उसके बाद मुझे भी नहीं मिला। शायद उसने फूल बेचने का धन्धा ही बन्द कर दिया था। बाद में मुझे एक चीनी फूल बेचने वाले से पता चला कि उसने एक दूसरी चीनी वेश्या से शादी कर ली है और हर समय अफ़्यून की पीनक में मस्त रहता है। बहुत समय के बाद मुझे ज़ीई का पत्र मिला:

प्यारे,

यह पत्र मैं तुम्हें अपने गांव से लिख रही हूं जो हान नदी के किनारे पर है। जहां नाशपातियों के झुण्ड हैं और उन पर फ़िरोज़ और पुखराज की सी सुन्दर पत्तियाँ निखर रही हैं। आड़ू के वृक्षों पर श्वेत-श्वेत फूल खिले हैं और वहाँ जहाँ सरदार वू का घर था वहां अब हमारे गांव का स्कूल है। ज़मीन हम सब किसानों को फिर से मिल गई है। अपनी मां का पता भी मैंने चला लिया है और उसे अपने साथ ले आई हूँ। जिस ज़मींदार ने उसे अकाल के दिनों में मेरे बाप से खरीदा था वह आजकल देश से विश्वासघात करने के अपराध में और ब्लैक मार्केट करने के अपराध में जेल में बन्द है। यहां मुझे स्कूल में उस्तानी का कार्य सौंपा गया है। जानते हो अब मैं बच्चों को अंग्रेज़ी पढ़ाती हूँ। क्या तुम सोच सकते हो कि तुम्हारी ज़ीई कभी बच्चों को स्कूल में अंग्रेज़ी पढ़ायेगी ? कभी-कभी मैं स्वयं ऐसा सोचती हूँ तो प्रसन्नतावश उछल पड़ती हूँ। ऐसी प्रसन्नता क्या कभी संभव थी ? किन मुसीबतों से हम ने आज़ादी प्राप्त की है, सोचती हूँ तो ख्याल आता है, मैंने इस आज़ादी के लिये कुछ भी नहीं किया। अब सारा जीवन भी इस कार्य में लगा दूं तो कम है।

तुम कभी यहाँ आ जाओ तो कैसा रहे। हैरान रह जाओगे यह देखकर कि क्या यह वही चीन है? यह वही गांव है? सारी धरती बदल गई है। मैं समझती हूं हमारे गाँव की चिड़ियों तक को इस बात का अनुभव है कि हम लोग स्वतंत्र हो चुके हैं। अपनी आत्मा के स्वयं मालिक हैं।

जब तुम याद आते हो तो तुम्हें यहां देखने की इच्छा होती है। यहां पर एक लड़का है जो अक्सर तुम्हें भुला देने की कोशिश किया करता है।

तुम्हारी
ज़ीई

मैंने ज़ीई के इस पत्र का कोई उत्तर न दिया, कई बार पत्र लिख कर फाड़ दिया। इधर कुछ और परेशानियां भी बढ़ गई थीं। रंगीन कागज़ के दाम बढ़ गये थे। बेलों और टहनियों में जो तार ख़र्च होता था उसके दाम व्यापारियों ने बढ़ा दिये थे। मंहगाई होने से लोग कागज़ के फूल कम खरीदने लगे। लोगों के पास अपने कपड़ों के लिए पैसे न रहे तो वे काग़ज़ के फूल खरीद कर क्या करते। मैं अक्सर भूखा और बेकार रहने लगा। चिड़चिड़ा और परेशान। दो तीन बार पुलिस वालों से तू-तू मैं-मैं हुई। मुझे स्वयं आमदनी की कोई सूरत नज़र न आती थी, भला उस संतरी को बारह आने रोज़ कहां से देता? संतरी ने मुझे दो तीन रोज़ बड़े प्रेमपूर्वक समझाया। बताया कि वह रिश्वतखोर नहीं है। रिश्वत से उसे सख्त घृणा है लेकिन उसके घर में बीवी बीमार है। दवा के लिए वेतन में से पैसे नहीं बचते। महंगाई इतनी बढ गई है कि खाली-खूली ईमानदारी से पेट नहीं भरता। और पेट बुरी बला है। लेकिन मेरे पास पैसे कहां से आते जो मैं उसे देता? आखिर क्रोध में आ उसने मुझे हवालात में बन्द कर दिया। आवारागर्दी के दोष में मुझे पन्द्रह दिन की क़ैद हो गई।

जब मैं क़ैद से छूट कर आया तो मुझे ज़ीई का एक और पत्र मिला।

प्यारे,

तुम ने मेरे पहले पत्र का उत्तर नहीं दिया है। शीघ्र लिखो क्या बात है। यहां पर अबके हमारे गांव में फ़सल पहले से ड्योढ़ी है और किसी ज़मींदार को भी फ़सल का भाग नहीं देना पड़ा। सारी की सारी फ़सल अपनी है। चीज़ों की कीमतें घट गई हैं, घटती जा रही हैं और आर्थिक हालात जो बिगड़ चुके थे अपने आप ठिकाने पर आ रहे हैं।

कल हमारा राष्ट्रीय त्यौहार था। सारे गांव में हंडोले लगाये गये। दीप जले। नृत्य और संगीत। स्कूल के बाहर गांव वालों ने मिल कर एक बहुत बड़ा जलसा किया। उस अवसर पर मैंने एक बड़ा हंडोला तैयार किया जो चक्कर खा कर घूमता था। जैसे सरकस या नुमायश के हंडोले घूमते हैं। गांव वाले मेरी कारीगरी देखकर बहुत प्रसन्न हुए और मुझे चांदी का एक तमग़ा इनाम में दिया। स्कूल में भी मेरे काम को बहुत पसन्द किया जा रहा है।

क्या तुम मेरी किसी बात से रुष्ट हो ?

तुम्हारी
ज़ीई

उस पत्र का मैंने यह उत्तर दिया :

प्यारी ज़ीई,

प्रसन्न रहो। मैं अभी अभी पन्द्रह दिन की जेल काट कर आया हूँ और तुम्हें पत्र लिख रहा हूँ। मेरा दोष यह था कि मैं बेकार था। मुझे मेरी बेकारी की सज़ा मिली हालांकि सज़ा उस मंत्री को मिलनी चाहिये थी जिसके राज्य में मैं बेकार हुआ। यहां काम का बहुत मन्दा है आजकल। फूल नहीं बिकते। अनाज महंगा हो गया है। कपड़ा भी महंगा हो गया है। हर चीज़ के दाम बढ़ते जा रहे हैं। सोचता हूँ कि ऐसा क्यों हो रहा है कि यहां कीमतें बढ़ रही हैं और तुम्हारे हां घट

रही हैं। ऐसा मैं तुम्हारे प्रेम के कारण नहीं सोचता बल्कि आस-पास के हालात के कारण सोचता हूं। और न भी सोचूं तो क्या करूं?

यह जान कर बहुत प्रसन्न हूं कि तुम प्रसन्न हो। मेरी प्रसन्नता की कोई सूरत नज़र नहीं आती। बाकी रहा उस लड़के का मामला जो मुझे तुम्हारे दिल से भुला देने की चिंता में है, उसकी मुझे अधिक चिंता नहीं है। मैं तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा हूं। तुम क्या करती हो, इसकी मुझे चिंता क्यों? तुम्हारा अपना

× × ×

उसके बाद जब कोरिया का युद्ध आरम्भ हुआ तो उसका पत्र आया जिसमें उसने लिखा था : "इस युद्ध ने मेरे जीवन के सारे इरादे बदल दिये हैं। अब मैं वह कभी नहीं हो सकती जो मैं पहले सोचती थी। अब मैं कोरिया के युद्ध में चीनी वालंटियर बन कर जा रही हूं। वहां नर्स का काम करूंगी और यदि जीवित रही तो शायद तुम से मिलने की कोई शकल निकल सके। नहीं तो यही अंतिम नमस्कार समझो" अंतिम वाक्य था "अच्छा तो यही है कि मुझे दिल से भुला दो। हम वहां मिले जहां हालात एक दूसरे से टकरा रहे थे। एक बहाव पर नहीं मिले। उल्टे बहाव पर मिले। इसलिए एक क्षण के लिए रुक कर एक दूसरे से बिछुड़ गये। अब मैं तो खंदकों, गोलियों और लोहे की बाढ़ों के रास्ते पर जा रही हूं। अपने काग़ज़ी फूलों को मेरे रास्ते से हटादो प्यारे! मेरे देश का जीवन, सारे एशिया का जीवन ख़तरे में है।"

इसके बाद मुझे उसका कोई पत्र नहीं मिला। मैं उसके बाप से मिलने गया लेकिन वह तो सदैव के लिए अपनी बेटी को दिल से भुला चुका था और ज़ीई भी उससे नाता तोड़ चुकी थी। किसी एक पत्र में भी उसने मुझ से कभी अपने बाप के सम्बन्ध में नहीं पूछा। एक अंतिम मजबूरी थी, वह भी सदैव के लिए समाप्त हो गई। अब ज़ीई स्वतन्त्र थी और कोरिया चली गई थी।

कोरिया के युद्ध ने कई पासे बदले। कई रुख पलटे लेकिन ज़ीई की कोई सूचना न मिली। स्वतन्त्र चीन की पहली वर्षगांठ आई और चली गई। मैंने उसके गांव के स्कूल में कई पत्र डाले लेकिन कुछ पता न चला। प्रतिदिन समाचार-पत्र देखता था क्योंकि कोरिया का युद्ध अब ज़ीई का ही युद्ध न था। वह अब मेरा भी युद्ध था।

कल 'ब्लिट्ज़' अख़बार देखने से ज़ीई का पता चल गया। कोरिया के युद्ध के सम्बन्ध में उस में एक फ़ोटो छपा था, जिसमें कुछ अमरीकी बहादुर सिपाही पीछे खड़े थे और अपने सामने उन्होंने कोरियाई और चीनी सैनिकों के बारह सिर काट कर ईंटों पर रख दिये थे। इन बारह सिरों में एक सिर ज़ीई का भी था। बारह क्या यदि एक लाख सिर भी होते तो मैं अपनी ज़ीई का सिर पहचान लेता। उसके होंट बन्द थे। उसकी आंखें खुली थीं। उसके बाल खुले हुए थे। ज़ीई जो ज़ीई की तरह अपने देश की ख़ातिर और शायद बहुत से देशों की ख़ातिर, जिन से उसका दूर का भी सम्बन्ध न था, शहीद हो गई।

फिर मेरे सीने में वही धड़कती उबलती संध्या उभर आई जब चारों ओर वर्षा हो रही थी और हम दोनों एक क्षण के टापू में एक दूसरे का हाथ हाथ में लिए अकेले खड़े थे। ज़ीई जो एक स्थायी प्रेम की स्थायी जवानी के लिए मर मिटी। आज मेरे हाथ में उसका कटा हुआ सिर था। जीवन की बन्द कली की तरह जिसमें चारों ओर सुगन्धि ही सुगन्धि थी। मैं तुझ से क्या कहूं? मेरे प्रेम की अन्तिम संध्या! किस प्रकार तेरे बालों को चूम कर कहूं—ले मेरे प्यार का

अंतिम नमस्कार, और सो जा ! अपनी गहरी नज़रें मेरे देश के युवक-युवतियों को भी सौंप दे और फिर अपनी आंखें बन्द करले और सो जा। सो जा चीन देश की प्रेमिका, मेरे गुलाब ! मेरे क्राइसंथम ! मेरे यासमन ! मेरे मोतिया के फूलों की रानी। आज की रात हम सब पर भारी है। हम पर इसलिए कि हम तुझे मृत्यु के मुंह से न बचा सके, उन पर इसलिए कि वह तेरा सिर काट सके। तेरा दिल, तेरी बुद्धि, तेरा अनुभव न काट सके। ऐसी काट किसी तलवार में नहीं है जो एशिया के प्रेम को काट सके। डाइक आदमखोर और अमरीकी आदम खोर और उनके अंग्रेज़ी फ्रांसीसी और तुर्की गुलाम मिलकर एशिया के प्रेम को समाप्त नहीं कर सकते।

आज मैं इस चीज़ को समझ गया हूं कि तू मेरे पास फिर आयेगी। जिस प्रकार दो हज़ार वर्ष पूर्व मैं चलकर तेरे पास गया था, उसी प्रकार आज दो हज़ार वर्ष के बाद तू चल कर मेरे पास आयेगी। और फिर तुझे और मुझे और संसार भर की जनता को हम से कोई अलग न कर सकेगा।

इस चीज़ को आज मैं समझ गया हूँ इसलिए ज़ीई ! आज मैं तुम्हारा इन्तज़ार करता हूँ क्योंकि जब मैं ज़ीई का इन्तज़ार करता हूँ तो मैं प्रकाश के हिंडोले का इन्तज़ार करता हूँ, तो मैं बहार का इन्तज़ार करता हूँ।

: ६ :

जूते पहनूँगा

फ़ज़ल ने कभी जूते नहीं पहने थे। इन अट्ठारह वर्षों तक उसका मन जूते पहनने को तरसता रहा। परन्तु जूते पहनने का सौभाग्य उसे प्राप्त नहीं हुआ। उसके जीवन के प्रारम्भिक वर्ष एक मुस्लिम अनाथालय में व्यतीत हुए थे जहां के अध्यक्ष मुल्लाजी डंडे मार-मारकर उसको अधमरा कर दिया करते थे। वहां एक मैनेजर था जिसकी आंखें सदा लाल रहती थीं। उसकी कृपा से अनाथालय के बच्चे मरते तो न थे परन्तु उनकी भूख कभी शान्त नहीं होती थी। खाना उन्हें इतना कम मिलता था कि उनका मन हर समय खाने की वस्तुओं में ही पड़ा रहता था। किसी जगह बढ़िया भोजन को देखते ही उनपर मानो एक प्रकार का पागलपन सा सवार हो जाता था। भूख से तंग आकर अनाथालय के लड़के कूड़े-करकट के ढेरों में से खाने की वस्तुएं ढूंढा करते थे और सड़क पर पड़ी हुई गली-सड़ी वस्तुएं बड़े आनन्द के साथ खाया करते थे। रात के समय फ़ज़ल स्वप्न में बढ़िया २ खाद्य-पदार्थों के ढेर के ढेर देखता और वह शोर मचाता हुआ उठ बैठता। उस समय मुल्लाजी या मैनेजर साहब उसकी बुरी तरह खबर लेते। फ़ज़ल के जीवन का एक-एक क्षण खाने के सम्बन्ध में सोचने में व्यतीत होता था। वह हर समय खाने के सम्बन्ध में ही सोचता, खाने ही देखता

और खाने ही सूँघता। मुल्लाजी ने बहुत प्रयत्न किये कि वह किसी प्रकार नमाज़ के दो वाक्य ठीक ढंग से याद करके बोल सके, परन्तु उस बेचारे के मस्तिष्क के तो छोटे से छोटे कोने में बस खाद्य-पदार्थ ही भरे हुए थे—वहां नमाज़ के वाक्यों के लिए कहां जगह थी?

इस भूख के देव ने उसे अनाथालय से भी निकलवाकर छोड़ा। उसने अपनी भूख मिटाने के लिये चोरी भी शुरू कर दी थी। चोरी रुपये-पैसे की नहीं, अपितु, खाने की चोरी। दोचार बार वह मुल्लाजी और मैनेजर साहब के बढ़िया-बढ़िया भोजनों पर हाथ साफ़ करता हुआ पकड़ा गया। उस समय उसकी वह ठुकाई हुई कि पांच-सात दिन तक तो वह अपनी चटाई पर से उठ भी न सका। परन्तु वह भोजन! आह! उस भोजन में भी कैसा आनन्द था! उसे खाकर उसकी आत्मा के कण-कण में मानो तृप्ति रच गई थी—मानो वर्षों की तपती हुई रेत पर मूसलाधार वर्षा हो गई हो। फ़ज़ल के शरीर का जोड़-जोड़ पिटाई के कारण चस-चस कर रहा था, परन्तु वह उन भोजनों के स्वाद को याद करके अपने कष्ट को भूल सा जाता था। वह स्वाद मानो उसकी चोटों पर मरहम का काम कर रहा था।

कुछ दिनों के पश्चात् फ़ज़ल और भी गड़बड़ करने लगा। वह भीख के पैसों में से दो-चार पैसे रखकर उनकी भुनी हुई मूंगफली और गरम-गरम चबैना लेकर खाने लगा। उसकी देखा-देखी दो तीन और अनाथ लड़के भी यह गड़बड़ करने लगे। थोड़े ही दिनों में मैनेजर को इस बात का पता चल गया। अब आप ही सोचिए कि कोई भी मैनेजर इस बात को कैसे सहन कर सकता है कि अनाथालय का धन इस प्रकार निकम्मे और व्यर्थ लड़कों के पेट में चला जाय। ऐसी दुष्टता को कभी भी क्षमा नहीं किया जा सकता था अतः पहले तो मैनेजर ने फ़ज़ल और दूसरे बेईमान लड़कों को खूब पीटा और फिर उन्हें अनाथालय से बाहर निकाल दिया। इस पिटाई में फ़ज़ल की एक आंख जाती रही।

फ़ज़ल के साथी लड़के उसे उठाकर रेलवे पुल के नीचे ले गए और दो चार दिन तक उन्होंने उसकी बहुत सेवा की। अपनी समझ और ज्ञान के अनुसार उन्होंने उसकी चिकित्सा भी की। फ़ज़ल की आँख से खून बह रहा था। उसके साथियों ने कोयला पीसकर उसकी आँख में डाला। जब रुधिर का प्रवाह बन्द हुआ तो गोबर थोप दिया गया। गारा, मट्टी, चूना—अर्थात् जिस किसी ने जो कुछ बता दिया वही दवा-दारू फ़ज़ल की हुई। कुछ दिनों में रुधिर का बहना तो बन्द हो गया, परन्तु पीप का बहना प्रारम्भ हो गया। तब फ़ज़ल को इतना तीव्र ज्वर चढ़ा कि उसे होश ही न रहा। उसने आँय-बाँय बकना प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर उसके साथी घबरा गए और अन्त में उसे उसी अवस्था में छोड़कर भाग गए। फ़ज़ल दो तीन दिन तक उसी अवस्था में वहाँ पड़ा रहा।

उसकी आयु उस समय सात वर्ष की थी!

रहमान ने उसे इसी चिन्ता-जनक अवस्था में पुल के नीचे पड़े पाया। उस समय दया उसके हृदय में समा गई और वह उसे उठा कर घर ले गया। यद्यपि उसे अपनी घरवाली की गालियाँ सुननी पड़ीं, परंतु उसने उस समय उन गालियों की लेशमात्र भी परवाह न की और फ़ज़ल को उसने बिस्तर पर लिटा दिया।

रहमान कोई धनवान व्यक्ति न था। वह आसफ़िया प्रेस में ४०) रुपये मासिक पर नौकर था। इन ४०) रुपयों से उसे अपने घर का सारा ख़र्च चलाना पड़ता था। फिर कभी २ वह ताड़ी भी चख लिया करता था। ताड़ी पीकर वह बंकारने लगता और किसी न किसी से लड़ पड़ता था। ऐसी अवस्था में वह दो-चार बार हवालात में भी रह आया था। और दो चार बार वह प्रेस के मैनेजर से भी बुरी तरह पिटा।

रहमान ने अगले तीन महीनों में पूरे पौने बाईस रुपये फ़ज़ल की चिकित्सा पर ख़र्च किये। इसका महत्त्व वे लोग नहीं समझ सकते जो

एक पूरे हस्पताल को अपने दान से खड़ा कर सकते हैं। इस महा-त्याग के कारण जो कष्ट रहमान को उठाने पड़े इसका अनुमान बस रहमान को ही हो सकता था। पहले महीने उसने ताड़ी नहीं पी, दूसरे महीने उसने घर के आवश्यक ख़र्च में कतर-ब्योंत की, तीसरे महीने उस के पास कुछ रुपया बचा था; उन रुपयों से उसकी बीवी कानों की चांदी की बालियाँ बनवाने के लिये हठ करती रही, परंतु रहमान ने वे रुपये फ़ज़ल की नक़ली आंख बनवाने पर खर्च कर दिये। इन तीन महीनों में रहमान के जी में कई बार आया कि वह फ़ज़ल को घर से बाहर निकाल दे, परंतु वह फिर यह सोच कर रुक जाता कि अब यह अच्छा हो रहा है, इसे ले आया हूं तो अब रख ही लूं। फिर मन में कहता कि जब यह बिलकुल ही ठीक हो जायगा तब इस सूअर को बाहर छोड़ आऊंगा।

परंतु जब फ़ज़ल बिल्कुल ठीक हो गया तो रहमान ने देखा कि इसकी नस-नस में भूख समाई हुई है। फ़ज़ल बेबस होकर किन भूखी आंखों से खाने की ओर देखता था! यह देखकर रहमान का दिल भर आया और उसने सहसा दृढ़ निश्चय कर लिया कि वह उसे अपने घर में ही रखेगा, और अपना बेटा बनाकर रखेगा। परमात्मा की कृपा से उसके घर में संतान की कमी न थी, सात बच्चे मौजूद थे और आठवाँ आने वाला था, परंतु फिर भी उसने फ़ज़ल को बेटा बना कर घर में रखने का पक्का निश्चय कर लिया।

उसने अपनी बीवी से कहा, "देख, जितना खाना तू बनाए, सारे का सारा पहले फ़ज़ल के सामने रख दिया कर।

बीवी ने कहा, "पागल हो गए हो क्या?"

रहमान ने अनुनय से कहा, "तू कुछ दिन जिस तरह मैं कहता हूं उस तरह करके तो देख।"

बीवी मान गई। फ़ज़लू ने कुछ दिनों तक इतना खाया, इतना खाया कि उसकी आंखें बाहर निकलने को हो गईं। परन्तु प्रति दिन वह

पिछले दिन की अपेक्षा कम खाता। धीरे २ उसकी वह असीम भूख शान्त होने लगी। कुछ दिनों के बाद वह स्वयं नियमित मात्रा में भोजन करने लगा। यह देखकर रहमान बहुत प्रसन्न हुवा। फिर रहमान ने उसे एक स्कूल में भर्ती करा दिया। परन्तु एक तो मुल्ला जी का भय उसके मन पर भूत की भांति छाया हुवा था और दूसरे कई वर्ष की लगातार भूख ने उसके मस्तिष्क को इतना निकम्मा कर दिया था कि आठ वर्ष के कड़े परिश्रम के बाद भी वह चौथी कक्षा से आगे नहीं निकल सका। आख़िर निराश होकर रहमान ने उसे स्कूल से उठा लिया। स्कूल से छुटकारा पाकर फ़ज़ल बहुत प्रसन्न हुवा। दो चार दिन के बाद वह घर के काम-काज में जुट गया। अब वह घर के बरतन मांझता, बाज़ार से छोटा-मोटा सौदा लाता और गली-मुहल्ले के लड़कों से लड़ाई-झगड़ा करता, कंचे-गोली खेलता और रहमान के डांटने पर भी भुनी हुई मूंगफली और सिंघाड़े बेचने के लिये शहर में निकल जाता। परन्तु वह हिसाब में बहुत कच्चा था और वैसे भी मूढ़ था। सिंघाड़े एक आने छटांक बिकते थे, परन्तु वह कभी दो पैसे के छटांक तोल देता और कभी छः पैसे छटांक। कभी दो आने की मूंगफली देकर और ग्राहक से चवन्नी लेकर उसे तीन आने वापिस कर देता। कभी ग्राहक से पैसे लेकर भूल जाता और जब पैसों के लिये ग्राहक को तंग करता तो झिड़कियां खाता और कभी २ चपत भी खाने पड़ते। पुलिस वाले फेरी वालों को तंग करते ही रहते हैं। उन्हें दूर से आता देखकर और फेरी वाले इधर-उधर दुबक जाते परन्तु फ़ज़ल उनके हत्थे चढ़ जाता। वह कई बार हवालात में गया और उसकी टोकरी फैंकी गई। एक बार फ़ज़लू को पड़ौस के आदमी ने उसकी "दुकानदारी" की किसी साधारण सी गड़बड़ पर कुछ अधिक पीट दिया। जब शाम को रहमान घर आया और उसे उस घटना का ज्ञान हुवा तो उससे न रहा गया और उसने जाकर उस पड़ौसी की खूब ठुकाई की। मुहल्ले वाले इकट्ठे हो गए, हुल्लड़बाज़ी देखकर पुलिस

भी आ गई, रहमान को गिरफ्तार कर लिया गया और अदालत ने अगले दिन उस पर १५ रुपये जुर्माना या एक सप्ताह की क़ैद की सज़ा का हुक्म सुना दिया। बीवी ने अपने कानों की बालियां और हाथों के छल्ले बेचे, तब जुर्माने के १५ रुपये देकर रहमान की रिहाई हुई।

फ़ज़ल दो वर्ष और इसी प्रकार आवारा घूमता रहा। फिर रहमान के अनुनय-विनय पर आसफ़िया प्रेस के मैनेजर ने फ़ज़ल को प्रेस में नौकर रख लिया। फ़ज़ल की आयु इस समय १८ वर्ष की होगई थी। बल और शक्ति उसकी रगों और पट्ठों में मानो किसी ने कूट २ कर भर दिये थे। उसके बेडौल से, परन्तु गठे हुए, बलिष्ट हाथ-पांव कोई कठिन काम करने के लिये, किसी भारी वस्तु को उठाकर फैंकने के लिये बेचैन से रहते थे। यह शक्ति यह बल और काम करने के लिये यह बेचैनी अब १२ रुपये मासिक पर आसफ़िया प्रेस की भेंट हो गए थे। फ़ज़ल के लिये १२ रुपये एक अनहोनी सी बा। थी। जब वह नौकर हुवा तो बारह रुपयों के विचार ने उस पर नशे की सी हालत पैदा कर दी। काम करते २ भी जब उसे बारह रुपयों का ख़्याल आ जाता तो उसके मन में फुरैरी से आ जातीं। सारे शरीर में सनसनी सी दौड़ जाती। बारह रुपये! पूरे बारह!! जब वह छुट्टी होने पर बाहर निकलता तो उसे वे बारह रुपये वातावरण में चारों ओर फैले हुए दिखाई देते। अब वह एक क़मीज़ खरीद सकता था, एक पाजामा, एक नैकर। वह अंग्रेज़ी फैशन के बाल कटवाएगा। और...और, हां, अब वह बाज़ार से मिठाई भी ख़रीद सकता है। जब उसे वेतन मिलेगा तो वह ढेर-सारे संतरे ख़रीदेगा और किसी रैस्टोरैंट में जाकर कम से कम पाँच प्लेट बिरयानी की खाएगा। यह सोचते-सोचते वह अपने काम को बड़े उत्साह के साथ करने लगता और काम करते २ गुनगुनाने लगता।

एक दिन फ़ज़ल की दृष्टि सहसा मैनेजर के जूते पर पड़ी। बड़ा

सुन्दर जूता था वह—ब्राउन रंग का विलायती जूता और रबड़ का बहुत मोटा तला लगा हुवा। जूता इतना चमकदार था कि आदमी उसमें अपना मुंह भी देख सकता था। फ़ज़ल इस जूते को देखकर स्तम्भित रह गया। न जाने वह कितनी देर तक जूते को देखता रहा। उसका मन अपने काम से हट कर उस जूते में केन्द्रित हो गया। जब मैनेजर ने उसे डाँटा तब उसे होश आया। उसने अपना मन अपने काम में फिर लगाना चाहा, परन्तु उसकी आंखें बरबस उन जूतों की ओर बार २ खिंच जातीं और वह एकटक उन्हें घूरता रह जाता। अब प्रतिक्षण उसके मानसिक नेत्रों के सामने वह जूता रहने लगा। वह सोचने लगा, इन्हें पहन कर आदमी बहिश्त में पहुँच जाता होगा! उसका मन करने लगा कि वह उन जूतों को उठाकर अपने गालों से लगा ले। फिर उसने अपने मोटे २, भद्दे, बेडौल पांवों की ओर देखा, जो नंगे चलने से चपटे हो गए थे। उसके मन में यह विचार सहसा अत्यन्त बलपूर्वक उठा कि उसने आज तक जूता नहीं पहना था। उसे आज तक जूता पहनने को क्यों नहीं मिला? अब वह जूता पहनेगा, अवश्य पहनेगा। ब्राउन रंग का विलायती जूता। मोटे रबड़ के तले वाला। शीशे जैसा चमकदार...।

मन में यह दृढ़ निश्चय करके उसने रहमान से कहा, "चाचा, मुझे वेतन दिलवा दे।"

रहमान ने चकित होकर कहा, "अरे, अभी तुझे काम करते हुए दस दिन तो हुए भी नहीं, और वेतन मांगने लगा! कैसा वेतन, पागल?"

"चाचा, मेरा दस दिन का वेतन कितना बनता है?"

"चार रुपये।"

"तो चार रुपये ही दिला दे मुझे, आज ही दिला दे।"

"क्या करेगा तू चार रुपयों का?"

यह प्रश्न सुनकर फ़ज़ल चुप हो गया, और किसी अज्ञात भाव के कारण उसका चेहरा लाल होता चला गया। फिर उसने साहस बटोर कर, परन्तु रुकते २ कहा, "चाचा...मैं...जूता...पहनूँगा।"

रहमान फ़ज़ल की बात सुनकर हँसने लगा। वह इतना हँसा कि उसकी आंखों में आंसू आ गए। फिर वह फ़ज़ल को मैनेजर के पास ले गया और उसे सारी कहानी सुनाई। मैनेजर भी बात सुनकर इतना हँसा कि उसकी पसलियां दुखने लगीं। परन्तु अन्त में फ़ज़ल वहां से चार रुपये लेकर ही टला।

फ़ज़ल चार रुपयों को हाथ में दबाए बाज़ार में चला जा रहा था। वह जूतों की दुकानों पर बार-बार रुकता और शो-केसों में अपना वही चहेता जूता देखकर आश्चर्य से उसे तकने लगता। फिर जब दाम पूछता तो उत्तर मिलता, चालीस रुपये। वैसा जूता उसे कहीं भी चालीस रुपयों से कम में नहीं मिला और उसके पास केवल चार रुपये थे। अब कैसे होगा ? उसने सोचा था कि इस महीने वह एक जूता ख़रीदेगा, अगले महीने एक क़मीज़ और नेकर और तीसरे महीने एक टोपी, चौथे महीने......परन्तु अभी तो वह जूता भी नहीं ख़रीद सकता। वह क्या करे, क्या न करे !

कई दुकानों के चक्कर काटकर उसने दुखी होकर अन्त में सोचा, चलो कोई और जूता ही ख़रीद लूँ, कोई सस्ता जूता।

उसने अन्य जूतों के दाम पूछने आरम्भ किये। कोई जूता पच्चीस रुपये का था तो कोई बीस का। फिर अट्ठारह रुपयों के, पन्द्रह रुपयों के, ग्यारह रुपयों के, नौ रुपये आठ आने के......परन्तु चार रुपयों का जूता कहीं न मिला।

दुखी और निराश होकर फ़ज़ल घर की ओर लौटा। रास्ते में, चोर-बाज़ार के नुक्कड़ पर, फुट-पाथ से ज़रा हटकर उसने बहुत से जूते रखे हुए देखे। ज़रा ध्यान से देखने पर उसने उन जूतों के बीच में अपने उसी प्रिय डिज़ाइन के जूते को रखे देखा। वैसा ही ब्राउन जूता,

मोटे रबड़ का तला..... बस यह कुछ पुराना था, रबड़ के तले कुछ घिसे हुए थे और उनमें मेख़ें ठुकी हुई थीं। तस्मे भी नहीं थे। फिर भी जूता वैसा ही था जैसा मैनेजर का।

फ़ज़ल ने कांपते हुए स्वर में जूते के दाम पूछे।

दुकानदार ने कहा, "दस रुपये।"

"मेरे पास तो केवल चार रुपये हैं," फ़ज़ल ने इस बार और भी अधिक कांपती हुई आवाज़ में कहा।

दुकानदार ने कहा, "लाओ, चार ही सही। तुम भी क्या याद करोगे कि क़िसी सेठ का जूता पहना था। उठालो इसे।"

फ़ज़ल को पहले तो विश्वास न हुआ कि दुकानदार सचमुच उसे चार रुपयों में वह जूता दे रहा है, परंतु जब वास्तव में दुकानदार ने जूता उठाकर उसके हवाले कर दिया तो फ़ज़ल के आश्चर्य और आनंद की सीमा न रही। वह जूता पांव में फंसाकर वहां से घर की ओर भागा। उसे डर था कि कहीं कोई उससे वह जूता छीन न ले। फ़ज़ल को ऐसा लगा मानो वह किसी मख़मल के फ़र्श पर घूम रहा है। आज उसने जूता लिया है फिर वह कमीज़ लेगा, फिर टोपी और इसी प्रकार, एक एक क़दम बढ़ाता हुआ वह आगे बढ़ता जाएगा। अब वह प्रेस में जी लगाकर काम करेगा। मैनेजर साहब की आज्ञाओं का हृदय से पालन करेगा। आज जीवन में पहली बार उसके मन में परमात्मा का सच्चे हृदय से धन्यवाद करने का विचार उत्पन्न हुआ। यह सोच कर, डरते-डरते, उसने एक निकटवर्ती मस्जिद में प्रवेश किया।

जब वह थोड़ी देर के पश्चात् मस्जिद से बाहर निकला तो देखा कि जूते ग़ायब थे। कलेजा सन्न हो गया। गिरता-पड़ता, जैसे-तैसे, रोता हुवा घर पहुँचा। रात भर वह जूते के लिये रोता रहा। मानो उसकी प्रिया उससे वियुक्त हो गई हो। मानो उसकी मां मर गई हो। वह बहुत रोया, उस पुराने जूते के लिये, मानो वह जूता उसकी सारी

आकांक्षाओं का केन्द्र था और उसके चले जाने से उसकी सारी आशाएं और अभिलाषाएं मिट्टी में मिल गई हों।

रहमान ने उस दिन फिर ताड़ी पी रखी थी। उसने फ़ज़ल को बहुत पीटा। "सूअर, तू विलायती जूता पहनना चाहता है! तुझ पर खुदा की मार! मालिक तो मालिक रहेगा और मजूर मजूर ही रहेगा। वह मालिक नहीं बन सकता, वह नए कपड़े नहीं सिला सकता, वह टोपी नहीं पहन सकता······समझता है कि नहीं, हराम······।" यह कह कर उसने फ़ज़ल को दो चार चांटे और रसीद किये और फिर बकने लगा, "सुन बे, कभी मैं भी तेरी तरह सोचता था कि एक के बाद दूसरा क़दम, और फिर तीसरा और फिर चौथा। मैं भी सोचता था कि आज क़मीज़ लेंगे, और कल नेकर और परसों टोपी। परंतु यह सब बकवास है। एक क़दम के बाद दूसरा और फिर पहला। सुन रहा है तू? मालिक एक क्षण में उत्साहित करता है और दूसरे क्षण में सब कुछ छीन लेता है। सब कुछ......सब कुछ...।" यह कह कर रहमान ने दो चांटे और रसीद किये। और फिर कहने लगा, "एक-एक क़दम बढ़ने से कुछ नहीं होगा। विलायती जूते का विचार मन से दूर कर दे। नंगा, भूखा, प्यासा रह, परन्तु एक ही छलांग में मंज़िल को पाले। ...साले... ।"

रहमान बोलता जा रहा था और लगातार फ़ज़ल को पीटता जा रहा था। परंतु अब फ़ज़ल पर इस पिटाई का कोई प्रभाव ही न पड़ रहा था। उसके मस्तिष्क पर से मानो कोई पर्दा-सा उठ गया था, जैसे सहसा कुहरा साफ़ हो गया हो। अब हर बात उसकी समझ में आ रही थी— स्पष्ट, संदेह-रहित, जंची-तुली...... ।